

UNIVERSAL  
LIBRARY

**OU\_180314**

UNIVERSAL  
LIBRARY



# Osmania University

482

Accession No. H-3082

P18J

Book should be returned on or before the date  
marked below.



ਜਬ ਪਦਾਂ ਉਠਾ



# जब पर्दा उठा

(व्यंग्यात्मक हास्य-एकांकी)

सम्पादक

प्रकाश पण्डित

नारायण दत्त सहगल एण्ड सन्स  
दिल्ली

प्रकाशक :—

नारायण वत्त सहगल एण्ड सन्ज,  
दरीबा कलाँ, दिल्ली ।

प्रथम संस्करण

सन् १९५७

मूल्य ४ रुपये २५ नये पैसे

मुद्रक :—

नूतन प्रेस,  
चाँदनी चौक, दिल्ली ।

## दो शब्द

हिन्दी में एकांकी रूपकों और नाटकों की कमी नहीं। इस मैदान के बड़े-बड़े खिलाड़ियों से लेकर बड़े-बड़े अनाड़ियों तक के अनेक संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। पढ़े जा चुके हैं, आवाज़ की लहरों पर सुने जा चुके हैं, रंग-मंच पर देखे जा चुके हैं और जैसा कि होना चाहिये 'पसंद और नापसंद भी किये जा चुके हैं। 'जब पर्दा उठा' उसी सिलसिले की एक कड़ी है जिसके सम्बन्ध में किसी विशेष घोषणा या याचना की आवश्यकता नहीं।

आवश्यकता केवल इस संकलन के काराज, छपाई, गेट-अप आदि के सम्बन्ध में ही कुछ कहने की नहीं, मैं संकलित एकांकियों और एकांकीकारों के सम्बन्ध में भी कुछ कहने की आवश्यकता अनुभव नहीं करता। एकांकी स्वयं अपने मुँह से बोलेंगे और एकांकी-कार तो आप के जाने पहचाने हैं ही।

इसे केवल भूमिका लिखने की परम्परा का अनुकरण कहिये या आलोचकों के लिये थोड़ी बहुत समालोचना की सामग्री जुटाना, जो पुस्तक की भरपूर समालोचना के लिये पुस्तक की केवल भूमिका पढ़ने के आदी हैं, यदि मैं कहूँ कि एकांकियों के विभिन्न संग्रहों और संकलनों का समकक्ष होने पर भी यह उनसे सर्वथा भिन्न है। क्योंकि इसमें हर प्रकार के एकांकियों की खिचड़ी पकाने की बजाय केवल वही एकांकी शामिल किये गये हैं जो व्यंग्यात्मक-हास्य की कसौटी पर पूरे उतरते हों।

सामाजिक विषमताओं के इस युग में हास्य-व्यंग्य की असाधारण आवश्यकता के बारे में दो मत नहीं लेकिन इस कला के बारे में दो ही नहीं दसों मत हैं। समस्त मतों को एक ओर रखते हुए मैं इतना भर कहूँगा कि यह कला तेज धार तलवार पर से गुज़रने से कम खतरनाक नहीं। एक ज़रा-सी चूक से जो हथ्र कलाकार का हो सकता है उससे कहीं बुरा हथ्र पाठकों या दर्शकों का होता है जब तलवार उछल कर सीधी उनके सिर पर आ रहती है। और इसीलिये जब मेरे सम्मुख हास्य-व्यंग्य सम्बन्धी स्वस्थ एकांकियों के चयन का प्रश्न आया तो मुझे बड़ी कठिनाई और दुविधा का सामना करना पड़ा। इस उद्देश्य से मैंने कितने एकांकी खंगाले और हास्य तथा व्यंग्य के नाम पर मेरे हाथ में कितने रोते-बिलकते एकांकी थमाये गये, उन की सही संख्या मुझे स्मरण नहीं। और अब भी जब अपनी ओर से मैं अपना उद्देश्य पूरा कर चुका हूँ, मेरा दिल बराबर धड़क रहा है।

काश ! इन एकांकियों को पढ़ते, सुनते या देखते समय आप के दिल की धड़कन तेज होने की बजाय ऐसा लगे, कोई आप के दिल में चुटकियां ले रहा है। तथास्तु !

१-७-१९५७

६३०, चांदनी चौक,  
दिल्ली।

प्रकाश पण्डित

## अनुक्रम

|                          |                    |     |
|--------------------------|--------------------|-----|
| १—भाषण                   | जगदीश चन्द्र माथुर | ६   |
| २—पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ | उपेन्द्रनाथ 'अशक'  | ४५  |
| ३—लिपस्टिक की मुस्कान    | विष्णु प्रभाकर     | ६६  |
| ४—मेहमान                 | चिरंजीत            | ६३  |
| ५—समर्पण                 | देवराज 'दिनेश'     | ११७ |
| ६—रिहसल                  | स्तेन्द्र शरत      | १४१ |
| ७—भाड़ू                  | कृष्ण चन्द्र       | १६६ |
| ८—ग्रखबार का दफ़्तर      | प्रकाश पण्डित      | १८६ |



भाषण

जगदीशचन्द्र माथुर

## पात्र

मोहिनी

बेरा

रहीम

भोलासिंह

हरीशचन्द्रन

हेडमिस्ट्रेस

लेडी साहबा की आवाज

गीत गानेवाली लड़कियाँ

## पहला दृश्य

[ मि० हरीशनन्दन दानापुर के सब-डिवीजनल आफिसर—या आजकल की भाषा में उप-मंडलाधीश—के मकान का गोल कमरा । समय संध्या ! कमरे की बनावट उस जमाने की है जब गोल कमरा गोल हुआ करता था । दर्शकों को सामने की बे-बिगडो यानी तीन खिड़कियाँ नज़र आती हैं और इन खिड़कियों के दोनों तरफ़ एक-एक द्वार । द्वार और खिड़कियों के पीछे बरामदा है और उसके पीछे आगीचा जिसकी अस्पष्ट झलक मिलती है । खिड़कियों से लगी गद्देदार बेंच है जिस पर बैठ कर उपवन की बहार और आगत व्यक्तियों की आँकी ली जा सकती है ।

कुछ नीची कुर्सियाँ, एक कौच, कुछ छोटी मेजें, एक तरफ़ किताबों की शालमारी, दूसरी तरफ़ एक ऊँची मेज जो लैम्प रखने के काम आती है, दो कालीन, दो फूलदार ऐशट्रे यही इस गोल कमरे का फर्नीचर है ; दीवारों पर कुछ तस्वीरें भी, एक तस्वीर ऊँची मेज पर भी है ।

अधेरा होने के कारण खिड़की के पास बैठी हुई युवती महिला का चेहरा साफ़-साफ़ नज़र नहीं आता है, लेकिन मिसेज़ हरीशनन्दन या मोहिनी, सुन्दरी है, इसमें सन्देह की गुंजायश नहीं । इंतज़ारी की उम्र से बचने के लिए या किली और कारणवश बुनाई के द्वारा दिल-बहलाव कर रही है । नेपथ्य में पेट्रोमेक्स लैम्प में गैस भरने की आवाज़ जिसे मोहिनी कान लगाकर सुनती है ]

मोहिनी—नहीं जलता बेरा ?

बेरा—(नेपथ्य से) जी नहीं ! अकसर ऐसे ही धुक-धुक कर रह जाता है ! आजकल के पेट्रोमेक्स भी तो बेकार.....

मोहिनी—तो लालटेन ही ले आओ.....

[ बेरा लालटेन लाकर रख देता है और फिर बायें दरवाजे से चला जाता है । गोल कमरा अर्ध-विकसित सौन्दर्य से जगमगा उठता है । उसी समय एक अर्दली प्रवेश करता है । यह है रहीम जैसा कि आप बाद के वार्तालाप से समझ जायेंगे ]

रहीम का परिचय उसकी बातचीत से ही मिल जाता है । ठोड़ी पर हलकी डाढ़ी, आँखों में जमाने की गर्विश, छरहरे बदन पर अक्षय सत्ता की बर्दी जो १५ अगस्त १९४७ के तंग वर् में से भी अछूती निकल आई, सिर पर पगड़ी, जिसका झुब्बा ओहदे का प्रतीक है । और जबान पर सरस्वती—बीणावादिनी नहीं, बल्कि वह जो मंथरा की जिह्वा पर आरूढ़ हुई थी, ऐसा है रहीम अर्दली । जैसे दुकान को साइनबोर्ड की जरूरत होती है ऐसे ही अफसर को अर्दली की । रहीम मामूली साइनबोर्ड नहीं है, उसकी चमक जमाने के साथ बढ़ती ही गई है । अफसर आये और चले गये, लेकिन दानापुर कचहरी के इस साइनबोर्ड की आभा वैसी ही है । ]

रहीम—मेम साहब !

मोहिनी—किसको खोजते हो चपरासी ?

रहीम—एक बूढ़ा आपसे मिलना चाहता है । बाहर खड़ा है ।

मोहिनी—बूढ़ा ? मैं किसी बूढ़े को नहीं जानती !

रहीम—वह तो कहता है कि मेम साहब से दो बात किये बिना.....

मोहिनी—मेम साहब ? कौन मेम साहब ?

रहीम—हुज़ूर ।

मोहिनी—चपरासी, मैं मेम साहब नहीं हूँ ।

रहीम—जी !

मोहिनी—मुझे मेम साहब कह कर मत पुकारना ! समझे ?

रहीम—लेकिन, हुज़ूर, इस कोठी में तो बराबर मेम साहब लोग का ही ठिकाना रहा है । ( मोहिनी की मौन उत्सुकता से मानो बढ़ावा पाकर ) बीस बरस से चपरासी हूँ हुज़ूर ; अंग्रेजों का जमाना भी देखा है और अब हिन्दुस्तानियों का भी ! मैस्कट साहब की शादी भी यहीं हुई थी । आग ही की तरह उनकी भी नयी दुल्हिन आई थी ! और वह खन्ना साहब स्टेशन से यहाँ तक मय मेम साहब के हाथी पर आये थे और इकबाल हुसेन साहब भी यहाँ एस० डी० ओ० थे और उनकी बेगम साहबा...

मोहिनी—क्या ये सभी मेम साहब कहलाती थीं ?

रहीम—और दूसरा नाम तो इस कोठी में फबना ही नहीं है हुज़ूर । यहाँ के लोगों की घरवाली को मालकिन भी कहते हैं.....

मोहिनी—ओह 'नो', मालकिन तो भदा सा लगता है ।

रहीम—जी हाँ, और फिर बेगम साहिबा.....

मोहिनी—नहीं, वह भी ठीक नहीं । हमारे पड़ोसी मौलवी साहब की बेगम साहिबा के मुँह से पान की पीक ही निकलती रहती थी ।

रहीम—कश्मीरियों में रानी साहिबा कहने का रिवाज है लेकिन...

मोहिनी—नहीं, नहीं । वह तो किस्से-कहानियों में कहा जाता है ।

रहीम—तो हुज़ूर हमेशा का कायदा चला आया है, अफसरों की बीवियाँ मेम साहब ही कहलाती रही हैं—इसीमें उनका स्तबा है !

मोहिनी—( किंचित पराजित स्वर में ) मेम साहब !

रहीम—जी हाँ, अंग्रेजों ने बहुत सोच-समझ कर ये सब नाम रखे थे हुज़ूर ! देखिए न इस लफ्फ़ मेम साहब में साहब शामिल

होने की वजह से क्या रोब, क्या हुकूमत आ गई है ! क्या बताऊँ, हुजूर, अब वे हुकूमत के दिन ही लद गये ! हुजूर के साहब तो, परमात्मा की दुआ से...सूरत से ही अफसरी टपकती है, लेकिन जमाने ने भी कैसा पलटा खाय़ा है ! इस कोठी में जब मैस्कट साहब...

मोहिनी—(खिड़की की ओर देखते हुए) चपरासी तुम बात बहुत करते हो और देख-भाल कम ! यह देखो कौन मकान में घुसा चला आ रहा है !

रहीम—( जो निष्प्रभ होना जानता ही नहीं ) माफी हुजूर ! (मुस्तैदी से दरवाज़े के निकट आ पहुँचे किसी व्यक्ति को सम्बोधित करते) अरे, यह तो वही बूढ़ा है ! अरे, यह क्या हिमाकृत है ? तुमसे कहा था बाहर ही बैठियो चल निकल !

[लेकिन वह व्यक्ति अन्दर आ ही पहुँचता है। नाटे क़द का प्रामीण, आयु ५५ वर्ष के करीब, आँखों और चाल-ढाल से बेबसी, आते ही मोहिनी के पैरों पर गिर पड़ता है।]

मोहिनी—अरे, अरे..... यह मेरे पैर क्यों पकड़ रहा है ? चपराची, चपरासी, इसे उठाओ ! कहाँ की मुसीबत आ पड़ी !

आगन्तुक—दया कीजिए ! मुझे बचाइए ! हुजूर, हुजूर !!

मोहिनी—अरे भई, इसे उठाओ भी..... (रहीम काफी मेहनत से उसको उठाता है) अरे, यह तो रो रहा है।

रहीम—हुजूर, मुसीबत का मारा हुआ है।

मोहिनी—यया हुआ इसे ?

रहीम—बताता क्यों नहीं भोला सिंह ? बोल !

भोलासिंह—बे मौत मर जाऊँगा हुजूर ! दया कीजिए...

(रहीम की ओर उम्मीद से देखता है।)

रहीम—बात यह है हुजूर कि इस गरीब को इसके दुश्मन बहुत परीशान कर रहे हैं।

भोलासिंह—मिनट भर को चैन नहीं है। सरकार, जुलम का कोई

ठिकाना नहीं ! झूठे मुकदमे में फँसा लिया गया हूँ ! जायदाद ले ली सो अलग—

मोहिनी—किसने ?

रहीम—इसके दुश्मनों ने ! सब इसके रिश्तेदार हैं, लेकिन आज जान के ग्राहक बने हुए हैं !

भोलासिंह—सरकार मर जाऊँगा । सारे इलाके में कोना भर भी सरन नहीं मिलती ! दुश्मन हाथ धो के पीछे पड़े हैं ।

मोहिनी—तो क्या सारे इलाके में कोई इसको सहारा नहीं दे सकता ?

रहीम—सहारा तो बस एक ही जगह से मिल सकता है !

मोहिनी—यानी ?

रहीम—बोलता क्यों नहीं बे ?

भोलासिंह—हुजूर, साहब के ही इजलास में मुकदमा है—बेमौत मर जाऊँगा ।

रहीम—जी हाँ, हुजूर, आपके मुँह से सही बात साहब के कानों पड़ जायगी तो बेचारे का उद्धार हो जायगा ।

मोहिनी—हाँ, हाँ जब बेचारे पर इतनी मुसीबत है तो मैं उनसे कह दूँगी ! गरीब की मदद होनी चाहिए ।

भोलासिंह—हुजूर की उमर दिन दूनी रात चौगुनी हो, हुजूर की गोद में जल्दी ही चाँद-सा बच्चा……

मोहिनी—(भुंभुलाहट से) यह क्या बाहियात बकता है बूढ़े……

रहीम—हजूर वह भी दिन देखने को……

[बाहर मोटर की आवाज सुन कर आतुर हो मोहिनी उठ खड़ी होती है ।]

मोहिनी—यह लो मोटर आ गई ! (बरवाजे की ओर बढ़ती हुई) चपरासी, क्या नाम है इसका ?

भोलासिंह—हुज़ूर, भोलासिंह मौजा बिक्रमपुर थाना सरीता—

मोहिनी—ठीक है.....में साहब से बात करूँगी । चपरासी, तुम इसे रोके रखना—

[दाहिने दरवाजे से मोहिनी का प्रस्थान, रहीम की मुद्रा बदलती है ।]

रहीम—(आहिस्ता किन्तु कर्कश स्वर में) निकाल बे पाँच का नोट !

भोलासिंह—अभी काम तो पूरा होने दो चपरासी जी !

रहीम—लगाऊँगा एक धौल तो अक्ल ठिकाने आ जायगी ! मुझे ही चकमा देता है !

भोलासिंह—देखिए कोई आ रहा है !

रहीम—तो चल बाहर ! उधर से नहीं इधर से ! छोड़ूँगा नहीं !

[बायें दरवाजे से भोला को घसीटते हुए ले जाता है । थोड़ी देर बाद दाहिने दरवाजे से बातें करते हुए हरीश और मोहिनी का प्रवेश ! कहते हैं नया मुसलमान अल्लाह ही अल्लाह पुकारता है ; नया अफसर भी काम ही काम की रट में एक अनोखी स्फूर्ति का अनुभव करता है । हरीश अपनी सफ़ाई देने में वही कौशल दिखा रहा है जो मुद्दालह की ओर से बहस के वक्त नया वकील दिखाता है ।]

हरीश नन्दन—भई माफ़ करना । क्या करूँ यह काम ऐसा आ पड़ा कि रुक जाना पड़ा । वर्ना शुरू में ही नई दुल्हिन को इस तरह अकेलेपन की बेबसी में.....

मोहिनी—(चौंककर रुकते हुए) शुरू में ही ? ...तो क्या बाद में यह रोजमर्रा का दस्तूर हो जायगा ?

हरीश नन्दन—(जल्दी से) नहीं, नहीं ! (कुर्सी पर बैठ कर टाई खोलते हुए) थोड़ा बहुत काम तो लगा ही रहता है । फिर भी इस वक्त तक तो हमेशा कचहरी से फुरसत मिल ही जाया करेगी ।

मोहिनी—(रुठते हुए) समझ गई ! आज तो देरी का रिहर्सल था !

हरीश नन्दन—अरे सुनो तो ! देरी किस वजह से हुई यह तो सुनो.....तबीयत फड़क जायगी !

मोहिनी—क्या इस बेकार शहर में बिजली लगने वाली है ?

हरीश नन्दन—बिजली ? हाँ, तुम्हें बड़ा अजीब-सा तो लगता होगा ! कहाँ कानपुर की चहल-पहल और कहाँ यह लालटेन की रोशनी !

मोहिनी—वह तुम्हारे पेट्रोमेक्स लैम्प का तो हार्ट फेल कर गया । (हँस कर) बड़ी मिन्नतें कीं लेकिन न जाने कैसा दिलजला है ?

हरीश नन्दन—(शरारत भरी मुस्कान) तुम्हें देखकर शरमा रहा होगा ।

मोहिनी—तुम्हारे ही सामने कौनसे जोहर दिखाता है ? बेरा कह रहा था कि अकसर यही हाल रहता है ।

हरीश नन्दन—(अपने उत्साह पर अफसरियत की लगाम लगाते हुए) देखो, लाट साहब के सामने बिजली का जिक्र करूँगा ! शायद कुछ .....

मोहिनी—लाट साहब ?

हरीश नन्दन—वही तो बता रहा था कि देरी क्यों हुई । यहाँ लाट साहब आने वाले हैं, सूबे के गवर्नर और उनकी लेडी ! आज ही जरूरी चिट्ठी मिली है और प्रोग्राम भी । जिक्र तो पहले से चल रहा था ! आज हुकुम आ गया ! दस तारीख को आ जायेंगे ।

मोहिनी—आठ दिन ही तो रह गये हैं ।

हरीश नन्दन—हाँ, सभी इन्तजाम करने हैं इस बीच में ।

मोहिनी—(दिलचस्पी बढ़ रही है) चलो, कुछ चहल-पहल हो जायेगी ।

हरीश नन्दन—हाँ, तुम्हारे भी जिम्मे कुछ काम रहेगा ।

मोहिनी—चाय पार्टी का बन्दोबस्त करना है ? मीनू तो अभी

मोहिनी—मेरा दिमाग मेरे काम के लिए तैयार है, बिना चाय के ही !

हरीश नन्दन—तो ठीक है ! अभी से अपना भाषण लिखना शुरू कर दो !

मोहिनी—भाषण ?

हरीश नन्दन—हाँ, जलसे के मौके पर तुम्हें भाषण देना है ।

(मोहिनी चौंक पड़ती है)

मोहिनी—मुझे भाषण.....देना है ।

[आँखें हरीश पर हैं और हाथ में दूध का जग है, जो प्याले पर निछावर हो रहा है]

हरीश नन्दन—हैं, हैं सारा दूध ही उँडले दे रही हो ! ऐसी क्या कयामत आ गई !

मोहिनी—कयामत, नहीं तो क्या ! तुमने तो मुझे डरा ही दिया । अब बनाओ तुम्ही अपनी चाय ! (ट्रे हरीश की तरफ सरका देती है).... भाषण ! ..... भई, यह सब मुझ से नहीं होगा.....और फिर मैं क्यों भाषण दूँ ? मुझ से और स्कूल से क्या मतलब ?

हरीश नन्दन—मतलब ? वाह तुम तो उसकी मैनैजिंग कमेटी की प्रेजिडेंट हो !

(चाय बनाने लगता है)

मोहिनी—खूब ! मुझ से तो किसी ने पूछा नहीं कि मुझे स्कूल की प्रेजिडेंट बनना है ।

हरीश नन्दन—अफसर की बीबी से पूछा नहीं जाता, हर एस० डी० ओ० की बीबी स्कूल की प्रेजिडेंट रही है सो तुम्हें भी.....

मोहिनी—यह खूब, मार-मार कर हकीम.....

हरीश नन्दन—यह लो चाय, गहरी ! (हँसता है) भाषण तैयार करने में मदद देगी ।

मोहिनी—भई, मुझे तो बुखार चढ़ जायेगा ।

हरीश नन्दन—अरे, भाषण जमाने में क्या लगता है ! दो-चार वकील-मुस्तार तो पहले से तय कर रखूँगा । ठीक-ठीक मौकों पर ताली बजावेंगे । तुम्हारा दिल भी बढ़ जायेगा और भूले हुए वाक्य याद करने का वक्त भी मिल जायेगा ।

मोहिनी—लड़कियों के स्कूल में वकील-मुस्तार ?

हरीश नन्दन—हाँ ! यह तो तुमने ठीक ही कहा ! वहाँ तो सख्त पर्दा है..... ( सोचता है ) खैर, उसका भी इन्तजाम हो जायेगा.....

मोहिनी—( शरारत से ) एस० डी० ओ० के लिए क्या मुश्किल है...लेकिन मेरा भाषण तो तैयार कराओ !

हरीश नन्दन—देखो इन भाषणों का भी एक नुस्खा होता है । पहले खुशामद की चाशनी उठाओ, उसके ऊपर थोड़ा सा स्कूल की खूबियों का सफूफ फैलाओ, फिर चन्द जरूरी माँगों के छीटे डालकर, जोश का जुशांदा दो ; और बस हो गई तैयार स्पीच ।

मोहिनी—और जिसने इस भाषण का घूंट पिया वह तो बस हो गया नीलकंठ ! मामूली जहर थोड़े ही है !

( बेरा आकर कोने में खड़ा हो जाता है । )

हरीश नन्दन—तुम भी क्या बातें करती हो । थोड़े दिन में तो तुम्हें ही मजा आने लगेगा इसमें ! ( बेरा को देखकर )...क्यों बेरा, अभी तो हम लोग चाय पी रहे हैं ।

बेरा—( कुछ हिचकिचाहट के साथ ) जी वह.....वह बाहर खड़ा इन्तजार कर रहा है ।

हरीश नन्दन—कौन ?

मोहिनी—अरे हाँ ! वह तो मैं भूल ही गई...देखो जी, तुम कैसे अफसर हो ! एक बेचारे दुखियारे बूढ़े का भला भी नहीं कर सकते ?

हरीश नन्दन—यह खूब रही ! कोई भलेपन का खजाना मेरे पास थोड़े ही है जो बाँटता फिर्लै !

(बेरा बाहर चला जाता है।)

मोहिनी—अभी तो ऐसी बातें कर रहे थे। मानो आकाश में पवन्द ही लगा दोगे।

हरीश नन्दन—बताओगी भी कुछ !

मोहिनी—तुम्हारे यहाँ कोई थाना है सरीता ?

हरीश नन्दन—है तो।

मोहिनी—उसमें एक गाँव है विक्रमपुर ?

हरीश नन्दन—वह भी है।

मोहिनी—वहीं का है वह बेचारा !

हरीश नन्दन—थाना सरीता, मौजा विक्रमपुर ( सोचता है ) अरे, भोलासिंह तो नहीं ?

मोहिनी—यही तो नाम बताया था उसने !

हरीश नन्दन—(ठहाका मारकर हँसता है) हा हा हा... भोलासिंह बेचारा ? हा हा हा—

मोहिनी—हँस रहे हो ? बड़ा गरीब है !

हरीश नन्दन—भोलासिंह गरीब ?... हा हा हा।

मोहिनी—बड़ा दुखियारा है बेचारा !

हरीश नन्दन—भोलासिंह दुखियारा ?... हा हा हा

मोहिनी—मैं कहती हूँ और चाहे जो करो उस गरीब की जायदाद मत लुटने देना।

हरीश नन्दन—जायदाद !... अरे वह इतना मालदार है कि हमें तुम्हें खरीद कर रख दे।

मोहिनी—वह ? चीथड़े तो पहने था...

हरीश नन्दन—रईस की तरह आता तो तुम उस पर पसीजती थोड़े ही। आया होगा अपने मुकदमे की सिफारिश कराने।

मोहिनी—तुम्हें कैसे मालूम ?

हरीश नन्दन—वह है नम्बरी मुकदमेबाज, सारा इलाका जानता है ।

मोहिनी—चपरासी तो कहता था कि उसके दुश्मनों ने उसे फँसा दिया है !

हरीश नन्दन—फिर यह चपरासी बदमाशी करने लगा । (जोर से आवाज देकर) ...रहीम !

रहीम—(नेपथ्य से वही मुस्तैद आवाज) आया हुआ !

हरीश नन्दन—उसी भोलासिंह से उलझ रहा होगा ।

(रहीम आता है और अदब से सलाम देता है ।)

हरीश नन्दन—देखो जी रहीम, यह जानते हुए कि भोलासिंह पुराना मुकदमेबाज है, तुमने उसे अन्दर क्यों आने दिया ?

रहीम—(जैसे इस प्रश्न का इंतजार कर रहा हो) हुआ, मैं तो उसे रोक ही रहा था कि कम्बख्त यहाँ आ पहुँचा ! बात यह है हुआ कि मेम साहब का दिल तो दया से भरपूर है । दूसरे की मुसीबत देख कर जरा सी देर में पसीज जाती है । (तीर निशाने पर ठीक बैठा है ! ) यही तो ऊँचे घराने की निशानी है ! सारे इलाके में मेम साहब के भिजाज की शोहरत है; घर घर में गुन-गान हो रहे हैं ! यों तो हुआ का वैसे ही बहुत इक्बाल है, लेकिन मेम साहब के भिजाज और दरिया-दिली ने उसमें चार चाँद लगा दिये हैं । हम लोगों का भी भाग ऊँचा है कि ऐसी मेम साहब की खिदमत का मौका...

हरीश नन्दन—(भुँभलाहट, मोठी भिड़की में तबदील हो गई है) अच्छा, अच्छा जाओ ! आगे मे ऐसी गलती न करना । उसे चलता करो !

[रहीम लम्बा सलाम भुका कर अदब के साथ बाहर जाता है ।]

मोहिनी—बड़ा ही बातूनी है ।

हरीश नन्दन—लेकिन तबीयत तो उसने मेरी खुश कर दी ।

मोहिनी—(जानकारी की मुस्कान) बड़ी जल्दी...

हरीश नन्दन—(मोहिनी की कुर्सी के पीछे जाकर उसके बालों को उँगलियों में उलझाते हुए) तुम्हारी तारीफ सुनकर मेरा सीना चौड़ा हो जाता है ।

मोहिनी—(बालों को छड़ाती हुई, हँस कर) हटो भी !

हरीश नन्दन—लोग ठीक कहते हैं, साहब को खुश करना हो तो मेम साहब से शुरुआत करो । पहले मैं इस बात को नहीं मानता था !

मोहिनी—अब क्या तुम भी मुझे मेम साहब कहोगे ?

हरीश नन्दन—क्या बुराई है ? हमारे एक दोस्त और उनकी बीवी एक दूसरे को 'डालिंग' कहते थे सब के सामने । 'डालिंग' वह किताब तो उठा दो 'डालिंग' आज तरकारी में नमक ज्यादा है । 'डालिंग' कोट में बटन.....

मोहिनी—गोया कि 'डालिंग' क्या हुआ .....घिसा हुआ पैसा हो गया ?

हरीश नन्दन—घिसा हुआ पैसा !.. क्या पते की बान कही है तुमने ! कुछ लोग रोमांस को रोजाना की जिन्दगी में भिड़ाकर घिसा हुआ पैसा ही बना देते हैं ।

मोहिनी—असली रोमांस नहीं नकली रोमांस ! केमिकल गोल्ड ! लेफ्टिन रोजाना के जीवन में से असली रोमांस का बहिष्कार करोगे तो मुकदमों की मिसलों में ही फँसे रह जाओगे । न भई, ऐसी बातें कहकर मुझे न डराओ !

हरीश नन्दन—यह बात नहीं ( रुक कर ) सुनो, आज तो एक रोमांटिक प्रस्ताव लेकर आया हूँ ! चलो मेरे साथ दौरे.....

मोहिनी—मोटर से या रेल से ?

हरीश नन्दन—कुछ दूर मोटर से, फिर हाथी से, फिर पैदल और लौटते वक्त नाव से ! कहो क्या एडवेंचर का नुस्खा मौजूद है !..... हो तैयार ?

मोहिनी—क्यों नहीं (फिर याद आते हुए) ... लेकिन ... वह ..  
भाषण ?

हरीश नन्दन—लाट साहब वाला ? ... उसका इंतज़ाम लौटने  
पर होगा ! तुम बेफ़िक्र रहो !

मोहिनी—तुम जानो । मर्ज़ तुमने दिया है तो दवा भी तुम्हें ही  
करनी है !

हरीश नन्दन—लो रोमांस तो तुम बिगाड़ रही हो !

मोहिनी—कैसे ?

हरीश नन्दन—एक बढ़िया से शेर को तुमने यों ही उँडेल दिया ।  
असली चीज़ तो यह है—

तुम्हींने दर्द दिया है तुम्हीं.....

पर्दा गिरता है)

## दूसरा दृश्य

‘बानापुर गर्ल्स’ मिडिल स्कूल का पीछे वाला बरामदा । बरामदे के पीछे कुछ सीढ़ियाँ हैं और तीन दरवाजे, जिनमें बीच वाला बन्द है । इन दरवाजों के पीछे एक हाल है जिसमें पारितोषिक-वितरण-उत्सव हो रहा है । सभा की कार्रवाई सुनाई पड़ती है ।

बरामदे में एक कुर्सी और एक बेंच पड़ी है । कुर्सी पर हरीश नन्दन कुछ चिन्तामयी उत्सुकता में बैठे हुए हैं, महिलाओं का जलसा होने के कारण उन्हें इस पिछवाड़े के बरामदे में बैठकर ही सन्तोष करना पड़ रहा है । हाल में गवर्नर साहब की लेडी साहबा के भाषण के अन्तिम शब्द सुनाई पड़ते हैं ।]

लेडी साहबा—और मैं उम्मीद करती हूँ कि आप लोगों के स्कूल की तरक्की बराबर होगी और थोड़े ही दिन बाद यह मिडिल स्कूल हाई स्कूल हो जाएगा ।

[ताली...थोड़ी देर में हारमोनियम की आवाज सुनाई पड़ती है । फिर घबराई हुई हालत में हेडमिस्ट्रेस प्रवेश करती है—अधेड़ उम्र, रंग सांवला, चश्मा, साड़ी पहनने का ढंग पुराना । जिस ढंग से मदों से बात करती है, उसे देख कर एक नयी प्रकार की नायिका का आभास होता है, ‘अज्ञात-प्रौढ़’ ! लेकिन इस समय घबराई हुई है ।]

हेडमिस्ट्रेस—सर, सर !...वह तबले वाली अध्यापिका जाने कहाँ चली गयी ?

हरीश नन्दन—क्या ? स्वागत गान पर तो मौजूद थी और अब आखिरी में गायब ? रहीम, रहीम !.....कहाँ मर गया ?

हेडमिस्ट्रेस—अब कैसे होगा !

हरीश नन्दन—देखिए कोशिश तो करता हूँ...क्या करूँ आपका जनाना जलसा है, वरना तबला तो मैं ही बजा लेता !

हेडमिस्ट्रेस—सर, सर, देर हो रही है ।

हरीश नन्दन—(मजबूरन) अच्छा, तबला, यहीं ले आइए । मैं यहीं से बजाता रहूँगा ।

हेडमिस्ट्रेस—सर, आपकी बड़ी मेहरबानी है । आप ही की वजह से...

हरीश नन्दन—(भुंभुलाहट में) अच्छा, अच्छा, वक्त खराब न कीजिए । (हेडमिस्ट्रेस जाती है) जब कोई और चारा ही नहीं !...

रहीम—(तेजी में आकर सलाम भुकाता हुआ) हुजूर ने बुलाया था ?

हरीश नन्दन—कहाँ चला गया था ? हमेशा जरूरत के वक्त गायब मिलते हो । देखो, थोड़ी देर के लिए, किसी को इधर मत आने दो !

रहीम—जी हुजूर !

हरीश नन्दन—तुम भी न आओ !

रहीम—जी हुजूर !

[रहीम कुछ हक्का-बक्का होकर बाहर जाता है ? थोड़ी देर में दोनों हाथों में मुश्किल से तबले थामे हुए हेडमिस्ट्रेस का प्रवेश, हरीश के पास तबला रख देती है । हरीश जोश में आकर तबले पर थोड़ा हाथ चलाते हैं ।]

हेडमिस्ट्रेस—वही छोटी सी चीज़ है, किन शब्दों में करें बखान...

हरीश नन्दन—तिताला या कहरवा ?

हेडमिस्ट्रेस—जी, ताल ? (कुछ फेर में पड़ कर फिर साफ स्वर में) जी जिस में चाहें बजा लीजिए !

हरीश नन्दन—जिस ताल में चाहें ? (चिढ़ कर) आप अध्यापिका जी कुछ जानती भी हैं ?...तबला भी कोई चपत है जिस गाल पर चाहे लगा दीजिए !

हेडमिस्ट्रेस—(सकपकाती हुई) जी, वह संगीत की अध्यापिका दूसरी हैं.....!.....क्या कहें वह .... लीजिए लड़कियों ने शुरू भी कर दिया !

[भूट से अन्दर घुस जाती है। नेपथ्य से गाना कोरस...अलग-अलग स्वरों की अलग-अलग गति जैसे स्लोसाइक्लिंग रेस में दौड़ने वाली साइकिलें ! हरीश तबले पर ताल जमाने की कोशिश करते हैं मगर आसान नहीं है।]

किन शब्दों में करें बखान  
 हो तुम हम सब के मेहमान  
 सदा रहें हम पर श्रीमान्.....  
 (लड़कियाँ रुक जाती हैं...फिर...) नहीं नहीं...  
 सदा रहे हम पर हे मात,  
 कृपा-दृष्टि तेरी, हे मात  
 हम सब बच्ची रहीं निहार  
 कब होवे नैया ये पार  
 किन शब्दों.....

[हरीश मजबूरन आधे गीत में ही तबला छोड़ देते हैं। चेहरे पर सख्त भुंभलाहट ! नेपथ्य से तालियों की आवाज। थोड़ी शान्ति के बाद मोहिनी के खखारने की आवाज ! हरीश हठात् चैतन्य हो जाते हैं। जल्दी-जल्दी जेब से एक कागज निकालते हैं। इतने में रहीम प्राता है।]

रहीम—हुज़ूर !

(भुंभलाहट से हरीश उसकी ओर मुड़ते हैं।)

रहीम—हुज़ूर वह तबले वाली—

हरीश नन्दन—होठों पर उंगली रखकर आहिस्ता स्वर में) चुप, चुप ! मेम साहब बोल रही हैं !

रहीम—मेम साहब.....

हरीश नन्दन—बोल रही हैं, भाषण दे रही हैं !

[नेपथ्य से भाषण शुरू होता है, आवाज़ में थोड़ी लड़खड़ाहट। भावोन्मेष नहीं है, यद्यपि खत्म करने की जल्दी तो है ही।]

मोहिनी—श्रीमती सभानेत्री महोदया, महिलाओं और बालिकाओं, इस स्कूल की मैनेजिंग कम्पनी की ओर से मैं आप लोगों को हृदय से अनुरोध देती हूँ, विशेषतः सभानेत्री महोदया को, जिनकी असीम अनुकम्पा और अनुपम गुणों का हम वर्णन नहीं कर सकते !

[हरीश इस वाक्य की स्पष्ट और सफल समाप्ति पर काफी खुश जान पड़ते हैं, लेकिन सहसा कुछ याद आ जाने पर रहीम की ओर उन्मुख होकर :]

हरीश नन्दन—(आहिस्ता से) रहीम, उसका इंतज़ाम किया न ? वही।

(हथेलियां मिलाकर संकेत करते हैं।)

रहीम—(ओर भी आहिस्ता से) जी हुज़ूर, सब ठीक है।

(भाषण जारी हो गया है।)

हरीश नन्दन—(उसी तरह) ...तुम जरा खुद जाकर देख आओ !

(रहीम जाता है, उधर भाषण जारी है।)

मोहिनी—लाट साहब की धर्मपत्नी होते हुए भी आपने इतना कष्ट उठाया कि इस नन्हें सी संस्था में पधारीं ! यही इस बात का

द्योतक है कि शिक्षा और बच्चों की प्रगति में आपकी कितनी दिलचस्पी है ।

[हरीश के हाथ ताली बजाने के लिए उठते हैं, लेकिन जान पड़ता है सभा के लिए वह वाक्य अधिक मुश्किल साबित हुआ । जो भी हो करतल-ध्वनि की अनुपस्थिति से हरीश को कुछ निराशा तो अवश्य हुई है । खैर शायद आगे चलकर ढंग ठीक हो, इसलिए हरीश हाथ वाले कागज को, जिसमें शायद भाषण की प्रतिलिपि है, गौर से पढ़ते हैं और मिलान करते जाते हैं ।]

मोहिनी—इस छोटे नगर में आप जैसी—सम्मान्य महिलाओं के तो दर्शन ही नहीं होते और.....

[नेपथ्य से किसी एक व्यक्ति के ताली बजाने की आवाज आती है, हरीश चौंक उठते हैं । थोड़ी देर तक वह ताली अकेली ही बजती रहती है, फिर कुछ बच्चों की तालियों की ध्वनि उसमें मिल जाती है । लेकिन अध्यापिकाओं के स्वर... 'चुप, चुप .. बन्द करो !' इत्यादि के बाद फिर से सभा-भवन शान्त हो जाता है । कुछ खखारने के बाद मोहिनी पहले से कम विश्वास भरे स्वर में भाषण जारी रखती है । हरीश की गति इस दौरान में सांप-छत्रुंदर की-सी हो जाती है । चेहरे पर बेहद परीशानी, घुटने पर हाथ पटकते हैं, बाहर की ओर भी कदम बढ़ाते हैं, फिर लाचारी के साथ कुर्सी पर बैठ जाते हैं और कान लगा कर सुनते हैं ।]

मोहिनी—और इसीलिए हम उचित रीति से आपका सत्कार नहीं कर पाये । आशा है आप हमारी कमियों की ओर ध्यान न देंगी । अब मैं इस पाठशाला के छोटे से किन्तु कठिनाइयों से बिंधे जीवन का थोड़ा-सा जिक्र करके अपना भाषण समाप्त करूँगी ।

[फिर वही अकेली ताली, जिसकी प्रत्येक ध्वनि हरीश के कानों में बिच्छू के डंक की तरह लगती है और वह रह-रह कर कुर्सी से

उछल-से पड़ते हैं ! कभी माथे को पकड़ते हैं, कभी बाहर की ओर भागते हैं ।]

हरीश नन्दन—(बबी आवाज़) रहीम, रहीम... वह भी कम्बस्त वहीं जाकर मर गया ! सब ढेर कर दिया !

मोहिनी—(फिर खलार कर कुछ हिम्मत के साथ) माफ कीजिएगा । आप लोग शायद उकता गई हैं, लेकिन मैं थोड़ी ही देर में समाप्त कर दूंगी.....

[फिर वही ताली, और इस बार बच्चों की करतल-ध्वनि भी शामिल हो जाती है । अध्यापिका जी 'चुप-चाप !' कहकर शान्त करती हैं । हरीश फिर बेताबी से पुकारते हैं, 'रहीम, रहीम' । कागज हाथ से गिर गया है । मोहिनी भी इन विघ्न-बाधाओं की आदी हो गई जान पड़ती है ।]

मोहिनी—तो मैं कह रही थी इस पाठशाला का जीवन छोटा ही है ! दो बरस के अन्दर ही यहाँ की लड़कियों ने कितनी उन्नति कर ली है, इसका तो नमूना आप लोग देख ही चुकी हैं ! सभानेत्री महोदया ने स्वयं अपने भाषण में इन लड़कियों के काम और स्कूल की पढ़ाई का उल्लेख करने की कृपा की है ।

[करतल ध्वनि के लिए रुकती है, हरीश भी उत्सुकता से कान लगाये बैठे हैं, मगर हाथ री नाउम्मेदी ! एक भी ताली नहीं बजती ।]

—इसलिए हमारा इतना साहस है कि हम उन्हीं के सन्मुख अपनी मांगें भी पेश करें । दुर्भाग्यवश न इस स्कूल का अपना मकान है, (फिर वही ताली) न बैंक में स्कूल के नाम कोई बड़ी रकम ही जमा है, (ताली) और न स्टाफ ही काफी है । (ताली) मतलब यह है कि स्कूल क्या है, एक अनाथ बच्चा है !

[इस बार ताली जोर से बजती है, बच्चे भी शामिल हो जाते हैं । हरीश साहब बेकरार होकर चिल्ला उठते हैं 'बन्द करो, बन्द

करो !' नेपथ्य में कुछ हलचल सी होती है । मोहिनी कुछ लड़खड़ाकर रुक जाती है । उद्विग्न मुद्रा में हेडमिस्ट्रेस का प्रवेश ]

हेडमिस्ट्रेस—सर, सर आखिरी पन्ना !

हरीश नन्दन—आखिरी पन्ना ?

हेडमिस्ट्रेस—जी, मेम साहब की स्पीच का आखिरी पन्ना शायद आपके पास ही रह गया !

हरीश नन्दन—ग़ज़ब !.....(भाषण की प्रति के लिए अपनी सभी जेबों में हाथ डालते हैं लेकिन वहाँ नहीं है) पहले से सोच-समझ कर देखा भी नहीं ! आप लोग भी ख़ुब हैं ।

(कुर्सी के ऊपर तलाश करते हैं ।)

हेडमिस्ट्रेस—सर सर, देरी हो रही है !

हरीश नन्दन—यहीं तो था मेरे हाथ में । अभी तो पढ़ रहा था मैं.....

हेडमिस्ट्रेस—वह तो नहीं है ऊपर वाली जेब में ?

हरीश नन्दन—जी, वह ..वह मेरा रूमाल है !.....हाँ, यह रहा ..

(हेडमिस्ट्रेस के पैर के नीचे दबे हुए कागज़ पर निगाह पड़ जाती है) आप खुद तो दबाये खड़ी हैं ।

[हेडमिस्ट्रेस घबड़ाकर पैर के नीचे से कागज़ को उठाने के लिए झुकती हैं और उसी क्षण हरीश भी; दोनों का सिर टकरा जाता है ! हेडमिस्ट्रेस घबड़ा कर सिर उठाती हैं ।]

हेडमिस्ट्रेस—माफ़ कीजिएगा, सर !

[न जाने क्या समझ कर हेडमिस्ट्रेस झेंप कर कुछ मुस्करा भी बेती हैं ।]

हरीश नन्दन—(झुल्लाकर कागज़ उठाकर उसमें से आखिरी पन्ना

फाड़कर हेडमिस्ट्रेस को थमाते हुए) लीजिए, लीजिए, फौरन जाकर मेम साहब को दे दीजिए फौरन !

[इससे पहले कि हरीश अपनी बात पूरी करे, नेपथ्य से मोहिनी की आवाज आती है :]

मोहिनी—इतने शब्दों...इतना...इतना कहकर मैं अपना भाषण समाप्त करती हूँ...और...और आप सब को—सब महिलाओं को धन्यवाद देती हूँ !...

[हरीश और हेडमिस्ट्रेस एक दूसरे की ओर देखते हैं, हरीश के चेहरे पर अपरिमित व्यथा है।]

हेडमिस्ट्रेस—खतम भी हो गया ! उफ़ !

[तेजी से हाल में घुस जाती है। थोड़ी देर बाद नेपथ्य से हेडमिस्ट्रेस की आवाज आती है]

—अब जलसा समाप्त हो गया है • देखिए आप लोग अपने-अपने स्थान पर बैठी रहिए ! जब तक लेडी साहबा हाल के बाहर न पहुँच जायें ! शोर न मचाइए...बीच वाली महिलाएँ कृपया रास्ता दें ! ... जी इधर से...इधर से...

(नेपथ्य की हलचल कम होती जाती है।)

हरीश नन्दन—(आप ही आप) औरतों का जलसा और बीस खटराग !...गदगद साहब का मामला है। जो भी दोष हो अफसर के मथे !...कहाँ का भ्रष्ट मोल ले लिया मैंने भी !

(रहीम का प्रवेश)

रहीम—हुज़ूर, लेडी साहबा बहुत खुश-खुश जा रही हैं !

हरीश नन्दन—लेडी साहबा खुश और खफ़ा तो बाद में होंगी, पहले तुम मुझे बताओ कि किस अहमक ने मेम साहब की स्पीच के दरम्यान ताली बजवाने का इंतजाम किया था ?

रहीम—जैसा हुज़ूर ने फ़रमाया था—

हरीश नन्दन—जैसा हुजूर ने फरमाया था ! (तैश में) क्या मैंने यह फरमाया था कि जब मेम साहब रोयें तो ताली बजे ?

रहीम—मेम साहब रोयें ? हुजूर मेम साहब.....

हरीश नन्दन—हाँ, हाँ मेम साहब स्कूल का दुखड़ा तो रो ही रही थीं और उधर जोरों के साथ ताली बज रही थी !.....और..... और जब वह लेडी साहबा की तारीफ कर रही थीं, तब सारा हाल गुमसुम, जैसे साँप सूँघ गया हो !...कुछ अक्ल भी है तुम लोगों में ? कहाँ है वह ?

रहीम—हुजूर बाहर ही है !

हरीश नन्दन—बुलाओ, इसी दम बुलाओ !

रहीम—हुजूर कसूर.....

हरीश नन्दन—मैं कहता हूँ, फौरन उसे हाजिर करो !

[रहीम भीगी बिल्ली सा बाहर जाता है और थोड़ी देर में एक बुकेंवाली औरत को साथ लिये आता है । इस बीच में हरीश गुस्से में कभी कुर्सी पर बैठता है कभी घूमता है । बुकेंवाली जरा कद्दावर जान पड़ती है और कुछ झुकी सी पड़ती है ।]

हरीश नन्दन—यही है क्या (बुकेंवाली से) बुर्का तो ऐसे ताना है जैसे तम्बू हो; मगर दिमाग की तीलियाँ भी कुछ कसी होतीं.....

रहीम—हुजूर बात यह थी.....

हरीश नन्दन—बात क्या थी ? क्या जो कागज़ मैंने दिये थे, उसमें मेम साहब का भाषण लिखा हुआ नहीं था ?

रहीम—जी था तो.....

हरीश नन्दन—क्या उसमें लाल पेन्सिल से उन स्थानों में निशान नहीं लगे थे जहाँ तालियाँ बजनी थीं ?

रहीम—जी थे तो, लेकिन.....

हरीश नन्दन—लेकिन क्या ?.....बुर्के के अन्दर शायद इतना अँधेरा था कि लाल निशान सफ़ेद हो गये ।

रहीम—हुज़ूर असल बात यह है कि इसे पढ़ना-लिखना आता ही नहीं !

हरीश नन्दन—(मानो उबल पड़ता है) क्या ! पढ़ना-लिखना ही नहीं आता ? तो किसने इसे तय किया था ? (बुर्कवाली से) कितने रुपये मिले हैं तुम्हें ?

रहीम—हुज़ूर.....

हरीश नन्दन—बताओ कितने रुपये मिले हैं ?.....( जवाब नदारत ! ) क्या मुँह में ताला लगा है ? जवाब दो ।

[उन्मुक्त विहंग की भाँति उल्लासपूर्ण गति से स्मितवदना मोहिनी का प्रवेश]

मोहिनी—किस पर गरम हो रहे हो ? वहाँ नहीं चलोगे ?

हरीश नन्दन—कहाँ ?

मोहिनी—(बुर्कवाली पर निगाह पड़ते ही चकित-सी हो जाती है) अरे यह तो वही है !

हरीश नन्दन—हाँ यह वही है । जिसने एक नहीं सात दफे तुम्हारे भाषण के बीच में बेमौज़ू ताली बजाई थी ! अहमक ! जाहिल !...

मोहिनी—हाँ भई, भद् तो इसने करा ही दी, हालाँकि.....

हरीश नन्दन—भद् ! अरे इस कम्बख्त ने नाक ही तो कटवा दी, लेडी साहबा के सामने ! कैफियत पूछता हूँ तो जवाब नदारद..... देखूँ तो इस जाहिल की सूरत ! रहीम, खोल दो इसका बुर्का.....

मोहिनी—हैं हैं, यह क्या गजब करते हो ? इतनी बेइज्जती क्यों करते हो इस बेचारी की ?

हरीश नन्दन—बेचारी ? यह बेचारी नहीं है (बुर्क वाली के

करीब जाकर उसका बुर्का फुर्ती के साथ खोलते हुए) यह है बेचारा ! मूँछों वाला बेचारा !

[बुर्काफाश होते ही नज़र पड़ता है गंगा-जमुनी मूँछों वाला एक पुरुष, करुणा और विनम्रता का मूर्तमान स्वरूप ! हाथ जोड़ कर याचना की मुद्रा में खड़ा है ! हरीश बुर्का खोलते वक्त उसकी तरफ़ न देख कर मोहिनी की ओर देखता है ऐसे ही जैसे कोई कलाकार अपनी अनुपम कलाकृति को प्रशंसोन्मुख दर्शकों को दिखा रहा हो ! लेकिन मोहिनी उसके चेहरे को देखकर चौंक पड़ती है]

मोहिनी—अरे, इसका चेहरा तो देखो ! यह तो वही बुढ़ा जान पड़ता है जो उस रोज़ अपने मुकदमे की सिफ़ारिश के लिए बंगले पर.....

हरीश नन्दन—हैं ! (बुर्क़े वाले की तरफ़ देखता हुआ पीछे हटता जाता है) यह—भोलासिंह है ? भो...ला...सि...ह (कुर्सी के पास पहुँच कर रुक जाता है और रहीम की ओर आँखें गड़ाकर देखता है) रहीम यह तो भोलासिंह है ?

रहीम—जी...जी...हुज़ूर

हरीश नन्दन—वही, भोलासिंह जिसका मुकदमा मैंने खारिज कर दिया था ?

भोलासिंह—(एसे स्वर में जिसमें व्यंग्य की गंध भी नहीं है) हुज़ूर के इकबाल से जज साहब की अदालत से मुकदमा तो बहाल हो गया !

हरीश नन्दन—हूँ...तो तुमने हमसे बदला लेने और हमें ज़लील करने का यह तरीका सोचा ? क्यों ?

भोलासिंह—(बहुत आजिज़ी के साथ) नहीं, हुज़ूर आप ऐसा सोचिएगा तो मैं कहीं का नहीं रहूँगा ! जज साहब की अदालत से हो, चाहे हाई कोर्ट से, हुज़ूर की निगाह के बिना तो इस इलाके में एक पत्ता भी नहीं खड़क सकता ।

हरीश नन्दन—तो फिर तुम्हारे इस बेहूदापन की वजह ?

भोलासिंह—हुजूर मैं तो आया था सलाम करने, रहीम भाई ने बनाया कि पाँच मिनट के लिए किसी की जरूरत है, बुर्का लगाकर ताली बजाना है। मैंने सोचा हुजूर और मेम साहब की खिदमत का इससे अच्छा मौका कब मिलेगा ? मुझे क्या मालूम था कब ताली बजानी है ? जब देखा सब लोग चुप है, कुछ चहल-पहल चाहिए, तभी ताली बजा दी।

[मोहिनी यह सब सुनत-सुनते, मुंह में रुमाल दबा कर हँसी रोकती हुई कुरसी पर बैठ जाती है।]

रहीम—हुजूर कुसूर डमका नहीं है। असल में मौके पर कोई और आदमी तैयार ही नहीं हो रहा था !

हरीश नन्दन—रहीम, तुमको आदमी तैयार कराने के लिए नाज़िर जी ने कितने रुपये दिये थे ?

रहीम—(हिचकता हुआ) हुजूर...एँ...

हरीश नन्दन—कितने रुपये दिये थे। (कड़क कर) जवाब दो !

रहीम—हुजूर। पच्चीस !

हरीश नन्दन—और वे पच्चीसों रुपये तुम्हारी जेब में गये ? भोलासिंह ने तो मुफ्त काम किया होगा ? यही बात थी न ?

रहीम—हुजूर...हूँ...

हरीश नन्दन—रहीम !

रहीम—हुजूर !

हरीश नन्दन—कितने बरस से तुम अरदली हो ?

रहीम—हुजूर... १५ बरस होने आये !

हरीश नन्दन—आज से तुम अरदली से हटकर दफ्तर का काम करोगे ! न रहेगा बाँस न बजेगी बांसुरी !

रहीम—इस बार माफ़ी दी जाय हुजूर, सरकार का.....

हरीश नन्दन—मैं कुछ नहीं सुनना चाहता... निकल जाओ मेरी आँखों के सामने से.....

रहीम—हुज़ूर.....

हरीश नन्दन—अभी, इसी दम !

( दोनों जाते हैं । )

—— बेईमान कहीं का... मट्टी ही ख़्वार करा दी.....

मोहिनी—(हँसते हुए) अरे भई, तुम तो बेकार इतना बिगड़ रहे हो ! ऐसी तो कोई बात हुई नहीं है कि तुम इतना आपे से बाहर हो जाओ !

हरीश नन्दन—ख़ूब ! यानी आप हँस रही हैं !.....

मोहिनी—बात ही हँसने की है..... मुझे तो गुमान तक नहीं हुआ कि देवियों के जलसे में बुर्के के अन्दर यह देवता विराजमान हैं !... अगर थोड़ी अकलमन्दी से इसने काम लिया होता तब तो मामला बना-बनाया था !

हरीश नन्दन—वही तो मलाल है । इतना अच्छा प्लान था ! सब ढेर हो गया ! क्या करें ! तकदीर ही में लाट साहब की नाराज़गी लिखी थी.....

मोहिनी—इतने मायूस न बनो !

हरीश नन्दन—(खोभ के साथ) तुम तो बहुत खुश मालूम देती हो !

मोहिनी—मेरी बात पूरी सुनो तो तुम भी खुश हो जाओगे !

हरीश नन्दन—सुनें !

मोहिनी—लेडी साहबा बहुत खुश थीं ।

हरीश नन्दन—उस अटपटे भाषण के बावजूद ?

मोहिनी—भाषण ही से तो बहुत प्रसन्न हुईं । बोलों कि जब मैं तुम्हारे बराबर थी तो मैं तो एक वाक्य भी पूरा नहीं बोल सकी, किसी

दूसरे से पढ़वा दिया था अपना भाषण । तुमने तो बहुत मजे का भाषण दिया है ।

हरीश नन्दन—(आंखों में चमक) सच ?

मोहिनी—फिर कुछ शकल-सूरत की तारीफ करने लगीं, बोलीं कि तुम्हारे मियां बहुत लकी (भाग्यवान) हैं !

हरीश नन्दन—(जैसे बाँछें खिली हों) सच ?

मोहिनी—(कुन्ध शर्माकर) क्योंकि उन्हें तुम्हारे जैसी बीवी मिली है । सर्विस में ऐसी बीवी होना तरक्की की उम्मीद बढ़ा देता है ।

हरीश नन्दन—मोहिनी, यह तो कमाल की बात हो गई ! हो सकता है लाट साहब कुछ मुझ में दिलचस्पी लेने लगें !...

मोहिनी—वही तो ! लेडी साहबा कहने लगीं कि राजधानी में बुजुर्ग महिलाएँ तो कई हैं ! जरूरत है कुछ कम उम्र के जोड़ों की...

हरीश नन्दन—(हाथ पर हाथ मारकर) मार ली बाजी ! राजधानी की सेक्रेटेरिएट में अक्सर जगह खाली होती रहती हैं...या...या... लाट साहब के निजी दफ्तर में भी कुछ ऊँचे ओहदे हैं...वहाँ पहुँचने पर तो तुम्हें भी लेडी साहबा के कुछ काम आने का मौका मिल जायगा !

मोहिनी—तो फिर जल्दी चलो !

हरीश नन्दन—तुम तो समझ बैठीं कि लाट साहब अभी हमारे हाथ में हुकुम दे देंगे !

मोहिनी—मैं कह रही थी कि स्टेशन चलो.....

हरीश नन्दन—(घड़ी देखता हुआ) लाट साहब की गाड़ी तो दो घंटे बाद आती है !

मोहिनी—लेडी साहबा ने कहा है कि तुम लोग जल्दी आ जाओ । चाय हमारे सैलून में ही पीना ।

हरीश नन्दन—भई वाह मोहिनी ! (कमर में हाथ डालकर झूमते हुए) तुमने तो मेरा मामला ही साध दिया ।

मोहिनी—(कमर छुड़ाते हुए) हटो भी ! क्या बचपना करते हो !.....

हरीश नन्दन—लाट साहब कह रहे थे कि हमलोग बिल्कुल बच्चे लगते हैं ।

मोहिनी—तभी शायद बातों-बातों में लेडी साहबा ने मेरी उम्र भी पूछ ली ! मैंने कहा १६.....

हरीश नन्दन—(कुछ चौंक कर) १६ ?

मोहिनी—हाँ १६ बरस...क्यों, सोच में क्यों पड़ गये ?

हरीश नन्दन—तुमने कहा तुम्हारी उम्र १६ बरस है ?

मोहिनी—तो क्या गलत कहा ? देखो पैदायश का सन्...

हरीश नन्दन—मोहिनी सच बताओ, तुम्हारी उम्र १६ बरस ही है ?

मोहिनी—यह लो ! यह बात तो तुम्हें शादी होने से पहले पूछ लेनी चाहिए थी । देखो पैदायश का सन्.....

हरीश नन्दन—मोहिनी तुम्हें ठीक याद है ?

मोहिनी—यह खूब रही ! बात पूरी सुनते नहीं, अपनी ही कहे चले जा रहे हो ! देखो पैदायश का सन्.....

हरीश नन्दन—(कंधे हिलाकर कुर्सी पर बैठते हुए) कुछ भी हो, मैंने तो तुम्हारी उम्र २२ बरस बता दी !

मोहिनी—(कुंचित भ्रू) २२ बरस बता दी ! किसे ?

हरीश नन्दन—लेडी साहबा को !

मोहिनी—(रोष बढ़ रहा है) तुमने लेडी साहबा को मेरी उम्र २२ बरस बताई ? कब ?

हरीश नन्दन—उन्हें अस्पताल लाते वक्त मोटर में ।

मोहिनी—(उबल कर) तुम्हें शर्म तो न आई होगी मुझे बुढ़िया बनाते वक्त !

हरीश नन्दन—बुढ़िया ?

मोहिनी—बुढ़िया नहीं तो क्या ? मैं २२ बरस की लगती हूँ ? (भाव और शब्द एक प्रवाह में ! ) जलील करने का और कोई तरीका नहीं मिला था तुम्हें ? यह कौन जन्म का बदला लिया है ?...तुम्हें मेरी यह कदर करनी थी तो शादी से पहले क्यों न कह दिया था ? तुम्हारे लिए किसी बुढ़िया बीवी का ही इन्तजाम कर देती ! मेरी यह बेइज्जती तो न होती—चार जनों के सामने !

हरीश नन्दन—अरे भई मेरा मतलब.....

मोहिनी—अब मैं कौन सा मुंह दिखाऊँगी लेडी साहबा को ? वह भी सोचेंगी कि कैसी बीबी है और कैसे मियां ! मैं पूछती हूँ कि तुम्हें कौन सी बात दीखी मेरे अन्दर जो तीन बरस तुमने जोड़ दिये मेरी उम्र में ? चेहरा ? चाल ? आँखों की नज़र ? (रुआँसी) मेरा तो जी करता है अपने घर चली जाऊँ ! तुम्हारे यहाँ रहकर तो फिकर ही में आदमी मर जाय । देहात की ज़िदगी, मकान हैं तो सौ साल पुराने, चपरासी हैं सो पच्चीस साल पुराने, फर्नीचर पुराना, सारी ज़िन्दगी पर पुरानापन छाया हुआ है । इसमें तुम्हें सूझेगा क्या ? बुढ़ापा !

हरीश नन्दन—मैं कहता हूँ, सुनोगी भी.....

मोहिनी—ऐसे भी आदमी हैं जो अपनी बूढ़ी बीवियों को भी जवान दिखाने की कोशिश में लगे रहते हैं ! मि० अरुण को ही देखो, उनकी बीवी से जब पूछो तो उम्र बतायेंगी २६ बरस ! न जाने कब से वह अपनी आयु २६ बरस बताती आ रही हैं, मगर मजाल क्या कि मि० अरुण ने कभी चूँ भी की हो !

हरीश नन्दन—लेकिन मि० अरुण के बाल सफेद हो चले हैं !

मोहिनी—उससे क्या होता है ? दिल तो उनका बूढ़ा नहीं हुआ । मगर तुम तो कभी-कभी ऐसी बातें करते हो जैसे भीतर से बूढ़े हो

चले ! दिल में उमंग रखो तो बाहर की भुरियाँ जेल की सींकचे नहीं बन सकतीं, अरमानों को रंगीन रखो तो बालों की सफेदी जवानी का सफेद कफन नहीं बन सकती । मैं पूछनी हूँ, आदमी बुजुर्ग बनने के लिए क्यों आतुर हो ? बुजुर्गीयत तो प्रतिध्वनि है कमजोर, धीमी होती हुई आवाज़ की, जो समस्याओं की चट्टानों से टकराकर वेबमी के साथ, सिसकती-सी वापस आती है । मैं चाहती हूँ हमारा जीवन बुलन्द आवाज़ों की झड़ी हो, एक के बाद एक जानदार आवाज़ जो उन चट्टानों को ढाहती चले, उनसे टकराकर वापस न आये !.....

हरीश नन्दन—(जिसने अब अपने को सम्हाल लिया है और जो इस भाषण को सुस्कान मिश्रित सजीदगी के साथ सुनता रहा है )  
हियर, हियर.....हियर हियर !

[ताली बजाता है । नेपथ्य से भी तालियों की आवाज़ आती है ।  
हरीश फिर ताली बजाता है और दुबारा नेपथ्य से तालियों की आवाज़ें आती हैं ]

— : कौन ? हेडमिस्ट्रेस हैं क्या ?

( हेडमिस्ट्रेस का प्रवेश )

हेडमिस्ट्रेस—सर, वह.....अखबार वाले बाबू आये हैं और मेम साहब के भाषण की रिपोर्ट माँगते हैं !

हरीश नन्दन—उनसे बोलिए कि हम एक नहीं दो-दो भाषणों की रिपोर्ट देंगे ।

मोहिनी—दो-दो ?

हरीश नन्दन—हाँ, मोहिनी, तुम्हारा दूसरा वाला भाषण भी लाजवाब रहा है ! क्यों न हेडमिस्ट्रेस साहबा, आपको तो पसन्द आया न ? आपने तो तालियाँ भी बजाईं ?

मोहिनी—तो आप छिपकर हम लोगों की बातें सुन रही थीं ?

हेडमिस्ट्रेस—(कुछ हिचकिचाकर ! कभी हरीश कभी मोहिनी की तरफ देखती हुई ) जी, जी, मैंने समझा...समझा...कि

मोहिनी—आपने खूब समझा...आप लोग.....

हरीश नन्दन—कोई बात नहीं हेडमिस्ट्रेस साहब, आप अखबार-नवीस से कह दीजिए कि हमारे बंगले पर मिलें (हेडमिस्ट्रेस छटकारा सा-पाकर पृष्ठ-द्वार की ओर जाती हैं । )

हरीश नन्दन—और देखिए हमारी मोटर इधर पीछे की तरफ ही भेज दीजिए ।

( हेडमिस्ट्रेस का प्रस्थान )

— : क्यों बिगड़ती हो ? तुम्हारा दूसरा वाला भाषण इतना जोरदार रहा कि थोड़ी देर और बोलतीं तो यहां हज़ारों की भीड़ ही जमा हो जानी...बस मोहिनी मैंने तय कर लिया !

मोहिनी— क्या तय कर लिया ?

हरीश नन्दन—यही कि अगले इलेक्शन में तुम्हें असेम्बली की सीट के लिए मंशा किया जायगा । गाँव-गाँव में तुम्हारे जोरदार भाषण होंगे; हज़ारों की तांदाद में स्त्री और पुरुष जमा होंगे । लाखों पोस्टर तुम्हारी तस्वीरों के साथ वेंटेगे और फिर एक दिन घोषणा होगी श्रीमती मोहिनी नन्दन एम०.....एल०.....ए०.....

( रहीम का प्रवेश )

मोहिनी—धत्—

रहीम—हुज़ूर, मोटर आ गई है ।

हरीश नन्दन—रहीम हम आज बहुत खुश हैं । और मेम साहब भी !

रहीम—हुज़ूर !

हरीश नन्दन—इसलिए मेम साहब की मंशा है कि तुम फिर से अरदली के काम पर बहाल किये जाओ !

मोहिनी—मेरी मंशा ?

रहीम—हुजूर का इकबाल दिन दूना रात चौगुना हो !...ये कागजात मोटर में रख दूँ हुजूर ?

हरीश नन्दन—हाँ !

( रहीम का प्रस्थान )

हरीश नन्दन—चलो ! मेरी होने वाली एम० एल० ए०, लेडी साहबा की चाय पर जाना है ।

मोहिनी—बातों का टालना तो तुम खूब जानते हो । बान तो हो रही थी कुछ और तुमने छेड़ दी दूसरी तान.....

हरीश नन्दन—अरे, वह बान ? वह तो मैं लेडी साहबा से कह दूँगा कि मैंने २२ तो अपनी उम्र बतलाई थी, तुम्हारी वहीं १६ है ! कह दूँगा मैं उनके सवाल को गलत समझा था ।

मोहिनी—(आगे चलते हुए) तुम अवसर बानों को गलत समझते रहते हो.....

हरीश नन्दन—लेकिन.....मोहिनी ! ( रुकता है ) मोहिनी !... एम० एल० ए० बनने के लिए तो...उम्र २५ वर्ष की होनी चाहिए ।

मोहिनी—एँ ?

हरीश नन्दन—और तुम अभी १६ बरस की हो ।

[दोनों एक-दूसरे की ओर देखते हैं, हरीश किंचित् हँसता है, मोहिनी भी हँसती है, धीरे-धीरे करके दोनों अट्टहास में शामिल हो जाते हैं । ]

( पर्दा गिरता है । )



पदी उठाओ पदी गिराओ

उपेन्द्रनाथ 'अशक'

## पात्र-परिचय

भगवन्त—क्लब का व्यवस्थापक । तानाशाही तबीयत का तेज, रोबीला व्यक्ति

दयाराम—निर्देशक—धीर, गम्भीर, कठिनाई के समय भी न घबराने वाला लेकिन बेपरवाह

श्याम—क्लब का ऐसा सदस्य जिसे कोई पार्ट नहीं मिला, पर जो अभी तक डाइरेक्टर से चिपका है कि शायद कोई चांस निकल आये—स्वर में मिसकीनी और प्रत्येक सेवा के लिए तत्परता है ।

|           |                                |
|-----------|--------------------------------|
| हरि—      | } अभिनेता—क्लब के साधारण सदस्य |
| धनपति     |                                |
| सूत-पुत्र |                                |
| मानसिंह   |                                |

चुन्नीलाल—अभिनय के शौकीन एक बहुत मोटे युवा सेठ

प्रीड़ित जी—कवि

रामगुलाम—चपड़ासी

रामकिशुन—चपड़ासी का रिश्तेदार

|         |                                                        |
|---------|--------------------------------------------------------|
| महारानी | } दोनों भूमिकाओं में काम करने वाले सदस्य अथवा सदस्याएँ |
| दसी     |                                                        |

प्राम्पटर, दर्शक आदि

## पहला दृश्य

[पर्दा उठने पर जो रंगमंच दिखायी देता है वह बड़ी अव्यवस्थित दशा में है। सामने कुछ पर्दे, बिंग तथा नाटक सम्बन्धी दूसरा सामान पड़ा है। एक ओर कौच का सेट और कुर्सियाँ रखी हैं। दूसरी ओर पुराने जमाने का सिंहासन और आसनादि गड़बड़ पड़े हैं। एक कोने में बड़े-बड़े कमान, तूनीर और दो गदाएँ पड़ी हैं। खाली जगह में एक मेज पड़ी है, जिसकी कुर्सी उसके उलटी ओर की है। भगवन्त मेज की ओर की पीठ किये दर्शकों के सामने बैठा है। उसके हाथ में एक चिट्ठी है, जिसे वह पढ़ रहा है। उसकी दायीं ओर एक व्यक्ति अदब से ज़रा-सा झुका खड़ा है। पर्दा धीरे-धीरे उठता है।]

भगवन्त — (क्षण भर पढ़कर क्रोध से चिट्ठी वापस देते हुए) नहीं, नहीं, नहीं, मैं यह नहीं कर सकता। फ्री पासों के सम्बन्ध में अपना मत मैं एग्जिक्यूटिव की मीटिंग में दे चुका हूँ। पहले दिन फ्री पास देने के मैं एक दम विरुद्ध हूँ। तब यह चिट्ठी दयाराम जी को दे दो। वे चाहें तो फ्री शो रख दें। मेरे लिए यह सम्भव नहीं।

[व्यक्ति मुँह लटकाये हुए वापस जाने को तैयार होता है, श्याम हाथ में एक रुक्का लिये घबराया हुआ प्रवेश करता है।]

भगवन्त—क्यों, क्यों बात क्या है श्याम ? ऐसे घबराये हुए क्यों हो।

श्याम—यह देखिए भगवन्त जी शाम को कंसर्ट होने वाली है और बलबीर ने यह चिट्ठी भेज दी है।

(रुक्का भगवन्त को देता है)

भगवन्त—क्या लिखा है (लेकर चिट्ठी पढ़ता है) मुझे अचानक इन्फ्लूएंजा ने आ घेरा है, १०३ टेम्प्रेचर है और सख्त सिर-दर्द । एस्प्रीली है पर कुछ बना नहीं । कल भीगते पानी में जो रिहर्सल को आया और गीले कपड़ों में जो रिहर्सल करता रहा तो लगता है कि सर्दी खा गया । कोशिश तो बड़ी कल्लंगा पर शायद ही रात के नाटक में भाग ले पाऊँ । (चिट्ठी खत्म करके मुँह चिढ़ा कर) शायद ही नाटक में भाग ले पाऊँ । अरे तुम्हारे डम शायद से यहाँ तो बंटादार हो जायगा । (चिट्ठी को हथेली में तोड़-मरोड़ कर क्रोध से धरती पर फेंक देता है ।) रात को नाटक है और मुख्य कलाकार को इन्फ्लूएंजा ने आ घेरा है । शिकार सामने पड़ा तो कुतिया को हाजत हो आई । कम्बख्त इन अमेचर क्लबों की यही तो मुसीबत है । पहले तो अच्छे अभिनेता ही न मिलेंगे । फिर किसी तरह अभिनेता जुटे तो सभी 'हीरो' बनना चाहेंगे । इस बाधा से पार हुए, पार्ट बँटे तो रिहर्सल टाइम से न होंगे । रिहर्सल हो जायेगे और कहीं रोते-भीकते नाटक खेलने की नौबत आयेगी तो सभी पास चाहेंगे—अपने और अपने सम्बन्धियों के लिए ही नहीं, उनके साले बहनोइयों के लिये भी ! न देंगे तो किसी को इन्फ्लूएंजा आ दबायेगा, किसी को ऐन मौके पर टाइफाइड; किसी के पैर को मोच आ जायेगी, किसी की टाँग टूट जायेगी, किसी की माँ बीमार हो जायेगी किसी का बाप.....

श्याम—वह तो है जी, पर अमेचर क्लबों को कोसने से तो रात कंसर्ट न हो जायेगी । यह कहिए कि अब किया क्या जाय ? यदि पासों ही की बात है तो मैं हो आऊँ उसके वहाँ ।

भगवन्त—बीस पास माँगते हैं । बीस उनको दोगे तो शेष को क्या दोगे । जो लड़के स्त्रियों का पार्ट कर रहे हैं वे तो चालीस-चालीस माँगेंगे । और फिर क्लब के सदस्य और सरपरस्त ! ..... होगा यह कि पासों पर इतने लोग आ जायेंगे कि टिकट लेकर आने वालों के लिए हाल में जगह न रहेगी ।

श्याम—तो भाई साहब यह बात मैं जाकर उसको समझा दूँगा । बलबीर के बिना कंसर्ट चौपट हो जायेगी ।

भगवन्त—चौपट कैसे हो जायेगी, बलबीर का पार्ट हरि कर लेगा । पहले उसे ही युधिष्ठिर बना रहे थे । उसने पार्ट याद भी कर रखा है ।

श्याम—और हरि का.....

भगवन्त—हरि का दीवान कर लेगा ।

श्याम—लेकिन इस परिवर्तन की जरूरत क्या है भाई साहब । मैं एक बार बलबीर को जाकर.....

(घबराया हुआ हरि प्रवेश करता है ।)

हरि—(आते हुए घबराये स्वर में) बलबीर को तो इन्फ्लूएंजा हो गया है । मैं अभी उसी के यहाँ से आ रहा हूँ । उसे तो १०३ टेम्प्रेचर है ।

भगवन्त—पासों का इन्फ्लूएंजा तो नहीं ।

हरि—नहीं, नहीं भाई, वह बुरी तरह बीमार पड़ा है । मैं गया तो डाक्टर बैठा था । पासों के सम्बन्ध में जो बात आपने कही थी, मैंने उसे समझा दी थी और वह पाँच पास लेने को सहमत हो गया था, पर रात जब वह रिहर्सल के बाद यहाँ से गया तब कुछ सरदी की शिकायत कर रहा था । सुबह उठा तो उसका अंग-अंग टूट रहा था । टेम्प्रेचर देखा तो १०३ ।

श्याम—(हताश भाव से दोनों हाथ फैलाते हुए) अब !

भगवन्त—(सोचते हुए) बलबीर का पार्ट हरि करेगा.....और हरि का दीवान और शेष के लिए...शेष के लिए...दयाराम जी से पूछो । यह आग उन्हीं की तो लगायी है ।

श्याम—लीजिए वे लोग तो इधर आ रहे हैं ।

[दयाराम चंद अभिनेताओं के साथ प्रवेश करते हैं ।]

—दयाराम जी अब आप ही इस समस्या का कोई हल निकालिए ।

दयाराम—क्या हुआ भाई ?

[आकर भगवन्त के सामने कौच की बांह पर बैठ जाते हैं । उनके साथी कुछ कुर्सियों पर बैठते हैं, कुछ कौच और आसनों पर । सेठ चुन्नी लाल जाकर सिंहासन पर बैठ जाते हैं और हाथ बढ़ा कर कोने से गदा उठा, उसे कन्धे पर रख लेते हैं ।]

भगवन्त— { तीनों एक- } हुआ क्या, कंसर्ट का बंटाढार हो  
श्याम— { दूसरे के बाद } गया । बलवीर को डन्फ्लूएंजा हो  
हरि— { जल्दी-जल्दी } गया । १०३ ज्वर है ।

भगवन्त—जहं-जहं पैर पड़ें मंनन के तंह-तंह बंटाढार । मैंने पहले ही कहा था कि इन बलवीर महाशय को कष्ट न दो । ये जिस बलब में गये हैं उमे ले डूबे हैं । तुम कहते थे बड़ा अच्छा अभिनेता है । लो अब कराओ अभिनय !

दयाराम—अरे भाई बीमारी-उमारी किसी के बम की है, तुम-हम ही बीमार हो सकते हैं ।

भगवन्त—तो अब कंसर्ट का क्या किया जाय ?

दयाराम—(जिन्होंने पहले कई कंसर्ट देखे हैं और इन बाधाओं के अभ्यस्त हैं) देखो अभी सब किये देते हैं । बलवीर कर रहा था धर्मपुत्र का पार्ट, सो वह हरि कर लेगा । क्यों हरि तुम्हें लो याद है ?

हरि—आप कहेंगे तो कर लूँगा । यों मैंने अपना पार्ट अच्छी तरह याद कर रखा है और अब तो वह मुझे पसन्द भी है ।

दयाराम—तो भाई तुम अपने को अर्जुन के बदले धर्मपुत्र युधिष्ठिर समझो ।

हरि—अर्जुन का पार्ट कौन करेगा ?

दयाराम—अर्जुन का पार्ट कर लेगा दीवान । वह चाहता भी था अर्जुन का पार्ट करना ।

**धनपति**—(जो कौच पर बड़े इतमीनान से बैठा है, सहसा उठ कर) मैं कहना भूल गया, दीवान के गाँव से तार आया है उसकी दादी सख्त बीमार है ।

**भगवन्त**—युक्त है मर नहीं गयी ।

**धनपति**—(अपनी बात पूरी करते हुए) यह आज रात की गाड़ी से गाँव जा रहा है ।

**श्याम**—लीजिए अब धर्मपुत्र का ही नहीं, भीम का भी प्रबन्ध कीजिए ।

**भगवन्त**—(हँस कर) डब्लुदाए इक्क है रोता है क्या ?

आगे-आगे देखिए होता है क्या ?

अभी तो सुबह है, शाम होते-होते देखिए और किस-किस का प्रबन्ध करना होता है । इसीलिए मैंने कहा या कि या ड्रेस रिहर्सल में बलब के सदस्यों, स-परस्तों, अभिनेताओं और उनके सगे-सम्बन्धियों को बुला लो या एक दिन उनके लिए नियत कर दो ।

**दयाराम**—तुम यों ही भीखने लगने हो भगवन्त ! ड्रेस-रिहर्सल आखिर है तो रिहर्सल ही । असली नाटक जैसी दक्षता तो उसमें आ नहीं सकता । कहीं यदि कोई पार्ट अच्छा न हुआ तो सारे शहर में ढिंढोरा पिट जायगा और देखे बिना ही लोग उसके विपक्ष में हो जायेंगे । एक दिन इन लोगों के लिए रखने के विरुद्ध मैं न था । मैं सिर्फ यह कहता था कि वह दिन पहला दिन नहीं हो सकता ।

**श्याम**—तो अब दीवान की जगह किसको देंगे और हरि की किसको ? आप अर्जुन ही बी सोच रहे थे यहाँ भीम भी गायब है ।

**दयाराम**—अर्जुन के लिए सोच करना है । भीम के लिए तो... भीम के लिए तो.....(सहसा उनकी दृष्टि सिंहासन पर बैठे हुए गदा-धारी सेठ चुन्नीलाल पर पड़ती है और वे प्रसन्न हो उठते हैं ।) हमारे सेठ चुन्नीलाल हैं । चुन्नीलाल तो बने-बनाये भीम हैं । दीवान तो भीम

के लायक था भी नहीं। मैं तो पहले ही सेठ जी से कहना था कि आप ही भीम बनिये। कहाँ दीवान और कहाँ हमारे सेठ जी। एक तिनका और एक पहाड़। (हँसते हैं) क्यों सेठ जी !

चुन्नीलाल—(प्रसन्न पर घिघियाते हुए से) नहीं भाई, अपने राम ने पहले कभी स्टेज पर पार्ट नहीं किया। हम भीम के रूप में घबरा जायेंगे। हमें वह अपना छोटा सा चोबदार का पार्ट पसन्द है। हमसे वह दंगल-बंगल न होगा।

हरि—(जाकर उसकी पीठ थपथपाते हुए) अरे नहीं यार, घबराता क्यों है ? तू तो बना बनाया भीम है। बस जरा सम्वाद रट ले और फिर भूल भी गया तो 'प्राम्पटर' तो रहेगा ही।

चुन्नीलाल—अरे नहीं भाई, तू ठहरा मंजा हुआ ऐक्टर। मैं कभी स्टेज पर आया ही नहीं। मुझे तो वही अपना चोबदार का पार्ट पसन्द है, जिसमें सिर्फ एक ही दो शब्द कहने हैं। 'जी महाराज' और 'जो आदेश' और एक ही वाक्य है, 'महाराज, मानती को महारानी ने भूगृह में बन्द करने का आदेश दे रखा है।' यह मुझे अच्छी तरह याद है। भीम का पार्ट मेरे बस का नहीं।

दयाराम—अरे नहीं सेठ जी आप घबराते क्यों हैं ? पूरा दिन पड़ा हुआ है। रट डालिए पार्ट और दुर्योधन को लेकर चार-छः रिहर्सल कर डालिए। घबराइए नहीं। ऐसा ट्रेन कर दूंगा आपको कि सब वाह-वाह कह उठें।

हरि—अरे भाई नाचने लगी तो घूँघट कैसा ? जहाँ सौ वहाँ सवा सौ, ओखली में सिर दिया तो मूसलों का कौन डर ? जब स्टेज पर आ गये तो एक वाक्य हुआ तो क्या और सौ हुए तो क्या।

दयाराम—और फिर सेठ जी 'प्राम्पटर' तो वहाँ होगा ही भूल गये तो उसी वाक्य को जरा सा दोहराते हुए, नेपथ्य के पास आये।

तनिक खांसने का अभिनय किया, 'प्राम्पटर' से सम्वाद सुना और बढ़ कर कह दिया । इसमें घबराने की कौन बात है ?

चुन्नीलाल—अच्छा, यदि आप लोग कहते हैं तो ले लेता हूँ । मैं कभी स्टेज पर आया नहीं, इसीलिए डरता हूँ । आप 'प्राम्पट' कर देंगे तो कर लूँगा ।

हरि—वाह ! यह बात है मेरे शेर की ?

भगवन्त—खैर भीम का तो हो गया, धर्मपुत्र का पार्ट हरि कर लेगा । हरि की जगह अर्जुन का पार्ट कौन करेगा ?

श्याम—अ...अ... यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं.....

भगवन्त—(खुशी से) तुम करोगे ?

श्याम—( विनम्र अभिमान से हँसते हुए ) मैं तो अर्जुन का पार्ट करना ही चाहता था । पारसान 'अभिमन्यु-वध' में मैंने ही अर्जुन का पार्ट किया था । आप लोगों ने मुझे इस योग्य नहीं समझा तो मैंने अपने आपको दूसरी सेवा में लगा दिया ।

भगवन्त—तुमने हमसे तो कहा नहीं, किसने की थी आपत्ति तुम्हारे अर्जुन बनने पर, ( फिर यह याद आने पर कि उन्होंने स्वयं की थी ) खैर हटाओ । तुम अर्जुन का पार्ट याद कर लो ।

श्याम—मुझे अच्छी तरह याद है । अर्जुन का ही नहीं मुझे नाटक के सारे के सारे पार्ट याद हैं ।

दयाराम—चलिए यह सब तय हो गया । अब आप चलकर रिहर्सल कर लीजिए ।

भगवन्त—लेकिन चोबदार का पार्ट कौन करेगा । सेठ जी तो भीम बन गये । वह तो एकांकी ही चोबदार से आरम्भ होता है ।

दयाराम—अरे चोबदार के पार्ट में क्या रखा है कोई भी कर लेगा ।

भगवन्त—नहीं भाई, इस असमंजस से काम न चलेगा । किसी

आदमी को उस पार्ट के लिए निश्चित रूप से नियत करना होगा । पर्दा उठते ही तो एकांकी में पार्ट है उसका ।

दयाराम—अरे हटाओ यार दे देंगे किसी को । और कोई न मिला तो क्लब के चपरासी को दे देंगे । चोबदारी करते-करते उसकी उम्र घिस गयी है । यह न हुप्रा तो माली को दे देंगे । उस पार्ट में रखा ही क्या है ।

भगवन्त—नहीं भाई इम 'किमी को भी देने' का मैं कायल नहीं ।

दयाराम—ग्रच्छा बुलाओ चपरासी को । ( आवाज देते हैं )  
रामगुलाम ! रामगुलाम !

( कोई आवाज नहीं आती । )

दयाराम—अरे श्याम, जरा देना आवाज भाई ।

( बायीं ओर नेपथ्य के पास जा कर आवाज देता है )

रामगुलाम—(नेपथ्य में आता हुप्रा) जी...जी...!

श्याम—चलो तुम्हें दयाराम जी बुलाते हैं ।

रामगुलाम—(प्रवेश करते हुए) जी बाबू जी ।

दयाराम—देखो भाई रामगुलाम, हमारा एक ऐक्टर कम हो गया है । तुम जरा उनकी जगह दो-चार शब्द कह दो वो हमारी चिन्ता मिट जाय ।

रामगुलाम—हम अबहीं कहि देन है बाबू जी, आप तनिक हमका समुझा के कहि तो देव कि के से काव कहवड ।

दयाराम—अरे किमी से क्या कहना है । रात को यहाँ कंसर्ट होने वाली है न ?

रामगुलाम—जी बाबू जी समुझि गये । सभा होए ना ।

दयाराम—हाँ, हाँ उसी में थियेटर होगा । तू उसमें काम करेगा ?

रामगुलाम—हाँ, हाँ बाबू जी, आप जो हुक्म देहैं ओकर राजी खुशी से करि सकित हैं । आपके नौकर ठहरे सरकार ।

दयाराम—हमारे नाटक में काम करने वाला एक आदमी बीमार हो गया है। उसकी जगह तुम ले लो।

रामगुलाम—का करे होइहैं सरकार ?

दयाराम—यह जीवन राम जी नाटक में राजा मानसिंह बने होंगे। तुम्हें आवाज देगे, 'चोबदार, चोबदार'। तुम त काल आ कर बोलना—'जी महाराज'। महाराज कहेंगे—'बताओ मालती कहाँ है ?' तुम कहना—'महाराज मालती को महारानी ने भूगृह में बन्द करने का आदेश दे दिया है।' महाराज बोलेंगे—'जाओ, कोतवाल से कहो, उसे हमारे सामने पेश करे'। तुम कहना—'जो आदेश'। बस !

रामगुलाम—का ? ई हमसे न हो सके सरकार।

दयाराम—अरे दममें क्या है। क्यों हो न सकेगा। चार आने पान तमाखू के लिए दे देगे।

रामगुलाम—वउने तो हम आपके नौकर है सरकार, लेकिन कबही नाटक-फाटक नाहिन बीन है सरकार। ए से माफी दीन जाय बाबू जी। ई भडइती हम से न हो सके बाबू जी।

दयाराम—अरे यह भडैती है। हम सभी पार्ट कर रहे हैं।

भगवन्त—अरे इससे न होगा। तुम भी दयाराम, स्यार से सिंह मरवा रहे हो गार। यह काम किसी पढ़े-लिखे से ही होगा।

दयाराम—क्यों भाई श्याम किसी और को तजनीजते हो।

श्याम—किसी राजे वजीर का पार्ट होता तो चार आदमी तैयार हो जाते। चोबदार का पार्ट कौन करे ? पहले ही कोई तैयार न होता था। वह तो हमारे सेठ जी की उदारता है कि इतने बड़े धनाधीश होते हुए भी उन्होंने एक चोबदार का पार्ट ले लिया।

चुन्नीलाल—(ही, ही कर हँसते हुए) उदारता का क्या बात है ? यह तो 'स्पोर्ट्समैनशिप' है।

भगवन्त—(कटुता से) पर यह 'स्पोर्ट्समैनशिप' हमारे यहाँ किसी

में नहीं । (जोर से सबको सम्बोधित करते हुए) क्यों भाई है तुममें से कोई जो चोबदार का पार्ट करे !

धनपति—गनपति चोबदार का पार्ट लेने को तैयार थे..... ।

दयाराम—कहाँ है गनपति ?

वनपति—जब आपने चोबदार का पार्ट सेठ जी को दे दिया तो वे अपने ससुराल चले गये ।

(सब हँस पड़ते हैं ।)

धनपति—(खिन्न होकर) नहीं नहीं ससुराल तो उनको जाना ही था । वह तो इसी नाटक के कारण.....

दयाराम—(जिन्हें अचानक तरकीब सूझ गयी है । चूटकी बजा कर) वाह, अभी प्रबन्ध कर देते हैं चोबदार का (रामगुलाम से) क्यों बे रामगुलाम, तू एक छोकरे को लाया था कि कहीं उसे चपरासी भरती करा दिया जाय । (उसको चुप देखकर) अरे वही जो मैट्रिक फ़ेल था ।

रामगुलाम—आप किसुनवां की चरचा करत हैं का ?

दयाराम—हाँ, हाँ, वही रामकिशुन । कहाँ है वह ?

रामगुलाम—हेई क्लब में हमरे घरा तो अहै ।

दयाराम—जरा बुला ला उसे ।

रामगुलाम—जो हुकुम सरकार !

(चला जाता है)

दयाराम—आप तो सेठ जी अब रुकिए नहीं, हरि को साथ ले लीजिए और भीम का पार्ट देख डालिए । आपके सम्वाद तो आरम्भ ही में हैं सो रट डालिए ।

चुन्नीलाल—जी यों तो आपकी दुआ से रोज रिहर्सल देखते-देखते पार्ट मुझे स्मरण हो गया है (गदा कंधे पर लिये झूमते-झामते सिंहासन से उतरते हैं) दुर्योधन ! षंड.....पाषंड (पदाघात) यदि मैंने तेरी

इसी जंघा को अपनी गदा के प्रबल प्रहार से चूर्ण-विचूर्ण कर तेरा अहंकार न तोड़ा तो मेरे कुंती-पुत्र होने पर धिक्कार है ।

दयाराम—वाह सेठ जी, दीवान कम्बख्त आपका क्या मुकाबिला करता । अब आप जाकर सारे पार्ट को भाव-भंगियों सहित रिहर्सल कर डालिए । ले जाओ भाई हरि, सेठ जी को ! और तुम भी अपना नया पार्ट रिहर्सल कर डालो ।

हरि—आइए सेठ जी ।

[सेठ जी, हरि और दूसरे कुछ अभिनेता चले जाते हैं । रामगुलाम किशुन को लेकर आता है । रामकिशुन बीस एक वर्ष का हूष्ट-पुष्ट अश्वत्थ देहाती है । नौकरी उसकी अभी लगी नहीं और इसीलिए उसने न अदब सोखा है न खुशामद और गाँव के छट्टे साँड सा मरकहा और स्कछंद है ।]

रामगुलाम—ई, आय गवा किसनवा सरकार ।

दयाराम—देखो भाई किशुन । एक काम है तुम्हारे लिए ।

किशुन—जो कहें कर सकित हैं ।

दयाराम—तुम हिन्दी-बिन्दी जानते हो ? पढ़े हो न मैट्रिक तक !

रामकिशुन—जी जानित हैं ।

दयाराम—देखो बा ! यह है कि रात को हम एक छोटा सा नाटक करने जा रहे हैं । हमारा एक अभिनेता बीमार हो गया है । छोटा सा चोबदार का पार्ट है, तुम कर लो तो तुम्हें कुछ पान-पत्ते की पैसे दे दें । कभी नाटक-वाटक किया तुमने ?

किशुन—जी ! गाँव में नाटक में कई बार पार्ट करि चुका अही ।

दयाराम—तो बोलो !

किशुन—दइहें का ?

दयाराम—अरे चार आने दे देंगे पान-पत्ते के लिए ।

किशुन—चार आने ! जोर की प्यास लगी हो बाबू जी और कोई

कहे चार आने देंगे पानी पीकर दिखाओ ! तो चार आने पर तो हम पनियों न पियें । चवन्नी में आजकल का होय सकयै ?

दयागम—अरे तो आठ आना ले लेना । जरा सा तो पार्ट है । एक लाइन तो तुम्हें बोलनी है ।

किशुन—एक रुपया देव तो करि देव ।

दयाराम—एक लाइन का एक रुपया !

भगवन्त—अरे हटाओ यार, दे देंगे एक रुपया । लेकिन देखो पार्ट अच्छी तरह याद रखना । पाँच-सात बार रिहर्सल कर लेना । भूलना नहीं ।

किशुन—ई तो हमारे बायें हाथ का खेल अहै । गाँवन में अइसा वइसा नाटक कर चुका अही कि ।

दयाराम—तो चलो अब करो रिहर्सल ।

(सब जाते हैं । पर्दा गिरता है ।)

## दूसरा दृश्य

[कंसर्ट आरम्भ होने का समय बीत चुका है; पर पर्दे के अन्दर पूरा प्रबन्ध नहीं हो सका, इसलिये दो बार घन्टी बज चुकने पर भी पर्दा नहीं उठा। दर्शक शोर मचाने लगे हैं। सीटियाँ तालियाँ और 'हूटिंग' शुरू हो गयी है। तभी तीसरी घण्टी बजती है और पर्दा उठता है।

सामने एक और पर्दा दिखायी देता है जिस पर बड़े सुन्दर सुनहले मोटे अक्षरों में लिखा हुआ है —“प्रयाग कलाकार समिति”❀

इस पर्दे के बाहर नेपथ्य के निकट ही दायाँ ओर को एक माइक्रो-फोन रखा हुआ है।

पर्दा उठने के क्षण भर बाद श्री दयाराम बुशर्ट और पेंट पहने हल्की सी घबराहट में बुशर्ट के दामन को दोनों हाथों से ठीक करते हुए प्रवेश करते हैं और माइक्रोफोन के आगे खड़े हो जाते हैं।]

दयाराम—सज्जनो, आप जितनी संख्या में हमारी कंसर्ट देखने आये हैं, उसे देखकर हमारा बड़ा प्रोत्साहन हुआ है। इस कंसर्ट का आयोजन आसाम के भूकम्प-पीड़ितों की सहायता के लिए किया जा रहा है। हमें आशा है, जैसे आप लोगों ने आज पधारने की कृपा की

❀यहाँ दो पर्दों का होना आवश्यक है। बाहर के पर्दे पर उस क्लब का नाम होगा, जो यह नाटक करने जा रही है और अन्दर के पर्दे पर 'प्रयाग कलाकार समिति' लिखा होगा।

है वैसे ही आप कल भी आयेंगे और भूकम्प-पीड़ितों की सहायता के साथ सुन्दर अभिनय, कविता, नृत्य, नकल आदि देखने का फल भी पायेंगे। अभी कुछ ही देर में हम आपके सामने महाभारत का एक ऐसा दृश्य प्रस्तुत करेंगे जो एक ओर मानव की बर्बरता का द्योतक है तो दूसरी ओर मानव की उच्चता का परिचय देता है। उसके बाद रंगारंग प्रोग्राम होगा। अन्त में हमारी समिति के व्यवस्थापक श्री भगवन्त द्वारा लिखित एकांकी 'राजपूतानी' होगा जो उनके व्यक्तित्व ही की भाँति ओज भरा है। अभी कुछ धरण में पर्दा उठता है। तब तक श्री पीड़ित जी अपनी सुन्दर कविता से आपका मनोरंजन करेंगे। आइए पीड़ित जी।

[एक पतला-बुबला मोटे चश्मों वाला युवक माइक के पास आता है। हाथ में कई कविताएँ हैं कि यदि श्रोता और सुनने का अनुरोध करें तो बिच्छू न हो। वयाराम नेपथ्य में चले जाते हैं।]

पीड़ित जी—(बड़ी श्रद्धा से बालों की लटों को पीछे हटाते हुए) मेरी कविता में पीड़ा है, व्यथा है, दर्द है, विपाद है, अवगाद है। आशा है आप उसे पहचानेंगे और सराहेंगे। सज्जनों ! मैं कविता में किसी 'वाद' का अनुयाई नहीं ! कला को प्रचार का माध्यम मैं नहीं समझता। मेरे निकट कला की साधना कला के लिए होनी चाहिए। कला.....

दर्शकों में एक—भाषण नहीं, कविता.....

पीड़ित जी—(अचकचा कर) लीजिए, लीजिए, कविता लीजिए ! मेरी कविता का शीर्षक है—प्रीत का शीत—

(पढ़ते हैं।)

मर गये प्रीत में !

मर गये प्रीत में—प्रीत के शीत में।

पिछले दर्शकों में से एक—लिहाफ़ ओढ़ लेते।

(हाल में ठहाका गूँज उठता है।)

पीड़ित जी—मर गये, मर गये !

दर्शक—मर गये, मर गये !

पीड़ित जी—(जरा ऊँचे) सुनिए !

(दर्शकों में ठहाका)

पीड़ित जी—मर गये प्रीत में,

मर गये प्रीत के शीत में !

मर गये, मर गये !

दर्शक—मर गये, मर गये

पीड़ित जी—(ऊँची आवाज में)

तेरे नयनों की गर्मी कहाँ है यहाँ ?

एक ठण्डक में लिपटा है अपना जहाँ ।

मर गये शीत में,

मर गये प्रीत में,

दर्शक—मर गये, मर गये,

मर गये, मर गये,

पीड़ित जी—(जोर से) सुनिए ! बड़े दुःख की बात है कि आप लोगों में इतना धीरज नहीं कि.....

दर्शक—मर गये, मर गये,

मर गये, मर गये,

मर गये, मर गये,

श्री दयाराम सहसा नेपथ्य में से आते हैं और पीड़ित जी का हाथ धाम 'विंग' में ले जाते हैं । दर्शक जोर से ठहाका मार उठते हैं ।]

दयाराम—(फिर माइक के सामने आकर) सज्जनो ! मैं जानता हूँ आप नाटक देखने को उत्सुक हैं । लीजिए हम अभी आपके सामने नाटक प्रस्तुत करते हैं ।

[माइक उठाकर बाँयीं ओर रख देते हैं और 'विंग' में चले जाते हैं ।

उस समय जब उत्सुकता भरा सन्नाटा छा जाता है, दायीं ओर का विंग-आधार पीछे को हट जाता है और दयाराम नेपथ्य में पर्दा उठाने का आदेश देने को तैयार खड़े दिखायी देते हैं ।]

दयाराम—(पर्व के पीछे रंगमंच पर बैठे अभिनेताओं को सम्बोधित करते हुए) सब तैयार हैं ?

[ सेठ चुन्नीलाल गदा उठाये भीम बने रंग-मंच से भागे आते हैं ।]

चुन्नीलाल—(घबराये हुए) मैं कहता हूँ दयाराम जी, मेरा दिल तो बेतरह धड़क रहा है । आप मुझे चोवदार ही बना रहने देते ।

दयाराम—(घबरा कर) अरे आप कहाँ भाग आये ? चलिए-चलिए अपनी जगह पर जाकर बैठिए, पर्दा उठने वाला है । देखिए प्राम्पटर यहाँ बैठा है । (आधे विंग की ओर देखकर) देखो भाई, सोना नहीं । ठीक-ठीक प्राम्पट करना (सेठ जी की पीठ को थपथपाते हुए) लीजिए अब जाकर अपनी जगह पर बैठ जाइए । जब दुर्योधन द्रौपदी के सम्बन्ध में अप-शब्द कहे तो गदा को अपने दायें कन्धे पर सम्हाले, स्टेज को अपने गज-पदों से धँसाते, झूमते हुए उठिए और जब दुर्योधन को ललकारिए तो आपकी आवाज़ पिछली सीटों पर बैठे हुए लोगों के दिलों को धड़का दे ! चलिए । घबराइए नहीं । जम कर अपनी जगह पर बैठ जाइए ।

(चुन्नीलाल वापस चले जाते हैं । घंटी बजती है)

दयाराम—लीजिए तैयार ! साइलेंस ! पर्दा उठाओ !

[विंग अपनी जगह आ जाता है । पर्दा उठता है । दुर्योधन का दरबार लगा है । भीष्म पितामह, कर्ण, द्रोणाचार्य और दूसरे महारथी बैठे हैं । एक ओर हारे हुए पाण्डव नत-मस्तक बैठे हैं । कुछ क्षण बाब सूत-पुत्र सिर झुकाये प्रवेश करता है ।]

दुर्योधन—क्यों सूत-पुत्र, द्रौपदी को नहीं लाये । यों सिर झुकाये क्यों चले आ रहे हो ?

**सूत-पुत्र**—महा पराक्रमी, द्रौपदी एक-वस्त्रा हैं। दरबार में आने की उनकी स्थिति नहीं है।

**दुर्योधन**—(सक्रोध) इस बात का निर्णय करना तुम्हारा काम नहीं, तुम्हारा काम आदेश का पालन करना है।

**सूत-पुत्र**—महाराज, उन्होंने एक ऐसी आपत्ति की कि मैं उसका उत्तर न दे सका।

**दुर्योधन**—तुम्हें उत्तर देने के लिए नहीं, उसे सभा में घसीट कर लाने के लिए कहा गया था। वह हमारी दासी है, एक-वस्त्रा है या निरावस्त्र, तुम्हारा कर्तव्य उसे सभा में घसीट लाना था।

**सूत-पुत्र**—महाराज, वह दासी होने से इन्कार करती हैं। जब महाराज युधिष्ठिर ने अपने आपको पहले हार दिया तो द्रौपदी को हारने का उन्हें क्या अधिकार रहा ?

**दुर्योधन**—वही अधिकार जो स्वामी को अपने भृत्य पर, पति को अपनी पत्नी पर होता है। जब उसके पाँचों पति हार गये तो उसका पृथक् अस्तित्व ही क्या रहा ? दुःशासन, जाओ ! इस कायर सूत-पुत्र के बस की यह बात नहीं। तुम द्रौपदी की चोटी पकड़ कर उसे घसीटते हुए हमारे दरबार में उपस्थित करो। दारि होकर उसकी यह स्पर्धा ! उसकी धृष्टता का हम उचित दंड देंगे। वह हमारी दासी है और हम उसके साथ जैसा चाहेंगे व्यवहार करेंगे। उसने एक बार अपने महल की खिड़की में बैठे हमारा अपमान किया था। आज हम उसे इस भरे दरबार में अपनी इस बायीं जंघा पर बैठाकर उससे पूछेंगे।.....

**युग्नीलाल**—(क्रोध से उठ कर, गदा को अपने दाहिने हाथ में उठाकर हवा में लहराते हुए) दुर्योधन ! षंड !... (एक पग आगे बढ़ते हैं।) पाषंड !.....अ.....अ..... (संवाद भूल जाते हैं। फिर घबराकर एक कदम पीछे रखते हैं।) दुर्योधन ! (एक पग और पीछे हटते हैं) षंड ! (एक पग और पीछे हटते हैं) पाषंड !... (खांसते हैं, एक पग

और पीछे हट कर प्राम्पटर से पूछते हैं) अरे भाई प्राम्पटर, क्या है ?.....

[ विंग एक ओर हट जाता है । प्राम्पटर स्टूल पर बैठे जल्दी-जल्दी पुस्तक से पृष्ठ उलटता दिखाई देता है । ]

प्राम्पटर—एक बार फिर यही बोल दो !

चुन्नीलाल—(फिर एक पग बढ़ते हुए और गदा को हवा में हिलाते हुए) दुर्योधन.....पंड !.....पापंड ! (फिर खाँसते हुए और पीछे हटते हुए) अरे भाई प्राम्पटर बताओ भी ।

( प्राम्पटर घबराया हुआ पृष्ठ उलट रहा है । )

चुन्नीलाल—(फिर आगे बढ़ कर अजीब घबराये हुए स्वर में) दुर्योधन, पंड !.....पापंड !

प्राम्पटर—(जल्दी से) ब्रँके में पदाघात.....

चुन्नीलाल—(जोर से स्टेज पर पाँव पटकते हुए) ब्रँकेट में पदाघात !

[ विंग अपनी जगह आ जाता है । स्टेज पर सेठ जी के पैर पटकते ही दर्शक जोर से ठहाका मार उठते हैं । अचानक सेठ जी को पार्ट याद हो आता है । ]

चुन्नीलाल—(गदा को हवा में लहराते हुए, जल्दी-जल्दी सम्वाद बोलते हैं) यदि मैंने लेगी इस जंघा को अपनी इस गदा के प्रबल प्रहार से (फिर भूल जाते हैं और एक पग पीछे हटते हुए कहते हैं) प्रबल प्रहार से (खाँसते हैं) प्रबल प्रहार से (फिर खाँसते हैं, प्राम्पटर से) अरे प्राम्पटर क्या है ? (फिर आगे बढ़ते हैं ।) अपनी इस गदा के प्रबल प्रहार से.....

[ दर्शक हँसी के मारे लोट-पोट हो जाते हैं । सीटियाँ बजाते हैं । तालियाँ पीटते हैं और फर्श पर जूते घिसते हैं । ]

चुन्नीलाल—(रुआसी आवाज में चीखते हुए) मैंने तो पहले ही

कहा था कि मुझे चोबदार ही बना रहने दो । मुझसे यह भीम का पार्ट न होगा । कहने लगे नहीं, तू ही मोटा है, तू बना-बनाया भीम है ।

[ लोग और जोर से हँसते हैं, हाल ठहाकों से फटा पड़ता है । ]

चुन्नलाल—गदा को हवा में लहराते हुए ) जी चाहता है कि इस गदा से अपना और इस ग्राम्पटर का गिर फोड़ दूँ । इन सब दरबारियों की गर्दनें तोड़ दूँ । और स्टेज को चूर्ण-विचूर्ण कर दूँ ।

[ जोर से गदा घुमा कर स्टेज पर मारते हैं । अन्दर से खाली गदा एक दम पिचक जाती है । दर्शकों का एक और ठहाका गूँजता है । विंग एक ओर को जरा सा हट जाता है । ]

दयाराम—(घबराये हुए चिल्लाते हैं ।) पर्दा गिराओ । पर्दा गिराओ !!

[ पर्दा गिर जाता है । विंग का भाग उसी प्रकार हटा रहता है । भगवन्त सिर को दोनों हाथों से पकड़े बाल नोचते दिखायी देते हैं । ]

भगवन्त—ओफ, ओफ ! इस बलवीर कम्बख्त ने बीमार होकर सारी कंसर्ट चौपट कर दी ।

दयाराम—घबराने से काम न चलेगा । मैं बाहर जाकर दर्शकों को व्यस्त रखता हूँ । तुम अफीमचियों की नकल करने वालों को तैयार रखो । और देखो कविता फविता से काम न चलेगा । दर्शकों का मूड बिगड़ा हुआ है । नकल के बाद मृदुला घोष.....

भगवन्त—(चिढ़चिढ़े स्वर में) कहाँ है मृदुला घोष ? कहीं घर में बैठी कंधी पट्टी कर रही होगी । इन कम्बख्तों की यही तो मुसीबत है । पासों के लिए सारे मुहल्ले को पास दिला दिये और काम के वक्त.....

(जनता का ठहाका, शोर और सीटियाँ)

दयाराम—घबराओ नहीं, अफीमचियों को तैयार रखो । वे पर्दे के बाहर नकल करेंगे । इतने में 'राजपूतानी' के पात्रों को भेज दो !

विंग अपनी जगह आ जाता है । दयाराम पहले की अपेक्षा कुछ

अधिक घबराहट में बुशर्ट का दामन ही नहीं, कालर भी ठीक करते हुए पदों के बाहर माईक के पास आते हैं ।]

दयाराम—सज्जनो ! हमें बड़ा खेद है कि हमारी समिति के मुख्य कलाकार श्री बलबीर के अचानक बीमार हो जाने और नाटक की भूमिकाओं को इधर-उधर बदलने से हमारा यह नाटक गड़बड़ हो गया । खेद ही नहीं, हमें इसका परम-शोक है । आपकी उदारता से हम आशा करते हैं कि आप हमारी इस त्रुटि को क्षमा करेंगे । कुछ देर बाद हम अपना अोज-पूर्ण एवांकी “राजपूतानी” प्रस्तुत करेंगे जो इस नाटक की कमी पूरी कर देगा । उसके बाद नाचने-गाने का बड़ा अच्छा प्रोग्राम होगा । इस बीच में आप एक अफ्रीमचियों की नकल सुनिए ।

( चले जाते हैं—कुछ क्षण बाद फिर आते हैं । )

दयाराम—हमें खेद है कि अफ्रीमचियों की नकल करने वाले कहीं सचमुच अफ्रीम खा कर पिनक में सो गये हैं ।

( दर्शकों में जोर का ठहाका )

—लेकिन आशा की जाती है कि अन्त में वे पहुँच जायेंगे और आप उनकी नकल सुनकर ठहाके मारते हुए हाल से बाहर जायेंगे ।

दर्शकों में से एक—हम अब भी ठहाके मार रहे हैं ।

[ दर्शकों का ठहाका । दयाराम जल्दी से अन्दर चले जाते हैं—आधा विंग एक ओर हट जाता है । रामकिशन चौबदार का ‘असा’\* लिए खड़ा है । ]

दयाराम—देख रे किशुन भूलना नहीं पाट ।

किशुन—आप एका तनिक फिकिर न करें बाबू जी । हम सब ठीक कर देवेई ।

( घन्टी बजती है । )

दयाराम—(स्टेज की ओर देखते हुए) क्यों भाई सब तैयार है । ठीक है । साइलेंस ! पर्दा उठाओ !

---

\*चांदी के पत्रों से मढ़ी लाठी ।

[ पर्दा उठता है और बिग अपनी जगह पर आ जाता है । राजा मानसिंह का अंतःपुर । महारानी सक्रोध प्रवेश करती है । पीछे-पीछे एक दासी लगभग भागती सी आती है ।

दासी—महारानी क्षमा...महा... !

महारानी—(मुड़कर क्रोध से) एक नीच दासी का यह साहस कि वह महारानी के मुंह आये । जिस बरतन में खाये उसी में छेद करे । महाराज ने उसके गाने से प्रसन्न होकर उसे सोने की माला क्या इनाम दी कि उसका मिर फिर गया । उसे ध्यान न रहा कि वह दासी है । जिसे मेरी एक हल्की सी दृष्टि दीवारों में जिन्दा चुनवा सकती है, कुत्तों से नुचवा सकती है, पहाड़ की चोटी से गिरवा.....

दासी—महारानी क्षमा...मालती को क्षमा कर दें । महारानी ! उसे एक अवसर दें ।

महारानी—(मुड़कर) कि वह अपने विपैले दांतों को और भी तेज कर ले । शायद तुने इसीलिए उसकी सिफारिश की थी कि तू उसके द्वारा इस महल के शिखर पर जा बैठे । उसकी चंचलता को देखकर मेरा माथा ठनका था, पर तेरी गिड़गिड़ाहट ने मेरे विवेक को धुंधला दिया । इससे पहले कि महाराज को पता चले उसके सौंदर्य की बोटियाँ कुत्ते नोच चुके होंगे ।

(तेज-तेज निकल जाती है ।)

दासी—महारानी क्षमा ! महारानी क्षमा !

[ महारानी के पीछे पीछे निकल जाती है और उसकी गिड़गिड़ाहट भरी क्षमा याचना धीरे-धीरे दूर हो जाती है । कुछ क्षण बाद तलवार हाथ में लिये राजा मानसिंह प्रवेश करते हैं । ]

मानसिंह—चोबदार.....चोबदार.....

किशुन—(राजा मानसिंह की तरह अकड़कर प्रवेश करता है और इसी अंदा में भूल जाता है कि उसे 'जी महाराज' कहना है ।) जो आदेश (निकट आकर) जो आदेश.....!

मानसिंह—(किशुन की इस हरकत पर झू-भंग करके) बता, मालती कहाँ है ?

किशुन—(इस घबराहट में कि उससे कुछ गलती हो गयी है, सम्भाव भूल जाता है) जो आदेश !

मानसिंह—(क्रोध से) हम कहते हैं कि बता मालती कहाँ है ?

किशुन—(जिसे अपनी गलती का पता चल जाता है कि उसने 'जी महाराज' के स्थान पर 'जो आदेश' कहा है, अपनी गलती सुधार लेता है) जी महाराज ! जी महाराज !

(विंग पीछे हटता है ।)

प्राम्पटर—(पुस्तक हाथ में लिए संकेत करता है ।) मालती को महारानी ने भूगृह में वन्द करने का आदेश दिया है ।

किशुन—(देखता है कि प्राम्पटर कुछ कह रहा है, पर घबराहट में समझता नहीं) जी महाराज !

[ विंग में दयाराम, भगवन्त और अन्य अभिनेता परेशानी में इकट्ठे हो रहे हैं । ]

मानसिंह—(रंगमंच पर) गदहे, हम पूछते हैं, मालती कहाँ है । जी महाराज, जी महाराज रटे जा रहा है । उल्लू कहीं का । बता, मालती कहाँ है ?

किशुन—(क्रोध से अकड़ जाता है) हे देखो ! जबान सम्हारि के बाति करो । बड़े महाराज बने फिरत हैं । देई का एक रुपया और सान इतनी गाँठत हैं । जाओ नहीं बताइत । हम कहित हैं, गारी दहो तो मालुम होय पै भी न बताउब और उठाकर नीचे फेंक देब ।

(दर्शकों के ठहाके गूँजने लगते हैं ।)

दयाराम—(घबराहट में) पर्दा गिराओ ! पर्दा गिराओ !!

[ विंग अपनी जगह आ जाता है । पर्दा गिर जाता है । कुछ क्षण रोजनी पर्दे पर अंकित 'प्रयाग कलाकार समिति' के सुनहरी अक्षरों पर केन्द्रित रहती है, फिर बड़ा पर्दा गिरता है । ]

# लिपस्टिक की मुस्कान

विष्णु प्रभाकर

## पात्र-परिचय

रीता—एक अति आधुनिक नारी, आयु लगभग २४ वर्ष

राकेश—रीता के पति, २६ वर्ष

आया—बेबी की आया, २०-२२ वर्ष

नर्स—हस्पताल की नर्स, २५ वर्ष

बेबी—रीता व राकेश का पुत्र, २-३ वर्ष

चन्दा—रीता की परिचिता, २४-२५ वर्ष

सिपाही इत्यदि ।

## पहला दृश्य

[रंगमंच पर एक अति आधुनिक नारी के निजी कमरे का दृश्य जिसका एक द्वार बाथ रूम में जाता है, दूसरा शयन कक्ष में, तीसरा बरामदे में, बाहर से उसी से आना-जाना होता है। एक सुन्दर शृंगार-मेज लगी है, शीशे के आस-पास प्रसाधन की सामग्री बिखरी है, नैल पालिश, लिपस्टिक, पाउडर, तेल, कन्धे, रिबन, रुज, हेयरपिन, यू० डी० कॉलीन आदि आदि। दूसरी ओर कपड़ों की ड्राअर हैं। वह भी खुली है, कुछ कपड़े पास एक तिपाई पर रखे हैं, नीचे शू और सैंडल पड़ी हैं। समय संध्या का है। सितम्बर का अन्त है, पर गर्मी अभी है। इसलिये पंखा चल रहा है, वस्त्र हिलते हैं, कमरे की सजावट साहबी है। फ़र्श पर कालीन है, दरवाजों और खिड़कियों पर नीले पर्दे हैं। शृंगार-मेज के ठीक सामने एक कदावर शीशा है, पर्दा उठने पर रंगमंच पर कोई व्यक्ति नहीं है, पर दूसरे ही क्षण एक युवती बड़ी अदा से प्रवेश करती है, शरीर स्वस्थ और मुडौल, रंग गोरा, उसने गरारा और कुर्ता पहना है, दुपट्टा गले में पड़ा है, बाल कटे हैं जो नाक की सीध में दो ओर बंट कर दोनों कानों के पास जाकर घुंघराले बनाये गए हैं, भवें धनुषाकार बनी हैं, नाक कुछ लम्बी लगती है, नेत्र लम्बे हैं और सलोना स्याही की दो रेखायें कानों की ओर बढ़ती बढ़ती रास्ते में खो गई हैं, होठ खुले हैं और लिपस्टिक के कारण उनका रंग गहरा रक्तिम है, उंगलियों में डायमंड की त्रिभुजाकार अंगूठियाँ हैं, नाखून बहुत लम्बे हैं, और पालिश के कारण आरक्त हैं, कानों में

मत्स्यारकार कर्णफूल हैं । गले में श्वेत मोतियों का हार और कलाई पर रिस्टवाच है । वह पुकारती तथा गरारे को हाथों में सहेजे आती है ।]

रीता—(बनावटी शूँजती वारीक आवाज) आया...आया—

[आकर शीशे के सामने खड़ी हो जाती है और अपने शृंगार की परख करती है, कंधे पर बालों को नजाकत से छूती है, पाउडर उठाकर हल्के से छुआती है, फिर रुज का प्रयोग करती है, गुनगुनाती रहती है, फिर पुकारती है]

रीता—आया . आया (क्रोध उभर आता है ।)

आया—(दूर से आता स्वर) आती हूँ मेम साहब, (पास आकर) जी मेमसाहब, (आया भी युवती है, रंग सलोना और नक्श तीखे हैं, लम्बी बेली में एक फूल लगा है, ओठों पर हल्का लिपस्टिक है, साड़ी पहने है जिसका एक छोर कमर पर झूलता है, पेट पर पेटी सी बंधी है ।)

रीता—कहाँ मर जाती है, जाकर ? कितनी बार कहा कि मुझे आज जल्दी जाना है, इन्टरव्यू का वक्त आठ बजे है और अब पाँच बज चुके हैं और आज ही साढ़े पाँच पर मेकअप पर भाषण होगा और (इसी समय बेबी भागता हुआ आता है, वह सुन्दर स्वस्थ और चतुर बालक है । हरे रंग की नीकर, कमीज पहने है, वह सीधा आकर रीता से खिपट जाता है, रीता साँप ने काटा हो ऐसे काँप उठती है )

बेबी—ममी...ममी...

रीता—(बढ़ता कोप) यू इडियट, गधा (एकदम बेबी को पीछे धकेलती है) सारी ड्रेस खराब कर दी । (बेबी फर्श पर गिरते कुर्सी से टकराता है और चीखता है, आया दौड़ कर उठाती है) आया यह क्या है, बेबी इस वक्त यहाँ कैसे आया ? तुमको कितनी बार समझाया...

आया—(नम्र स्वर) मेम साहब ! बेबी मेरे पास था, (साथ-साथ बेबी को उठाकर पुचकारती रहती है ।) मैं उसे बाहर ले जाने की तैयारी

कर रही थी, न...न...बेबी...कोई बात नहीं...न...न...तुम शेर बच्चे हो... (बेबी कंधे से चिपट कर चुप होने लगता है ।)

रीता—(चीख कर) शट अप यू फूल, मैं कहती हूँ वह यहाँ क्यों आया ? तुमने उसे यहाँ क्यों आने दिया । तुम्हें पता नहीं...

आया—(पूर्वतः) मेम साहब आपने मुझे पुकारा...

रीता—मैंने तुम्हें पुकारा था, पर बेबी को नहीं, तुम्हें मालूम है कि बेबी को मेरे पास किस वक्त लाना होता है और किस वक्त नहीं.....

आया—मेम साहब...

रीता—मेम साहब, मेम साहब की क्या रट लगाई है । खबरदार जो अब कभी मुझे मेम साहब कहा...

आया—मेम साहब...

रीता—(चीखकर) चली जाओ, ले जाओ बेबी को, इतनी देर से खड़ी-खड़ी क्या कर रही है । ले जा इसको, मुझे ड्रेस बदलनी पड़ेगी, इन्टरव्यू के लिए जाना है और कम्बल बेबी ने सारा मूड बिगाड़ दिया । उसने इतना सिर चढ़ाया है कि हमेशा पल्ले से बंधा फिरता है, बिगाड़ दिया ।

(राकेश का प्रवेश : युवक है, सफेद पतलून और कोट पहिने है, टाई का रंग गहरा लाल है । चश्मा बिना फ्रेम का व काला है । बाल बीच में से कटे हैं, दो ओर से दो कुण्डल माथे पर झूम आए हैं । हाथ में फॉस्ट हैंड लिये हैं । काफ़ेलेवर का काला शू पहने हैं । तेजी से प्रवेश करता आया से टकरा जाता है ।)

राकेश—ओह यू...मेरा ड्रेस...आया तुम देखकर नहीं चपतीं, इस उमर में...

रीता—अन्धी हो गई है, कुछ पता नहीं इसका... (आया बिना बोले चली जाती है ।)

राकेश—बाई गॉड, इस उमर में सब अंधे हो जाते हैं ।

रीता—शट अप, तुम भी बेवकूफ...

राकेश—बाई गाँड, डियर यू आर स्प्लेन्डिड (नजाकत से) आज कहाँ जाना है ? ओह ! ओह ! याद आया, आज तो फिल्म डायरेक्टर से इन्टरव्यू है । मैं कहता हूँ तुम यकीनन हीरोइन के रोल के लिए चुनी जाओगी, इन्टरव्यू तो फ़ारमल है, तुमको देखते ही...

रीता—शट अप, मैं कहती हूँ मैं इस आया को निकाल कर छोड़ूंगी, यह नहीं जानती कि...

राकेश—आया को निकालोगी बाई गाँड, क्यों ? फिर बेबी को...

रीता—शट अप, बेबी ! बेबी ! इसके मारे नाक में दम है ।

राकेश—क्या ? बेबी ने क्या कर दिया ?

रीता—क्या कर दिया, सारी ड्रेस खराब कर दी । आज मेकअप पर सचित्र भाषण था । आया इतना भी सहीँ समझती कि बेबी को किस वक्त मेरे पास आना चाहिए । इस वक्त उसे छोड़ दिया और वह आकर मुझ से चिपट गया ।

राकेश—बाई गाँड, तुम से चिपट गया, नामाकूल ढाई वर्ष का हो गया और उसे यह पता नहीं कि ममी से चिपटने का कौनसा वक्त है । आजकल के बच्चे असल में विद्रोही होते हैं । जनतन्त्र के ज़माने में पैदा हुए हैं न ? लेकिन बाई गाँड, तुम इस वक्त सुन्दरता का वन्डरफुल मॉडल लग रही हो.....

रीता—शट अप, तुम कुछ नहीं समझते । गरारे की सब क्रीजें मसली गईं, उसमें सलवटें पड़ गईं, धब्बे लग गए । आया से लाख बार कहा कि बेबी मेरे पास सवेरे नाश्ते पर, दोपहर को खाने के वक्त और शाम को चाय के समय लाये । इतना क्या कम है, आया फिर किस लिए है ? ओह ! माई ड्रेस.....कितनी देर में मेकअप किया था,

मिस भरुचा कहती थी कि इस डाइरेक्टर की आंखें बड़ी तेज होती हैं ।

राकेश—बाई गाँड, यह डाइरेक्टर नाम का जन्तु पूरा गीध होता है ।

रीता—(एकदम) शट अप, तुम लंग्वेज भी नहीं जानते । डाइरेक्टर ड्रेस देखते ही बना देने हैं कि इस ड्रेस को किस किस ने कितनी बार छुआ है ?

राकेश—ड्रेस.....बाई गाँड, वे तो तुम्हें देखकर ही बता सकते हैं लेकिन..... बेबी को छूने का मतलब तो ममता है ।

रीता—शट अप, मैं तुमसे बहस करना नहीं चाहती, तुम कभी कुछ नहीं पढ़ते । वस चीफ मेन्टीमैन्ट और इमीशन्स की बात करते हो । बेबी के छूने का मतलब ममता है, पर तुम जानते हो तुम्हारे ऋषि-मुनियों ने क्या लिखा है !

राकेश—बाई गाँड, डार्लिंग मैं बिल्कुल मूर्ख हूँ, पर.....

रीता—वै हो तभी तो बार-बार पर-पर करते हो । मेरे पास तुमसे बात करने को वक्त नहीं है । मुझे अभी मिस बवेजा के पास जाना है । नहीं तो मैं तुम्हें बताती कि स्वामी दयानन्द सरस्वती तक ने लिखा है कि आठ दिन बाद ही बच्चे को माँ के पास से हटा लेना चाहिये, और...

राकेश—ठीक है, ठीक है, डार्लिंग तुम्हारे प्यारे मुख से स्वामी दयानन्द का भाषण मैं इतनी बार सुन चुका हूँ, कि मुझे जबानी याद है.....

रीता—शट अप, बीच में बोलने की तुम्हारी आदत कभी बन्द नहीं होगी । मैं कहती हूँ कि आजकल बच्चों की बिल्कुल जरूरत नहीं है । विवाह की भी जरूरत नहीं है । विवाह करो, अंधाधुंध संतान पैदा करो, जीवन की सांसें पूरी करो, और गुलामी में मर जाओ, यह कोई जिन्दगी है ।

राकेश—(जोर से ताली बजाकर) हेयर, हेयर, मिसेज रीता जिन्दाबाद !

रीता—शट अप, यू क्लाउन ! राकेश, तुम इतने गंभीर विचारों के बीच मज़ाक कैसे करने लगते हो ।

राकेश—आई एम वैरी सॉरी, मैंने सोचा था कि आप शायद फिल्म डायरेक्टर के सामने दिये जाने वाले भाषण की रिहर्सल कर रही हैं, वैसे ये विचार स्वामी रामतीर्थ के हैं । बाई गाँड, रीता तुम आर्य धर्म की सबसे बड़ी चैंपियन हो, (इसी समय फोन की घंटी बजती है) राकेश शीघ्रता से आगे बढ़कर उसे उठाता है) लीजिये फ़ोन पर कोई आया, (धीरे से) पधारिये साहब, (जोर से) राकेश स्पीकिंग, .....जी..... किसको, जरा जोर से बोलिये, जी हाँ, हाँ, वे घर पर ही तशरीफ़ रखती हैं, (रीता से) आपकी जल्दत है डार्लिंग ।

रीता—(फोन लेकर) हलो...ओ...शैली, आई एम वेरी सॉरी, बस आध घंटा और । ड्रैस बदलनी है...नहीं बस गरारा...क्या बताऊँ कम्बल बेबी ने आकर सब चौपट कर दिया । हाँ, हाँ, मुझे बहुत दुःख है, (एक दम चोगा पटक कर) इस बेबी ने, ओह इस बेबी के बच्चे ने आज मुझे नीचा दिखाया, मैं इसे.....(तेजी से बाहर जाती हुई) मुझे अब दूसरी ड्रैस पहननी होगी, कैंसी शानदार ड्रैस थी, ओह.....ओ.....

राकेश—(सांस खींचकर दोनों हाथ हवा में हिलाते हुए स्वगत) अब दूसरी ड्रैस पहननी होगी, कम्बल बेबी ने सारी ड्रैस खराब कर दी । माई गाँड, तुम रीता को कहाँ ले जाओगे । बेबी ने ड्रैस खराब कर दी, वाह, पाँच दिन बड़ी मुश्किल से दूध पिलाया होगा, आया ने पाला पोषा है नहीं तो.....अच्छा.....(कहता कहता बाहर जाता है, पर्दा गिरता है ।)

## दूसरा दृश्य

[वही कमरा, कुछ परिवर्तन के साथ, वही दृश्य, समय दोपहर से पूर्व रीता तेजी से कमरे में आती है, रूप वही, ड्रेस बदलती है, श्वेत सिल्क की साड़ी पहिने है, गले में श्वेत मोतियों की माला है, बांह खुली हैं, वक्ष पर चोली है, साड़ी का एक छोर कमर पर फंला है, पोछे पोछे, राकेश है, उसकी पैंट श्वेत, कोट काला और टाई लाल है, शेष अवस्था वही है।]

रीता—डियर, मैं सच कहती हूँ, मैंने कुमार क्लब में शामिल होने का फैसला कर लिया है। तुम कुमारिका क्लब में जाना चाहो तो मैं सिफारिश कर दूंगी। यह शादी का विचार कितना दकियानूसी है। सब इंसान साथी हैं। स्वतन्त्र साथी, अपनी इच्छा से मिले, अपनी इच्छा से अलग हुए, धर्म-वर्ण का भला इसमें क्या है। पश्चिम में कितनी परफेक्ट फैमिली लाइफ है। कोई किसी पर डिपेंड नहीं करता। बच्चों को स्टेट संभालती है, एक हमारी स्टेट है।.....

राकेश—(हंसकर) डियर, हमारी स्टेट अभी खुद बच्चा है,...

रीता—शट अप, तुम बिल्कुल ईडियट हो। देवी-देवताओं की तरह स्टेट भी कभी बच्चा नहीं होती। अपने नागरिकों को पालन-उसी का काम है, मैंने बेबी को.....

राकेश—बाई गॉड, बेबी को क्या.....

रीता—बेबी को मैंने स्टेट को सौंप दिया है।

राकेश—क्या मतलब, मैं समझा नहीं ?

रीता—तुम कभी कुछ समझते भी हो जो अब समझोगे। तुम्हें बच्चे पालने कहाँ पड़ते हैं। तुम मर्द लोग सब बोझ औरतों के सिर पर डाल देते हो, पर मैं कहती हूँ कि बुर्जुवा विचारों का जमाना लद गया।

राकेश—लेकिन डियर, तुम बेबी की बात कह रही थीं, तुमने उसके साथ क्या किया ?

रीता—शट अप, तुम फिर बीच में बोले। तुम्हारी आदत कभी नहीं सुधरती। अगर सुधरती तो कहीं अमेरिका और यूरोप में कलचरण अटैची बनकर घूमते। मैं सच कहती हूँ मैं इस मुल्क से तज़ आ गई हूँ। यह बाबा आदम के जमाने का देश कभी नहीं बदलता। एकदम कुदरत के विरुद्ध है। यहाँ के लोग ड्रेस पहिनेंगे तो सारा बदन ढक लेंगे, जैसे कोई बदसूरत चीज है जिसे ढकना ज़रूरी है। मैं कहती हूँ शरीर तभी सुडौल, सुन्दर रह सकता है जब उसके और प्रकृति के बीच कोई पर्दा न हो, जब सूर्य और चन्द्र की किरणों उसका सीधा आलिंगन करें.....

राकेश—मैं आदाब बजा लाता हूँ, मदाम, आप बिल्कुल ठीक फरमाती हैं पर बेबी.....

रीता—ओह, कैसे मूर्ख हो तुम राकेश, कैसे मौलिक आरिजनल विचार आ रहे थे, पर तुम बेबी को बीच में ले आए, कम्बख्त अब भी मेरा पीछा नहीं छोड़ता। मुझे मिस्टर खामा के स्टेज ड्रामे में हीरोइन ही नहीं बनना, उसे डायरेक्ट भी करना है। कितना शानदार ड्रामा है, लेकिन हिन्दी के नाटककार अभी तक पुराने विचारों से चिपटे हैं, वही सस्ती भावुकता, वही करुणा और आँसुओं की कहानी लिखते हैं, जीना तो वे जैसे जानते ही नहीं.....

राकेश—बिल्कुल नहीं जानते बेगम साहिबा, मैं आपसे बिल्कुल सहमत हूँ, मैं खुद इसी बात पर थीसिस लिख रहा हूँ, लेकिन बेबी...

रीता—डैम यूग्रर थोसिस एण्ड बेबी, मुझे, डिनर के लिए देर हो रही है। (पुकार कर) आया... (एकदम) ओह, आया अब कहाँ है ?

राकेश—बाई गाँड, मैं भी तो यही पूछता हूँ कि आया और बेबी कहाँ हैं ?

रीता—मुझसे पूछते हो। तुमने उसका दिमाग बिगाड़ दिया था। तुमने उससे घर की बातें कीं, मेरी बुराई की। मैंने उसे घर से निकाल दिया है।

राकेश—(चकित) क्या.....

रीता—आँखें क्या फाड़ते हो, मुझे उसे निकालने का पूरा अधिकार था।

राकेश—ओह बेगम.....

राकेश—बेगम !

राकेश—आई एम मॉरी, मदाम.....

रीता—नानमेन्स, मैं न बेगम हूँ न मदाम, मैं आज से मिस रीता हूँ, समझे। मैं कुमार क्लब की सदस्या बन गई हूँ। कुमार क्लब में सब कुमारियाँ होती हैं, जैसे सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी विवाहिता होने पर भी मिस रहती है। अच्छा मैं अब जा रही हूँ, बाई, बाई, डालिंग... (जाने को द्वार की ओर बढ़ती है।)

राकेश—(एकदम) लेकिन डियर.....

रीता—ओह डियर नहीं.....

राकेश—(एकदम) जो कुछ भी तुम हो मैं जानना चाहता हूँ, तुम ने बेबी को कहाँ भेजा है ?

रीता—मैंने उसे वहीं भेजा है, जहाँ उसे होना चाहिए था। मुझे उसे भेजने का अधिकार था।

राकेश—(पूर्वतः) अधिकार की बात पीछे होगी ; मैं उस जगह का नाम पूछता हूँ।

रीता—(सहसा हँस कर) नाराज हो गए डियर । डियर वह हम दोनों के मार्ग की बाधा बना हुआ है, मैंने उसे स्टेट को सौंप दिया है ।

राकेश—(आगे बढ़ कर) स्टेट को ! रीता साफ-साफ बताओ ।

रीता—मैं साफ बता रही हूँ, तुम बराबर बीच में टोक देते हो । मैंने उसे बटनगंज बेबी नर्सिंग होम में दाखिल करा दिया है ।

राकेश—(चौंक कर) बटनगंज बेबी नर्सिंग होम !

रीता—हाँ, हाँ, बटनगंज बेबी नर्सिंग होम, कितनी बार बताना होगा ? मैं तुम्हारी नौकरानी नहीं हूँ । आई एम परफैक्टली इण्डिपेंडेंट । मुझे देर हो रही है ।

राकेश—(खोया-सा) बटनगंज बेबी नर्सिंग होम पर..... पर वह तो लावारिस बच्चों का हस्पताल है ।

रीता—बच्चे सभी लावारिस होते हैं, उनकी वारिस स्टेट है । अब स्टेट उसे पालेगी । तुम इतना भी नहीं समझते.....

(तेजी से जाती है । राकेश धम्म से गिर पड़ता है ।)

राकेश—माई गॉड, यह क्या किया रीता ने, बेबी को लावारिस हस्पताल में पहुँचा दिया । वह लावारिस है.....मेरे रहते वह लावारिस है.....

(रीता फिर तेजी से आती है)

रीता—मेरा पर्स, ओह जल्दी में सब काम खराब हो जाते हैं, डियर ज़रा मिस शहरयार को फोन तो करना, मैं अभी चल रही हूँ । वह मुझे लिफ्ट देगी । तुम तो एक कार खरीदने लायक भी नहीं । न मालूम फिर शादी क्यों की ?

राकेश—(बिना सुने) मैं कहता हूँ रीता, तुमने बेबी को नर्सिंग होम में क्यों भेजा ?

रीता—मैं कहती हूँ, शट अप, तुम्हें मेरी बातों में दखल देने का कोई अधिकार नहीं है ।

राकेश—रीता, वहाँ बेबी.....

रीता—वहाँ बेबी क्या ? वहाँ यहाँ से अच्छा इन्तजाम है, वहाँ ट्रेंड नर्स हैं, वे समय पर बाथ देती हैं, समय पर दूध देती हैं ।

राकेश—मैं जानता हूँ, वहाँ बाथ का प्रबन्ध है, पर नर्सों के बच्चों के लिए, दूध मिलता है, पर नर्सों के बच्चों को.....

रीता—ओह राकेश...राकेश...तुम इतना भी नहीं जानते बुद्ध कि नर्सों के बच्चे नहीं होते.....

राकेश—ओह मदाम...मदाम.....

रीता—मिस रीता कहो, मिस रीता, तुमसे कितनी बार कहा... और हाँ डालिंग, आया तो अब चली गई और आज चाय पर आ रहे हैं मिस शैली और मिस्टर खामा । रिहर्सल में जाने से पहिले हम यहाँ चाय पियेंगे और हाँ तुम भी रहना, अच्छा डालिंग, ...—

(राकेश सहसा छींकता है ।)

राकेश—(छींकता हुआ) लेकिन मदाम, मुझे जुकाम हो रहा है, मैं.....

रीता—(चौंक कर) जुकाम, कोल्ड, ओ डियर, डियर, यह तो छूत की बीमारी है । तुमने ठीक वक्त पर बता दिया, चाय का प्रबन्ध होटल में करना पड़ेगा । आर्डर दिये देती हूँ । पर.....पर चैक पर दस्तखत तो कर दो डालिंग । (वह छींकता है), न.....न रहने दो.....फ्लू के कीड़े चिपट जायेंगे । डाक्टर कहते हैं कि एक इंच के सौवें हिस्से में करोड़ों कीड़े आते हैं । डालिंग, जब तक तुम्हारा फ्लू ठीक नहीं होता तब तक मैं होटल में रहूँगी, .....(दूर जाकर) क्यों डालिंग, तुम्हारे लिये एम्बुलैन्स आर्डर कर दूँ, छूत की बीमारियों के हस्पताल में चले जाना,.....हाँ यह ठीक है, बाई, बाई डालिंग । डिनर को देर हो गई, (जाती हुई) पर कोई डर नहीं, आध घण्टा लेट हो जाना तो फ्रेंशन है, (जाती है) ।

राकेश—(गहरा निःश्वास) छींक, जुकाम, होटल, एम्बूलेंस, डिनर... डैम इट, नान्सैन्स क्या मतलब है इन शब्दों का ? बेइमानी दरिन्दों की भाषा, मेरी बीबी बिल्कुल हैवान है, दरिन्दे से भी खूंखार। बेबी लावारिस नर्सिंग होम में और मैं छूत की बीमारियों के हस्पताल में खूब। लेकिन कुछ भी हो सबसे पहिले मुझे नर्सिंग होम जाना चाहिए, पर वहाँ तो मुझे कोई घुसने भी नहीं देगा, वहाँ तो कोई यह भी नहीं जानता कि कौनसा बच्चा कौन रख गया है और माना कि मैं चला भी गया तो लोग पहिचान लेंगे, ...ओह कितनी बेइज्जती होगी, बाई गॉड, कितने शर्म की बात है। माँ-बाप के रहते बेबी लावारिस कहलाये...

(नर्स का प्रवेश)

नर्स—सर मदाम, रीता कहाँ है ?

राकेश—(बिना देखे) जहन्नुम में, (देख कर) कौन, ओह बाई गॉड नर्स, तुम यहाँ कैसे आई ?

नर्स—हम एम्बूलेंस लेकर आया है, यहाँ कोई छूत का बीमार है।

राकेश—छूत का बीमार वह क्या बीमारी होती है ?

नर्स—ओह, तुम मज़ाक करना माँगटा, छूत की बीमारी होता, जैसे चेचक.....

राकेश—चेचक हमारे पड़ोस में भी नहीं है।

नर्स—डिप्थीरिया।

राकेश—नो...नो...डिप्थीरिया।

नर्स—हैजा।

राकेश—ओह, ओह, हैजा, ना नर्स, यहाँ कोई हैजे का बीमार नहीं है।

नर्स—(चिढ़ कर) तो प्लेग होगी।

राकेश—नो नो नो...यूअर गैस इज एक्सोल्यूटली रोंग, माई डियर.....

नर्स—शट अप, माई डियर किसे कहते हैं ? मज़ाक करना मॉगटा...

राकेश—ओह वाई गॉड, आई एम सॉरी, मेरा मतलब यह नहीं है । माफ़ करना आप ग़लत आ गई हैं । यह मेरा घर है, और मेरा नाम है मिस्टर राकेश राजेन ।

नर्स—बेशक, बेशक यही बोला था । मदाम राकेश ने फ़ोन किया था कि मिस्टर राकेश छूत की बीमारी से डाउन हैं, उन्हें शीघ्र हस्पताल पहुँचाया जाये । मैं एम्बुलेंस और घर डिसइनफ़ेक्ट करने का सामान लेकर तुरन्त आई हूँ ।

(तभी हस्पताल के कर्मचारी पम्प और फ़िनाइल लेकर आते हैं ।)

राकेश—तो फिर ठीक है, घर को डिसइनफ़ेक्ट कर दीजिये, और साथ में मुझे भी ।

नर्स—तुम तो फिर मज़ाक.....

राकेश—मज़ाक नहीं नर्स, मुझे जुकाम हुआ है, (छींकता है)

नर्स—आपको ज़ुकाम है ?

राकेश—जी हाँ, इससे बड़ी बीमारी इस घर में नहीं ।

नर्स—ओह तो यह बात है । जुकाम के लिये एम्बुलेंस मॉगई है, हमको इस प्रकार तंग किया जाता है बाई गॉड ।

राकेश—बाई गॉड.....

नर्स—दिस इज़ क्रिमिनल, यह जुर्म है । मैं रिपोर्ट करूँगी । मैं मादम राजेन और मादम राकेश.....

राकेश—माफ़ करना नर्स, राकेश राजेन एक ही नाम है ।

नर्स—एक या दो उसे हर्जाना देना होगा, पचास एम्बुलेंस के और धोखा देने के अलग, (कर्मचारियों से) चलो चलो, मैं अभी रिपोर्ट करती हूँ । (सब जाते हैं)

राकेश—(पुकार कर) अजी घर तो डिसइनफेक्ट करती जाओ, सुनिये तो...गई, बाई गॉड, मुफ्त में मच्छर मर जाते (साँस लेकर) पर मदाम भी खूब है, मेरे लिए कितनी जल्दी एम्ब्यूलेंस मिल गई। कौन कहता है कि वह काम नहीं करती। बेबी को नर्सिंग होम में भेजा। पति को छूत की बीमारियों के हस्पताल में और खुद डिनर खाने गई...

(आया का प्रवेश)

आया—सर !

राकेश—अब कौन आया यमदूत, (देखकर एकदम हर्ष से) ओह आया, तुम, तुम कैसे आई ? तुम्हें मदाम ने डिसमिस कर दिया, मुझे अफ़सोस है।

आया—मुझे किसी ने डिसमिस नहीं किया। मैं खुद गई हूँ, मैं ऐसी.....

राकेश—बाई गॉड, ऐसी-वैसी की बात छोड़ो, बेबी को कैसे निकाला जाय ?

आया—मैंने पुलिस में रिपोर्ट कर दी है।

राकेश—किस बात की ?

आया—इस बात की कि आप लोगों ने जान-बूझ कर अपने बेबी को लावारिसों के नर्सिंग होम में भेजा है।

राकेश—(घबरा कर) बाई गॉड।

आया—बेशक, मैं देखूँगी मदाम अब बच कर कहाँ जाती है ? मैं बदला लूँगी, बेबी को मैंने पाला है। मैं उसे इस तरह तड़पते नहीं देख सकती, मैं उसे बचाऊँगी और मदाम को . . . .

राकेश—(हर्ष से चिल्लाकर बीच में) बाई गॉड आया तुमने शानदार काम किया, एकदम शानदार। मैं तुम्हें इनाम दूँगा, मुझे रास्ता

मिल गया । मैं अभी पुलिस को फोन करता हूँ कि बेबी सबेरे से लापता है । जो उसका पता देगा उसे मैं सौ रुपया इनाम दूंगा । (फ़ोन उठाकर) पर नहीं, फोन नहीं, मुझे खुद जाना चाहिए, मैं अभी जाता हूँ, अभी... नर्स तुम्हें इनाम मिलेगा...

आया—(चकित) पर सुनिए तो...

राकेश—(जाता हुआ) यहाँ कोई सर है न पैर, मैं राकेश हूँ, मैं अभी बेबी को लेकर आता हूँ ।

आया—(जाती हुई) पर सुनिए तो मिस्टर राकेश, सुनिए तो बेबी थाने में है, ओह मुझे चलना चाहिए । कहीं बात बिगड़ न जाये...

[जाती है, परदा गिरता है ।]

## तीसरा दृश्य

[वही पुराना कमरा, सजावट में अन्तर है, ड्राअर और अलमारियाँ सब बन्द हैं। पर्दा उठने पर रीता कुछ चिन्तित भाव से इधर-उधर घूम रही है। ब्रिजिश कमीज पहने हुए है। मुख उसका लाल है। उसे रह-रह कर छींकें आ रही हैं। वह बार-बार रुमाल से नाक पोंछती है, फिर बेप सूँघती है, पर छींक फिर भी आ जाती है]

रीता—(स्वगत) ओह ! अब राइडिङ्ग के लिए कैसे जा सकती हूँ ? कम्बुख्त जुकाम भी अभी होने को था...यह सब राकेश की ही बदौलत हुआ। वह यहाँ से हस्पताल गया ही नहीं, प्लू के सब जर्म कमरे में बस गये (छींकती है) ओह मार डाला इग्ने तो (अलमारी खोलकर ट्विस्की की बोतल निकालती है) ट्विस्की का पेंग लेकर देखती हूँ (पेंग भरकर पीती है) अहा हाँ ! (फिर छींक आ जाती है) यह बन्द होने वाला नहीं है, हस्पताल जाना पड़ेगा। फोन कलं और एम्बुलेंस मंगाऊँ। पर...पर वहाँ चली गई तो पार्टी ड्रामा...ड्रामे की तारीख भी पाम आ गई, देखूँ अखबार में कौनसी है (अखबार पलटती है) अरे यह क्या, व्हाट्स दैट बेबी शो...देश के बच्चों के लिये सुनहरी अवसर...अखिल भारती बेबी शो, सब से स्वस्थ और सुन्दर बेबी को एक हजार नकद तथा एक हजार की वस्तुएं इनाम (फुसफुसा कर) एक हजार नकद और एक हजार की वस्तुएं, बेबी शो... (छींकती है और एकदम पुकारती है) आया...आया...(एकदम) आया अब कहाँ है, बेबी भी नहीं है, ओह बेबी होता तो, बेबी...(एकदम छींककर तेजी से)

मैं अभी नसिङ्ग होम जाती हूँ। हमारा बेबी सेहत और सुन्दरता में बिल्कुल परफेक्ट है, एकदम मॉडल है, पर...पर शायद मुझे वे लोग चोर समझें...राकेश को आने दो, क्यों न आया को भी बुला लूँ। बेबी को वही ला सकती है... शो कब है... (पढ़ती हुई) १५ सितम्बर को टाउन हाल में... १५ सितम्बर यानी कल हो चुकी, ओह गॉड।

(श्रीमती चन्द्रा का प्रवेश)

चन्द्रा—हलो रीता, रीता खुशखबरी, हमारा बेबी, बेबी शो में फर्स्ट आया।

रीता—बाई गॉड (छींकती है)।

चन्द्रा—(पूर्वतः) हमारा बेबी, बेबी हेल्थ शो में अव्वल गया। एक हजार नकद और एक हजार का सामान मिलेगा। कितनी अच्छी खबर है! ओह हमारे बेबी की सेहत कितनी अच्छी है! जज ने कहा... तुम जाननी हो, जज अमेरिका का है, उसी ने कहा है कि ऐसा रूप, ऐसी सेहन, ऐसी इन्टेलीजेन्स अमेरिका और यूरोप के बच्चों में भी नहीं है, भारत के बच्चे विश्व भर में चतुर हैं।

रीता—(बनावटी हंसी) आह! आई एम वैंरी वैंरी सॉरी। नो, ग्लैंड... वैंरी ग्लैंड चन्द्रा, मेरी बधाई, बहुत बहुत बधाई।

चन्द्रा—ओह धन्यवाद! रीता, हमारे बेबी के कारण भारत का नाम हुआ। इसके फ़ादर ने जब से सुना है तब से नाच रहे हैं। आज शाम फो पार्टी है, तुम भी आना, बेबी को भी लाना और हाँ, तुमने अपना बेबी शो में क्यों नहीं भेजा? तुम्हारा बेबी कितना स्वस्थ और कितना सुन्दर है, सेकिण्ड प्राइज तो उसे भी अवश्य मिलता।

रीता—(छींक कर) सेकिण्ड क्यों, उसे फ़र्स्ट मिलता। आई स्वीयर बाई गॉड, उसे हर हालत में पहला इनाम मिलता।

चन्द्रा—(तुनक कर) फ़र्स्ट तो क्या...पर खैर उसे मिलता जरूर, लेकिन वह गया क्यों नहीं? कल से मैंने न उसे देखा न आया को, पहाड़ पर भेज दिया क्या?

रीता—(एक दम छींक कर) वह खो गया ।

चन्द्रा—(चौंक कर) खो गया...कब कैसे ? हमें तो खबर तक नहीं ।

रीता—ओह चन्द्रा ! मुझे जुकाम हो रहा है । (छींकती है) बड़ा तेज जुकाम है । तुम जाओ, कहीं तुम्हें छूत न लग जाये ।

चन्द्रा—नहीं, नहीं, ऐसे भी क्या छूत लगती है । वैसे यह बड़ी खराब बीमारी है । क्या ले रही हो ? रूमाल में युक्लिपटिस आयल लगाया है ?

रीता—नहीं वेप है, आयल क्या करेगा ? पर मैं लेटना चाहती हूँ ।

चन्द्रा—बेशक तुम्हें आराम करना चाहिये । फूल मैं पूरा आराम करना ही उसका इलाज है । लेकिन तुमने बेबी का तो कुछ बताया ही नहीं, कैसे खो गया...

रीता—(सहसा चौंक कर) बेबी, बेबी, तुम्हें बेबी से क्या काम है ? तुम्हें हमारे बेबी से क्या मतलब है ? तुम हंसो, नाचो, खुशी मनाओ, तुम्हारे बेबी को फर्स्ट प्राइज़ मिला है, जाओ मुझे छोड़ दो...

चन्द्रा - रीता...रीता...

रीता—मैं कहती हूँ कि चली जाओ । जाओ, नहीं तो तुम्हें ऐसा जुकाम लगेगा कि तुम और तुम्हारा बेबी...

चन्द्रा—ओह रीता...रीता...मैं जा रही हूँ, मैं अभी जा रही हूँ । बेबी के खो जाने से तुम्हारा...(दूर जाकर स्वगत) यह तो बेबी को पास तक नहीं आने देती थी । उसके खो जाने से इतना परेशान कैसे हो गई । (जाती है)

रीता—(बराबर छींक रही है ।) चन्द्रा के बेबी को फर्स्ट प्राइज़ मिला, इसके बेबी का फोटो अखबार में छपेगा । साथ में इसका और इसके पति का भी । आह...आह...सारे देश में इनका नाम होगा,

मौलिक विचार हैं तुम्हारे ? क्या कहने हैं । यानी मां ब्रह्मा है, बाप विष्णु सुन्दर, अति सुन्दर कल्पना, अति अनुपम ।

रीता—शट अप, (छींकती है ।)

राकेश—रीता, शकुन अच्छे नहीं हैं । बार-बार मत छीको, छींकने से...

रीता—राकेश, मैं कहती हूँ कि मेरे साथ चलो ।

राकेश—तुम्हारे साथ । कहाँ, छूत के हस्पताल में । नो मदाम...

रीता—राकेश, हमेशा मसखरे मत बना करो । कभी तो संजीदा बनो...

राकेश—जो आज्ञा । मैं इस समय एकदम गम्भीर हूँ ।

रीता—मेरे साथ नर्सिंग होम चलो ।

राकेश—नर्सिंग होम । वाइ गॉड, वहाँ क्यों ? मुझे दाखिल करना है... नो, नो...

रीता—नो, नो राकेश, बेबी को लाना है । तुम तो किसी बात का ख्याल नहीं रखते । कल यहाँ बेबी शो था, अगर बेबी होता तो जरूर फ़र्स्ट प्राइज़ लेता ।

राकेश—बात तो तुम्हारी ठीक है । प्राइज़ वह जरूर लेता लेकिन बेबी की बात छोड़ो । तुम्हारा फ़र्ज तो पूरा हुआ । पालना काम मेरा है, मैं देख लूँगा । तुम हस्पताल जाओ ।

रीता—शट अप, मुझ से बहस करते हो । (छींक कर) चींटी के पंर निकले हैं । मैं कहती हूँ तुम्हारा बर्ताव डिक्टेटरशिप का है, डेमोक्रेसी का नहीं । मैं स्वतन्त्र हूँ, मैं तुम्हारे आर्डर नहीं मानूँगी, मैं...

(बरबाजे की घंटी बजती है)

राकेश—(बाहर जाता हुआ) बाई गाँड ! एम्बुलेंस आ गई । रीता, डार्लिंग जल्दी तैयार हो जाओ । (जाता है)

रीता—(चीखकर) मैं हस्पताल नहीं जाऊँगी...नहीं जाऊँगी...  
[बाहर जाना चाहती है, तभी आया बेबी के साथ आती है और वे टकरा जाते हैं ।]

रीता—(क्रोध) यू ईडियट, देखकर नहीं चलती ।

आया—मदाम, आज तो आपकी खराब होने वाली ड्रेस नहीं है ।

रीता—(चीखकर) कौन आया और बेबी...बेबी...बेबी आ गया !  
(बिह्वल होती है) माई बेबी ।

राकेश—(आकर) बाई गाड, रीता क्या करती हो ? बेबी को छूना मत । आया बेबी को ले जाओ । बाहर ड्राइंग रूम में बैठो । मदाम को फ्लू हो गया है, फ्लू (सुँह बनाकर) बेबी को लग जायेगा । बच्चों को छूत की बीमारी बहुत जल्दी लगती है ।

आया—मदाम को फ्लू है । मैं अभी जाती हूँ । बेबी तो बिचारा दो ही दिन में सूख गया । फ्लू लग गया तो...

रीता—(पागल सी) राकेश...यू राकेश ! आया रुको...रुको ।  
(चीखकर) आया, तुम्हें रुकना होगा, मैं कहती हूँ...

आया—(द्वार से) मदाम ! माफ़ करें, मैं आपकी नौकरानी नहीं हूँ । न बेबी आपका है, आपका बेबी लावारिस हस्पताल में है ।

(जाती है)

रीता—(चीखकर) आया, तुम्हारी इतनी हिम्मत !

राकेश —बाद गाँड, तुम्हारा फ्लू तेजी पर है । तुम्हारी लिपस्टिक में शोले भड़क रहे हैं । मुस्कराती हो तो ऐसा लगता है जैसे अंगारे उगल रही हो । तुम हस्पताल नहीं जातीं तो विवश होकर हमें होटल

जाना पड़ रहा है (सांस लेकर) क्या किया जाय ? बेबी की जिम्मेवारी मुझ पर है । मैं रिस्क नहीं ले सकता । गुडबाई...टा...टा...

(जाता है, रीता रोती हुई दौड़ती है ।)

रीता—राकेश...राकेश...

(फिर दोनों हाथों से मुँह ढांपकर कुर्सी पर गिरती है ।)

रीता—ओह...चले गये...बेबी को भी ले गये । मैं अकेली रह गई । मैं अकेली रह गई (सुबकी लेकर) वे मेरे फल्लू से नहीं, मुझसे भी दूर चले गये । ओह बेबी...बेबी...बेबी ।

(सुबकियाँ)

मेहमान

चिरंजीत

## पात्र-परिचय

ललितमोहन—बाबूनगर के अनगिनत बाबुओं जैसा एक टिपिकल बाबू । उम्र कोई ३० वर्ष ।

आशा—ललितमोहन की पत्नी उम्र कोई २६ वर्ष ।

सुषमा—आशा की नव-विवाहिता सुन्दर, सजीली बहन । उम्र कोई २१-२२ वर्ष ।

प्रकाशचन्द्र—सुषमा का छैल-छवीला पति । उम्र कोई २५-२६ वर्ष ।

मौसी—आशा और सुषमा की मौसी । उम्र कोई ५० वर्ष ।

सुरेश—मौसी का लड़का । उम्र कोई १८-१९ वर्ष ।

प्रभाकर—मौसी का दामाद, परन्तु ललितमोहन के लिए अजनबी ।  
उम्र कोई ३५ वर्ष ।

बिहारीलाल—बाबूनगर का एक और बाबू ।

इन के अतिरिक्त उजड़-सा ताँगे वाला और ललितमोहन का एक बच्चा, जो रोता है या सोता है ।

(बादूनगर में बिस्कुटी रंग के एक सरकारी क्वार्टर नं० ६६ का सामने का भाग । एक दरवाजा और खिड़की, जिनके आगे छोटा-सा हरा-भरा लान और लान के आगे से गुजरती हुई छोटी-सी गली । गली के एक ओर बिजली का खम्भा, जिसकी रोशनी का कुछ अंश लान और बंद दरवाजे के ऊपर पड़ रहा है, जहाँ क्वार्टर का नम्बर लिखा हुआ है । लान का दूसरा भाग खुली खिड़की से आने वाली रोशनी से आलोकित है । लान के बीचोंबीच एक मेज और उसके आस-पास चार-पाँच कुर्सियाँ रखी हुई हैं ।

पर्दा दूर के किसी घंटाघर की रात के नौ बजने की पार्श्व-ध्वनि के साथ उठता है । लान में कोई नहीं है, परन्तु क्वार्टर के अन्दर से आ रहा हँसने-बोलने का स्वर इस बात का सूचक है कि यह छोटा-सा क्वार्टर बुरी तरह भरा हुआ है । कुछ देर बाद गली में से ललितमोहन प्रकट होता है । वह थका हुआ, परेशान-सा जान पड़ता है । क्वार्टर के अन्दर से आने वाले कहकहों से उसकी परेशानी और भी बढ़ जाती है और वह सहम कर बिजली के खम्भे से सट जाता है । ]

ललितमोहन—(स्वगत)—ओह ! यह हँसी ! जैसे किसी लाश को नोच-नोच कर खाते हुए गिद्ध हँस रहे हों । (आह के साथ) ललित-मोहन, इन मेहमानों के लिए तू भी.....

बिहारीलाल—(पीछे से अचानक आते हुए)—अरे, यार ललित-मोहन !

ललितमोहन—( चौंक कर जैसे बिजली छ गई हो ) कौन ?  
ओह, बिहारी...तुम इस समय...?

बिहारीलाल—पहले तुम बताओ कि गली में इस समय यों खड़े बड़बड़ा क्यों रहे हो ? ( सिर को छ कर हँसते हुए ) यहाँ सब कुशल है न ?

ललितमोहन—अरे यार, जिस आदमी को चार-चार मेहमान पिछले एक महीने से नोच-नोच कर खा रहे हों, उसका दिमाग कैसे ठीक रह सकता है ?

बिहारीलाल—खेर, दिमाग की इस गड़बड़ी में मेरे बीस रुपए न गड़बड़ा जाएं ।

ललितमोहन—बिहारी, कैसी बातें कर रहे हो ! ललितमोहन उन लोगों में से नहीं है, जो यार-दोस्तों से कर्ज लेकर मुकर जाएं । (एकाएक) सुनो, इस पहली को तीस रुपए ले लेना ।

बिहारलाल—वाह, बीस देकर तीस क्यों लूँगा । मैं कोई सूदखोर हूँ कि...

ललितमोहन—अरे भई, तुम मेरा मतलब नहीं समझे, मुझे तुम्हारे बीस रुपए देने हैं न ?

बिहारीलाल—हाँ !

ललितमोहन—यदि तुम मुझे अभी दस रुपए और दे दो, तो...

बिहारीलाल—( चौंक कर ) तो क्या तुम मुझ से दस रुपए और माँग रहे हो ?

ललितमोहन—हाँ, घर के खर्च के लिए...

बिहारीलाल—(बिगड़ कर) क्या मैंने तुम्हारे घर का खर्च चलाने का ठेका ले रखा है ? मैं तो तुम्हें बीस रुपए देकर पछता रहा हूँ । दो सौ की तनखाह में से किस-किस का कर्ज चुकाओगे । दफ़्तर का कोई

ऐसा बाबू या चपरासी है, जिससे तुमने दस-पाँच रुपए का कर्ज न लिया हो ?

ललितमोहन—बिहारी, क्या बताऊँ, मेहमानों के कारण...

बिहारीलाल—अरे, क्या मेहमान मेहमान लगा रखी है ! क्या किसी हकीम ने कहा है कि पत्नी के रिश्तेदारों का कर्ज ले-ले कर महीने-भर पालण-पोषण करो । तुम्हारी जगह अगर मैं होता तो ऐसे मेहमानों को तीसरे ही दिन चलता करता । ( कलाई की घड़ी देखकर ) ओह, सवा नौ बज गए । कौशल्या ने कहा था कि आज साढ़े आठ तक घर पहुँच जाना, दूसरे शो का प्रोग्राम है । अच्छा भई ललितमोहन, कल दफ्तर में मुलाकात होगी ।

( जल्दी से जाता है )

ललितमोहन ( आह भर कर, स्वगत )—जेब में पैसे होते हुए भी इन्कार कर गया । कोई कर्ज देने को तैयार नहीं ।

( क्वार्टर के अन्दर से फिर कहकहे सुनाई देते हैं । )

कहां से लाकर खिलाऊँ इन गिद्धों को !

( तभी जिस दिशा से बिहारीलाल आया था, उसी ओर से सरपट आते हुए तांगे का शब्द सुनाई देता है, जिससे ललितमोहन ऐसे चौंकता है, मानो यनबूत दिखाई दे गया हो । )

( बेदम-सा स्वगत )—यह शायद एक और आया ।

अजनबी ( नेपथ्य में )—तांगे वाले, यहीं रोक दे । ६६ नम्बर यही जान पड़ता है ।

तांगेवाला—अच्छा बाबू जी ।

ललितमोहन—(उधर देखते हुए) तो मेरा अनुमान ठीक ही निकला । लेकिन...लेकिन...

(स्वगत) यह तो कोई अजनबी-सा जान पड़ता है । (जरा चैतन्य होकर) अच्छा, तो आज.....

[ नेपथ्य में तांगा रोकन का शब्द । कुछ देर बाद अजनबी का प्रवेश । ]

अजनबी—(इधर उधर देख कर ललितमोहन से) क्यों साहब, बाबू ललितमोहन का क्वार्टर यही है न ?

ललितमोहन—( बेरुखी से ) ललितमोहन का क्वार्टर ? कौन-सा ?

अजनबी—अजी यही, नम्बर ६६ ?

ललितमोहन—(बंद दरवाजे पर एक नजर डाल कर जैसे सम्मलते हुए ) यह क्वार्टर तो मेरा है ?

अजनबी—तो क्या बाबू ललितमोहन इसमें नहीं रहते ?

ललितमोहन—( क्वार्टर के दरवाजे की ओर फिर देख कर जरा धीमे स्वर में ) कहा न, इस क्वार्टर में मैं रहता हूँ और मेरा नाम ललितमोहन नहीं है ।

अजनबी—(परेशान-सा) ओह, तो फिर... (जेब से चिट्ठी निकाल कर) लेकिन इस चिट्ठी पर तो इसी क्वार्टर का पता दिया हुआ है ।

ललितमोहन—(चिट्ठी पर उचटती नजर डाल कर) अजीब बात है । यह ललितमोहन है कौन ?

अजनबी—यहाँ के किसी सरकारी दफ्तर में काम करते हैं और...

ललितमोहन—अजी, इस बाबूनगर के तो सभी निवासी सरकारी दफ्तरों में काम करते हैं । आप आए कहाँ से हैं ?

अजनबी—मैं कानपुर से आया हूँ । मेरी अचानक ही यहाँ तदली हो गई और...और...मैं...

ललितमोहन—तो आप यहाँ के लिए एकदम नए हैं ।

अजनबी—अजी, नया तो मैं बाबू ललितमोहन के लिए भी हूँ ?

ललितमोहन—क्या मतलब ?

अजनबी—(खिसियायी हँसी कर) क्या बताऊँ, हम पहले कभी एक-दूसरे से मिले नहीं । जान हर-घमल गड़ है कि मैं उनकी

पत्नी की मौसी का दामाद प्रभाशंकर हूँ। जब मेरी शादी हुई थी तब उनकी नहीं हुई थी, जब उनकी शादी हुई तब मैं किसी कारणवश उस में शरीक नहीं हो सका था।

ललितमोहन—मनलब यह कि न बाबू ललितमोहन आपको पहचान सकते हैं, न आप उनको।

अजनबी—हाँ, लेकिन उनके यहाँ आजकल मेरी सास ठहरी हुई है। यह चिट्ठी...

ललितमोहन—आपकी सास, यानी कि बाबू ललितमोहन की पत्नी की मौसी।

तांगे वाला—(नेपथ्य में) अरे बाबूजी, क्या रात भर मुझको यहीं खड़ा रखेगे ? अपना सामान उतरवाइए और...

अजनबी—अरे भई तांगे वाले, क्यों जल्दी मचा रहा है ? (ललितमोहन से) देखिए साहब, कोई एक सप्ताह पहले मेरी सास ने बाबूनगर के इसी क्वार्टर नं० ६६ मे ही मुझ को यह चिट्ठी लिखी थी।

ललितमोहन—( चिट्ठी लेकर पढ़कर ) तो हो सकता है कि एक सप्ताह पहले बाबू ललितमोहन इसी क्वार्टर में रहते हों। मैं तो कल से इस क्वार्टर में आया हूँ।

अजनबी—तो आपको कुछ पता नहीं कि यहाँ से वे कहाँ गए ?

ललितमोहन—जी नहीं। अच्छा तो, नमस्ते। (कहता हुआ लान की ओर बढ़ता है।)

अजनबी—अजी, सुनिए तो !

ललितमोहन—(भुंभुला कर वापस आता है) फ़रमाइए।

अजनबी—पड़ोसियों को तो पता होगा कि ललितमोहन इस क्वार्टर से कहाँ गए।

ललितमोहन—(हंस कर) लगता है, आप बाबूनगर के निवासियों से परिचित नहीं। यहाँ के लोग तो बरसों पड़ोस में रह कर भी एक-

दूसरे के लिए अजनबी बने रहते हैं। और फिर देखिए न, रात के अभी सवा नौ ही बजे हैं, लेकिन आस-पास के सभी क्वार्टरों में अँधेरा है।

अजनबी—(इधर-उधर देख कर) यहां के लोग बहुत जल्दी सो जाते हैं।

ललित०—दिनभर के थके-मांदे बाबुओं को जल्दी ही नींद आ जाती है।

तांगे वाला—(आकर) बाबूजी, किराया दीजिये, मैं जाऊँ। इतनी देर से रोक रखा है। अब तक...

अजनबी—(भुंभला कर) अरे, क्यों शोर मचा रखा है। यहाँ के तांगे वाले भी... मुझको तो अपनी सास पर गुस्सा आ रहा है। क्वार्टर बदलने की मुझको सूचना तक नहीं दी। गनीमत समझिए कि मैं अपने बीबी-बच्चों को साथ नहीं लाया, वरना मेरे साथ रात भर वे भी परेशान होते। समझ में नहीं आ रहा कि रात के समय कैसे मकान ढूँढ़ें।

ललित०—अजी, आप रात की कह रहे हैं, यहाँ तो दिन में भी लोगों को मकान नहीं मिलते।

अजनबी—(किंकतव्यविमूढ़-सा) बहुत बुरे फंसे। क्यों साहब, यहाँ ठहरने के लिए कोई होटल होगा?

ललित०—होटल इस बस्ती में तो कोई नहीं। हाँ, स्टेशन के पास ही एक होटल है। बहुत अच्छा है और सस्ता भी है...

तांगेवाला—तो क्या बाबूजी, वापस स्टेशन को चलना होगा?

अजनबी—(निराश-सा) हाँ भाई, और तो कोई चारा ही नहीं।

तांगेवाला—तो आइए, जल्दी से बैठिए तांगे में।

[तांगे वाले के पीछे-पीछे मुँह लटकाए अजनबी प्रभाशंकर जाता है। कुछ देर बाद तांगे के जाने का शब्द सुनाई देता है। तभी ललित-मोहन की पत्नी आशा दरवाजा खोलकर बाहर भाँकती है।]

ललित०—(स्वगत, हँसते हुए)—इसे तो चलता किया। आया

था मेहमान बनने । ऐसा ही कोई तरीका अब मुझे... (कहते-कहते लॉन की ओर घूमता है और वहाँ आशा को खड़ी पाता है । घबरा कर हकला, कर) ओह आशा, तुम यहाँ... ।

आशा—मेरे यहाँ होने से आपको अचरज क्यों हुआ ? अभी आप गली में किससे बातें कर रहे थे ?

ललित०—(हकला कर) बातें ? अरे हाँ, मैं बातें कर रहा था । बातें नहीं, बात कर रहा था । कोई अजनबी था । किसी का क्वार्टर पूछ रहा था ।

आशा—मैं समझी मौसी का दामाद है । आज ही मौसी के नाम उसकी चिट्ठी आई थी कि उसका अचानक यहाँ तबादला हो गया है और... (अन्दर से कहकहों की आवाज)...

ललित०—(बात बदलते हुए) ये लोग अभी सोए नहीं ?

आशा—सोते कैसे ? सुषमा और प्रकाश तो इन्तजार कर रहे हैं कि आप आएँ तो दूसरे शो में चलें और मौसी... अरे हाँ, सुरेश की नौकरी का कुछ हुआ ?

ललित०—आशा, नौकरियाँ कोई पेड़ों पर तो लगी नहीं कि उतार कर ले जाऊँ । और फिर आज कल मैट्रिक पास को कोई पूछता भी तो नहीं । वैसे कई जगह कह रखा है ।

आशा—खाक कह रखा है । आज चौबीस-पच्चीस दिन हो गए मौसी को आए । जीवन में पहली बार उन्होंने एक काम कहा, वह भी आप से नहीं हो पा रहा ।

ललित०—आशा, तुम तो ऐसे कह रही हो, जैसे सभी नौकरियाँ मेरे हाथ में हों । दो सौ रुपए का फटियल क्लर्क हूँ, लेकिन न तुम्हारी मौसी और न तुम्हारे बहन-बहनोई इस बात को समझते हैं.....

आशा—(होठों पर उंगली रख कर) शी, धीरे बोलिए । मैंने तो

इन सब से कह रखा है कि आप साढ़े तीन सौ माहवार तो तनखाह पाते हैं और ऊपर से...

ललित०—(मुंह बिचका कर) चार-पांच सौ कमा लेता हूँ, (कुर्सी पर लुढ़क कर, माथा पकड़ कर) इतना बड़ा झूठ ! आज पता चला कि मुझ को क्यों नोचा जा रहा है ।

आशा—आपको कौन नोच रहा है ?

ललित०—(दांत पीस कर) तुम्हारे ये रिश्तेदार जो ...

आशा—(कड़क कर) मेरे रिश्तेदार तो आपको जहर लगते हैं, जहर । मैं उनसे आज ही कह दूंगी कि फिर कभी भूल कर भी मेरे घर में कदम न रखें ।

ललित०—आशा, तुम तो विलकुल उल्टा समझ रही हो । एक-दो दिन के लिए कोई मेहमान आए तो...

आशा—तो क्या आप सुपमा को मेहमान समझते हैं ? क्या छोटी बहन बड़ी बहन के घर आ कर मेहमान कहलाती है ? अपने विवाह के बाद वह पहली बार ...

ललित०—ओह ! मैं सुपमा की बात थोड़े ही कह रहा हूँ ।

आशा—(अनभुनी करते हुए) जब सुपमा कु वागी थी तब यह दो-दो महीने मेरे पास आकर रह जाती थी । तब तो आपने कभी बुरा नहीं माना था, बल्कि मेरे रोकते रहने पर भी उरो रोज कभी सिनेमा दिखाने, कभी नाटक दिखाने, कभी नई जगहों की सैर कराने के लिए ले जाते थे, उसके कपड़ों पर पचासों रुपए खर्च कर देते थे । अब वह ब्याह के बाद पहली बार अपने पति के साथ मेरे पास आई है तो...

ललित०—तो क्या अब मैंने उस पर खर्च नहीं किया ? दोनों मियाँ-बीवी जिस दिन से आए हैं, एक दिन भी मैंने सिनेमा से नागा किया है ? दफ़्तर से छुट्टियाँ ले-ले कर मैंने इन्हें जगह-जगह की सैर करवाई है,

बढ़िया-से-बढ़िया होटलों में ले जा कर खाना खिलाया है और उनके साथ तुम्हारी मौसी और मौसी के आवाला लड़के को भी ।

आशा—अच्छा, तो यह सारा एहसान मुझ पर है ?

ललित०—तुम क्यों एहसान मानोगी । मेहमानों की खातिर करना तो मेरा कर्तव्य है । मैं चाहे भूखा रहूँ, नंगा रहूँ...

आशा—बेमार बात न बढ़ाइए । चलिए, अन्दर चलकर खाना खा लीजिए ।

ललित०—आज आटा कहाँ से आया ?

आशा—आपकी बला से । मैं तो घर आए मेहमानों को भूखों मारने से रही । पड़ोसियों के यहाँ से ले आई । कल सुबह बाजार से लाना होगा ।

ललित०—कल सुबह कहाँ से आएगा ? मेरे पास तो फूटी कीड़ी नहीं । दफ़्तर में मैं जिन लोगों से भी कर्ज ले सकता था, ले चुका हूँ । और कहीं से मिलता नहीं ।

आशा—वे डाकखाने वाले रुपए कहाँ गए ?

ललित०—सबसे पहले वे ही तो स्वाहा हुए थे मेहमानों की खातिर-दारी के इस यज्ञ में ।

आशा—मेहमानों की अगर आप अनाप-शनाप खातिरदारी करेंगे तो मैं उसकी जिम्मेदार थोड़े ही हूँ । लगता है, सुषमा के लिए कोट भी नहीं बन सकेगा ।

ललित० ( चौंक कर )—कैसा कोट ?

आशा—बड़ी बहन हूँ । उसको खाली हाथ तो विदा कर नहीं सकती । कोई कपड़ा-लत्ता तो देना ही होगा । उसने अपने मुँह से गर्म कोट माँगा है.....

ललित ( गुस्से से )—माँगा है, तो.....( सिर पकड़ कर ) हे

भगवान्, यहाँ आटे-दाल की समस्या है, ऊपर से सौ-सवा सौ का और खर्च आ पड़ा। तनखाह मिलने में अभी पूरे नौ दिन हैं।

आशा—खैर, ये लोग पहली तारीख के बाद ही जाएँगे।

ललित (बेदम-सा)—क्या कहा ? पहली तारीख के बाद जायेंगे ? लेकिन तुम्हारी मौसी तो कल...

आशा—हाँ, कल जाने का उनका इरादा था, लेकिन आज प्रभा-शंकर के तबादले की चिट्ठी आ जाने से.....।

ललित (अनजान-सा बन कर)—प्रभाशंकर ! यह प्रभाशंकर कौन है ?

आशा—मैं कहती हूँ, आपकी स्मरणशक्ति को क्या हो गया है ? बीसियों बार आप यह नाम सुन चुके हैं, फिर भी भूल जाते हैं। प्रभा-शंकर है मौसी का दामाद, जिसकी बदली अब यहाँ हो गई है। उसके कारण मौसी अभी कुछ दिन और यहाँ रुकेंगी। जब तक कोई मकान नहीं मिल जाता, तब तक वह हमारे यहाँ ही ठहरेगा।

ललित—हाँ, यहाँ क्यों नहीं ठहरेगा ? मेरा घर होटल है न, होटल ! पहले वह आएगा, फिर उसके बीबी-बच्चे आयेंगे और फिर.....।

आशा—क्यों नहीं आयेंगे। मेरी एक ही तो मौसेरी बहन है।

(अन्दर से फिर क़हक़हों की आवाज़ सुनाई देती है।)

ललित (व्यंग्य से)—आशा, इन क़हक़हों में तुम्हारे मौसेरे भाई सुरेश का ठहाका नहीं सुनाई दे रहा है।

आशा—शाम को पहला शो देखने गया था।

ललित—आज वह मेरा कौन-सा सूट पहन कर गया ?

आशा—शायद नीला...

ललित (बिगड़ कर)—क्या ! आज वह मेरा नीला सूट पहन कर गया है ? हे भगवान्, एक सूट बचा था, आज उसका भी सत्यानाश हो गया। तुमने उसे रोका क्यों नहीं ?

आशा—कैसे रोकती ? मौसी का लाड़ला है, रोकती तो मौसी नाराज हो जातीं ।

ललित ( गुस्से से )—मौसी नाराज हो जातीं तो क्या...? और वह खुश ही कब थीं । सब की भी कोई हद होती है । आशा, आज मैं साफ-साफ कहे देता हूँ, मैं तंग आ गया हूँ तुम्हारे इन रिश्तेदारों से । महीने भर से मेरा सुख-आराम, रुपया-पैसा, कपड़ा-लत्ता सभी कुल इन्हीं की भेंट हो रहा है । अब मेरी जान बची है सो...

आशा ( गुस्से से )—अच्छा, अगर मेरे रिश्तेदार आपको इतने ही बुरे लगते हैं, तो मैं अभी उन्हें घर से निकाले देती हूँ । सम्भालये अपना घर, मैं भी जाती हूँ ।

ललित ( सव्यंग्य )—तुम क्यों जाओगी ? तुम्हारी खातिर मैंने माँ को गाँव भेज रखा है, छोटे भाई को होस्टल में पटक रखा है और कल से मैं भी कहीं.....

आशा—ऐसी धमकियाँ किसी और को दीजिएगा ।

ललित ( गुस्से से )—आशा, मुझको गुस्सा न दिलाओ । मालूम है, आज आते-आते साइकिल का चालान हो गया था ।

आशा ( चौंक कर )—चालान ? कैसे चालान हो गया ? साइकिल कहाँ है ?

ललित—थाने में ।

आशा—थाने में क्यों छोड़ आए ?

ललित—लैम्प में तेल डलवाने के लिए जब मैं पैसे नहीं थे । सो बिना बत्ती के आ रहा था । सिपाही ने पकड़ कर चालान कर दिया । चालान के वक्त मालूम हुआ कि साइकिल पर म्युनिसिपैलिटी का नम्बर भी नहीं है । सिपाही ने साइकिल छीन कर थाने में भिजवा दी, कल वेशी है ।

आशा—ओह, तो जुमाने के लिए रुपए कहाँ से आएंगे ?

ललित—जुमाना देने की जरूरत नहीं पड़ेगी ।

आशा—क्यों ?

ललित—मैंने अभी-अभी निश्चय किया है कि जुमाने के बजाय मैं महीने सवा महीने के लिए जेल काट आऊँगा । तब तक तुम्हारे ये रिश्ते-दार.....।

आशा ( स्तब्ध-सी )—यह आप क्या कह रहे हैं ? मेहमान सभी के घरों में आते हैं परन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि.....

( तभी क्वार्टर के अन्दर से मुन्ने के रोने की आवाज सुनाई देती है । )

आशा—ओह, मुन्ना जाग गया । ( ऊँचे स्वर में ) सुषमा, मुन्ने को उठा ले । ( ललितमोहन से ) चलिए, अन्दर चलकर खाना खा लीजिए ।

ललितमोहन—मुझ को भूख नहीं ।

( सामने वाले दरवाजे से रोते हुए मुन्ने को लेकर सुन्दर, सजीली सुषमा आती है । )

सुषमा—(हंसते हुए) अरे, जीजा जी ! आप कब आए ?

ललित—(रूखी हंसी हंस कर) जब तुमने देख लिया ।

सुषमा—(दरवाजे की ओर मुंह करके) देखिए, जीजाजी तो बाहर खड़े हैं ।

( अन्दर से छैल-छबीला प्रकाश भागता हुआ आता है, उसके पीछे किंचित् लंगड़ाती हुई त्योंरी चढ़ाए बुढ़िया मौसी आती है । )

प्रकाश—(हंसते हुए) अरे भई, आज तो बड़ी राह दिखाई । जनाब हमें दूसरा शो दिखा रहे थे ।

मौसी—अरे, मोहन बेटा, सुरेश की नौकरी का कुछ हुआ ?

ललित—मौसी, एक-दो दिन में.....

मौसी—अरे बेटा, एक-दो दिन करते-करते तुमने बीस दिन निकाल दिए, अगर कुछ होना-हवाना नहीं था, तो पहले ही कह देते । व्यर्थ, ही इतने दिन.....।

सुषमा—खैर मौसी, एक-दो दिन और देख लीजिये ।

मौसी—अरे बेटी, मोहन से कुछ न होगा । बेचारा खुद ही मामूली सा क्लर्क है, किसी को नौकरी क्या दिलाएगा ! मैं तो यों ही यहाँ इस के भरोसे पड़ी रही । मेरे प्रभाशंकर की अब यहाँ बदली हो गई है, देखना आते ही सुरेश को कहीं-न कहीं लगा देगा ।

सुषमा—जीजी, तुम क्यों गुमसु खड़ी हो । जीजा जी के लिए खाना लाओ न !

ललित—मुझको भूख नहीं ।

प्रकाश—(हंसते हुए) तो जनाव, कहाँ से अकेले गुलझरें उड़ा कर आए हैं ।

ललित—(खिस्रानी हंसी हंसकर) अरे भई, नहीं.....।

मौसी—अरे बेटा, भूठ क्यों बोल रहे हो । तुम्हारे लच्छन देखकर मैं तो हैरान हूँ । कभी भले लड़के भी रात के दस-दस बजे घर आते हैं । मेरा प्रभाशंकर तो.....

आशा—मौसी, आप अन्दर चलिए, सर्दी हो गई है । आपकी तबियत कहीं खराब न हो जाए ।

मौसी—(खाँसते हुए) बेटी, तुम्हारे घर का विलायती घी खा-खा कर खाँसी तो कितने दिनों से आ रही है । अगर प्रभाशंकर की बदली की खबर न मिलती तो मैं जरूर ही कल चली जाती । (फिर खाँसती है) उसने आज यहाँ पहुँचने के लिए लिखा था, पता नहीं क्यों अभी तक नहीं आया । क्यों मोहन, कानपुर से गाड़ी कै बजे यहाँ पहुँचती है ?

ललित—ठीक तो पता नहीं मौसी । ऐसे ही कोई आठ साढ़े आठ बजे पहुँचती होगी ।

प्रकाश—अब तो साढ़े नौ बजने वाले हैं, अब वह क्या आएगा ?

मौसी—बेचारा कहीं रास्ता न भूल गया हो । यहाँ के लिए तो वह एकदम अजनबी है ।

आशा—आप भी कैंसी बातें करती हैं, मौसी। प्रभाशंकर कोई बच्चा तो है नहीं। आपने चिट्ठी पर यहाँ का पता लिख दिया था न ?

(ललितमोहन चौंकता है)

मौसी—लिख तो दिया था, परन्तु.....

आशा—आप चिन्ता न कीजिए। हो सकता है कि वह रात की गाड़ी की बजाय सबरे की गाड़ी से आए।

मौसी—मेरा सुरेश भी अभी तक नहीं आया।

प्रकाश—अब आता ही होगा। पहला शो नौ बजे खत्म हो जाता है।

मौसी—इस मोहन ने मेरे सुरेश को सिनेमा की कैंसी लत डाल दी है। यहाँ आकर मेरा अच्छा-भला लड़का भी बिगड़ गया।

(ललितमोहन शिकायत भरी दृष्टि से आशा की ओर देखता है। तभी सुषमा की गोद में मुन्ना रिरियाता है।)

आशा—सुषमा, मुन्ने को मुझे पकड़ा दे। कच्ची नींद से जाग गया है।

सुषमा—जीजी, मैं इसे सुलाती हूँ। आप जीजाजी के लिए यहीं खाना ले आइए।

ललित—(बेजार-सा) मैं आज खाना नहीं खाऊँगा।

आशा—कैसे नहीं खाएंगे आप ? (कहती हुई अन्दर जाती है)

सुषमा—(मुन्ने को चुप कराती हुई) सो जा मुन्ने, सो जा।

मौसी—बेटी, सोए कैसे ? सर्दी शुरू हो गई है, तूने इसके लिए अभी कोई गर्म कपड़ा नहीं बनवाया। मेरे प्रभाशंकर को अपने बच्चों का इतना ध्यान रहता है कि...

सुषमा—मौसी, जरा देर चुप हो जाइए। मुन्ना सोने लगा है।

(कुर्सी पर बैठ जाती है)

मौसी—अरी, तू तो मुझ को बात भी नहीं करने देनी । (मुंह फुला कर दूसरी कुर्सी पर बैठ जाती है ।)

प्रकाश—(कुछ बेर बाद सिगरेट सुलगाते हुए) भई सुषमा, आज सिनेमा का प्रोग्राम तो ठप्प हो गया ।

सुषमा—(हंस कर) भाई साहब, अब हम से कुछ कतराने लगे हैं ।

ललित—क्या कह रही हो सुषमा ? आज सिनेमा नहीं गए तो...

मौसी—आजकल की लड़कियों को सिनेमा के सिवा कुछ सूझता ही नहीं ।

ललित—(हंसते हुए) मौसी, अब तो यह कुछ सुधर गई है । ब्याह से पहले तो सिनेमा देखे बिना इसे नींद नहीं आती थी ।

सुषमा—(मटक कर) आप ही तो रोज मुझ को जबर्दस्ती ले जाते थे ।

प्रकाश—यह कब की बात कर रही हो ?

मौसी—बेटा, ब्याह के पहले की, और कब की ? ब्याह से पहले तो सुषमा यहाँ महीनों आकर रहती थी ।

सुषमा—(भोलेपन से) तब जीजाजी हमेशा बड़े हँसमुख रहा करते थे । अब पता नहीं इन्हें क्या हो गया है ।

ललित—(हंसने का प्रयास करते हुए) नहीं तो.....

प्रकाश—(गंभीर हो कर) अब इनके हंसमुख न रहने की बात मेरी समझ में कुछ-कुछ आने लगी है ।

ललित—(हंसते हुए) अरे भई, कुछ हमें भी तो बताओ, क्या बात समझ में आने लगी है ।

प्रकाश—(और भी गम्भीर होकर) देखो मोहन, इस बात को यों हंसी में न उड़ाओ । आशाजी आ जाएं तो इस बात का अभी फैसला किए देता हूँ ।

(तभी आशा खाने की थाली लिए हुए आती है।)

मौसी—(जैसे बढ़ावा देते हुए) हाँ, हाँ।

आशा—(थाली ललितमोहन के सामने रखते हुए) प्रकाश, कंमी बात, कंसा फंसला ? (ललितमोहन से) लीजिए, आप खाना खा लीजिए ये लोग तो कब के खा चुके हैं।

प्रकाश—(एकाएक गुस्से से) कसम है जो अब मैं इस घर का पानी तक भी पिऊँ।

ललित—(लज्जित-सा) अरे !

आशा—(चिन्तित-सी) अरे प्रकाश, एकाएक गुस्सा क्यों हो गए, मामला क्या है ?

ललित—(हंसने का प्रयत्न करते हुए) कुछ भी नहीं आशा।

प्रकाश—(गरज कर) मोहन, तुम इसे कुछ नहीं कह रहे हो ? सुषमा के साथ अब के पहली बार मैं और मौसी यहाँ आए हैं.....

मौसी—अरे, मेरा सुरेश भी तो आया है।

प्रकाश—और हमारा आना मोहन को अच्छा नहीं लगा। यह हमें जान का बवाल समझता है। क्यों मौसी ?

मौसी—मोहन चाहता है कि हमें कल जाना हो तो आज जाएँ।

प्रकाश—(उठ कर) आज क्यों, हम अभी जाने को तैयार हैं।

आशा—(स्तब्ध सी) प्रकाश, यह क्या कह रहे हो ?

मौसी—ठीक ही तो कह रहा है।

प्रकाश—सुषमा, उठो, हम इस घर में एक मिनट भी नहीं ठहरेंगे।

(सुषमा यंत्रवत उठकर खड़ी हो जाती है)

ललित—(परेशान सा) प्रकाश, यह तुम्हें क्या हो गया है ? तुम्हारे और मौसी के आने से मुझ को इतनी खुशी हुई है कि मैं बयान नहीं कर सकता।

आशा—(जैसे मनाते हुए) हम तो चाहते हैं कि तुम यहाँ से कभी जाओ ही नहीं।

प्रकाश—आशाजी, मैं ऐसी चिकनी-चुपड़ी बातों में आने का नहीं। मेरा यहाँ अपमान हुआ है। बल्कि सच कहूँ तो... (कहता हुआ अन्दर चला जाता है।)

ललित—(घबरा कर) अरे भई, मैं कहता हूँ, सुनो तो।

मौसी—मोहन ने सुरेश को नौकरी का भूठा वायदा दिला कर मुझको धोखा दिया है।

ललित—(घबरा कर) लेकिन मौसी.....

आशा—(हैरान-सी) सब को एकाएक हो क्या गया है ? मेरी तो समझ में कुछ आ नहीं रहा। सुषमा, मुन्ना मुझ को पकड़ा और अन्दर जाकर प्रकाश को समझा।

(मुन्ने को लेती है।)

मौसी—प्रकाश अन्धा नहीं कि जीजा और साली के.....

(सुषमा लाज में जैसे गड़ जाती है।)

ललित—(सटपटा कर) मौसी, भगवान् के लिए.....

(तभी प्रकाश, सूटकेस, बिस्तर बैग आदि सामान से लदा-फंदा गुस्से से गरजता हुआ आता है।)

प्रकाश—चलो सुषमा, इस घर में एक मिनट भी ठहरना पाप है।

(सुषमा अवाक्-सी यंत्र-चलित-सी प्रकाश के निकट पहुंचती है।)

ललित०—अरे भई, सुनो तो !

आशा—प्रकाश, पागल न बनो। इतनी रात गए कहां जाओगे ?

प्रकाश—हम कहीं भी जाएँ, यहां नहीं रहेंगे। मौसी, आप भी चलिए, आपका बैग मैं ले आया हूँ।

मौसी—लेकिन मेरा सुरेश तो अभी.....

प्रकाश—रास्ते में मिल जाएगा सुरेश, आप चलिए तो सही।

मौसी—तो मैं भी चलती हूँ।

आशा— नोकते बाग़ । मौसी. इस तरह न जाइए । सुषमा !

(आगे-आगे साजान उठाए हुए प्रकाश और उसके पीछे सुषमा और मौसी का प्रस्थान ।)

ललित०—(पीछे भागते हुए)—प्रकाश, सुषमा, अरे भई, सुनो तो ।

(आशा कि कर्तव्यविमूढ़-सी मुन्ने को लिए गली तक आती है । कुछ देर बाद ललितमोहन गली से अकेला लौटता है ।)

आशा—नहीं आए ?

ललित०—बहुत कहा लेकिन.....

आशा—आखिर हुआ क्या था ?

ललित०—कुछ भी नहीं । सुषमा की बात चल रही थी कि वह ब्याह से पहले यहां आ कर महीनों रहा करती थी ।

आशा—तो इसमें क्या बुराई है ?

ललित०—पता नहीं प्रकाश के मन में क्या आया कि...(लॉन में आ कर कुर्सी पर बैठते हुए) खैर, जो कुछ हुआ, अच्छा ही हुआ । (थाली की ओर सन्तोषपूर्वक हाथ बढ़ाते हुए) अब मैं आराम-चैन से खाना खा सकता हूँ ।

आशा—(बिगड़ कर)—तो क्या आप इनके इस तरह चले जाने से खुश हैं ?

ललित०—(कोर मुंह में डालते हुए, शान्तिपूर्वक)—हां जरूर खुश हूँ । डेरा डाले पड़े थे । आज से मैं सुख-चैन की नींद सोऊंगा । (सन्तोष की सांस लेकर) बला टली ।

आशा—(गुस्से से)—मेरे रिश्तेदारों को आपने बला कह रहे हैं ? (दांत पीस कर) अब समझी । उन्हें भगाने के लिए आपने स्वयं ही यह झगड़ा किया था ।

ललित०—(शान्तिपूर्वक खाना खाते हुए)—यदि तुम ऐसा समझती हो, तो मुझको कोई आपत्ति नहीं ।

आशा—(गुस्से से पाँव पटक कर) अच्छा, यह बात है, तो सम्हालो अपना घर । मैं भी उनके साथ जा रही हूँ ।

(आशा मुन्ने को लिए गली की ओर लपकती है। तभी सामान से लदा-फंदा प्रकाश गली में प्रकट होता है। उसके पीछे-पीछे सुषमा और मौसी आती हैं।)

प्रकाश—(हँसते हुए, रुक कर) अरे आशाजी, आप कहां जा रही हैं। (सामान लॉन में रखता है।)

आशा—(चौंक कर)—तुम सब लौट आए।

ललित०—(चौंक कर)—क्या लौट आए ?

प्रकाश—(हँसते हुए)—हम गए कहां थे ? हम तो श्री ललितमोहन को यों ही बना रहे थे।

ललित०—(अपनी खोज और निराशा को छिपाते हुए)—तो क्या यह सब नाटक था ?

सुषमा—(हँसते हुए)—जीजाजी, इनकी बातों का आप बुरा न मानिएगा। वहां घर में भी यह आए दिन इसी तरह नाटक करते रहते हैं।

प्रकाश—(हँसते हुए) मैंने सोचा, सिनेमा देखने नहीं गए, घर में ही सिनेमा हो जाए।

मौसी—(चिढ़ कर) अच्छा मजाक सूझा इस लड़के को। मुझको खाम खां...

प्रकाश—(हँसते हुए)—मौसी, पहली तारीख से पहले हम कैसे जा सकते हैं ? पहली तारीख को वेतन मिलने पर ही तो सुषमा का गर्म कोट बनेगा।

आशा—(हँसते हुए)—यही तो मैं कह रही थी।

ललित—(खिसियानी हँसी हँस कर) भई प्रकाश, आज मैं तुम्हें मान गया। बड़े शातिर हो।

आशा—(हँसते हुए) यह भी खूब रही। अच्छा, अब जल्दी से खाना खा लीजिए।

ललित०—(उदास-सा) खैर, खाना तो खा ही रहा हूँ ।

प्रकाश—(पास बैठते हुए)—दोस्त, तुम्हारे मुँह पर अभी तक मुर्दनी छाई हुई है । मैं भला तुम जैसे देवता आदमी के स्नेह और आदर-भाव पर शक कर सकता हूँ ? अब कल सिनेमा चलने का पक्का वायदा हो जाए । मौसी भी हमारे साथ चलेंगी । क्यों मौसी ?

मौसी—मोहन बेटा कहेगा तो जरूर चलूँगी । लेकिन सुरेश अभी तक नहीं आया ।

सुपमा—मौसी, आता ही होगा ।

(नेपथ्य में तांगा आने का शब्द सुनाई देता है ।)

आशा—यह लीजिए, सुरेश आ गया ।

मौसी—लेकिन वह तांगे में तो पहले कभी नहीं आया ।

(नेपथ्य में तांगा रोकने का शब्द । कुछ देर बाद गली में से सुरेश प्रकट होता है—सूटकेस और बिस्तर उठाए हुए ।)

आशा—मेरा अनुमान ठीक निकला । सुरेश ही आया है ।

सुरेश—(आकर)—सिर्फ मैं ही नहीं, मेरे साथ प्रभाशंकर भी आए हैं ।

ललित०—(घबराहट में खाना छोड़कर)—क्या प्रभाशंकर ?

मौसी—(जल्दी से उठकर विभोर-सी)—क्या मेरा प्रभाशंकर आ गया ? कहां है ?

(ललितमोहन खड़ा हो जाता है । उसका रंग फक हुआ जा रहा है ।)

सुरेश—तांगे वाले को पैसे दे रहे हैं । वह पहले यहाँ आकर लौट रहे थे कि रास्ते में मैं मिल गया ।

आशा—(हैरान-सी)—लौट रहे थे ? क्यों ?

सुरेश—यहां पहुँचे तो किसी ने उनसे कह दिया कि यहां कोई ललितमोहन नहीं रहता ।

प्रकाश—(हंसते हुए)—अच्छा ।

(ललित घबराया-सा जैसे छिपने के लिए क्वार्टर के दरवाजे की ओर लपकता है ।)

आशा—आप कहां जा रहे हैं ?

ललितमोहन—(मुर्दा-सा)—मैं अभी आया ।

प्रभाशंकर—(आकर हंसते हुए)—अजी, सुनिये तो । क्या बाबू ललितमोहन यहीं रहते हैं ?

(ललितमोहन भाग कर क्वार्टर के अन्दर चला जाता है ।)

मौसी—(हैरान-सी)—यह मोहन भाग कर अन्दर क्यों चला गया ?

प्रकाश—(हंसते हुए)—मौसी, आप अभी तक नहीं समझीं ?

( सब हंसते हैं )

[ पर्दा गिरता है ]



समर्पण

देवराज 'दिनेश'

## पात्र-परिचय

गिरिधर

एक पत्र का सम्पादक

रत्नाकर

एक नाटककार

चन्दनदास

साहित्यकार बनने का इच्छुक सेठ

गोपा

गिरिधर की पत्नी

पार्वती

कवि दीपक की मां

## प्रथम दृश्य

[स्थान—गिरिधर के मकान में मध्यम श्रेणी का सजा हुआ एक कमरा। कुर्सी पर बैठी हुई कवि दीपक की माँ पार्वती सिसकियाँ भर रही हैं, गिरिधर और गोपा उसे समझा रहे हैं।]

गिरिधर—इस तरह अधीर होने से काम नहीं चलेगा अम्मां। धैर्य से काम लो। (रुपये देता है) लो अभी इतने रुपयों से अपना काम बना लो और हमारे योग्य जो भी सेवा हो, निःसंकोच कह दिया करो।

पार्वती—(और सिसक उठती है) तुम से हमारी दुर्दशा कहाँ छिपी है बेटा। इस जीवन से तो मौन ही भली। पर दुखिया को समय पर वह भी भूल जाती है।

गोपा—ऐसी बातें नहीं करते माँ जी। दीपक भैया शीघ्र ही अच्छे होकर घर आ जायेंगे।

पार्वती—उधर दीपक सेनिटोरियम में पड़ा है। इधर रेवा को पाँच-छः दिन से काफी बुखार है। मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा कि कलू तो क्या कलू। और घर में पैसे के नाम पर फूटी कौड़ी भी नहीं। (रोती है) गहने बेच-बेचकर इन बच्चों को पाला था। वह भी भगवान् को फूटी आँख नहीं सुहाते। सुनो बेटा! रेवा कहती थी कि यदि प्रूफ देखने का काम भैया की नज़र में हो तो वे मुझे दिलवा दें।

गिरिधर—पहले वह अच्छी तो हो ले, फिर प्रूफ देखने का काम भी दिलवा दूँगा। गोपा! न हो तो तू अम्मां के साथ जा और रेवा को

डाक्टर सेठी को दिखादे । मैं ही जाता, पर मुझे रत्नाकर के यहाँ जरूरी पहुँचना है । वह मेरा इन्तज़ार कर रहे होंगे । हो सका तो थोड़ी देर बाद मैं भी आ जाऊँगा ।

पार्वती—बहू को क्यों कष्ट देता है भैया । इसकी तबियत तो पहले ही ठीक नहीं रहती । रुपये तुमने दे ही दिये हैं । मैं खुद ही उसे डाक्टर सेठी को दिखाने ले जाऊँगी ।

गिरिधर—जब भी किसी बात की जरूरत हो मुझे अपना दीपक समझ कर बता दिया करो माँ ।

पार्वती—तुम्हारे ही सहारे हैं बेटा । तुमसे अपना दुःख-सुख कहकर हृदय हल्का कर लेते हैं । (उठते हुए) अच्छा तो चलो भैया ।

गिरिधर—अच्छा माँ । मैं शाम को अवश्य आऊँगा ।

पार्वती—(जाते हुए) भगवान् तुम्हारा भला करे । (जाती हैं)

गोपा—बड़ी ही दुःखी है यह बेचारी ।

गिरिधर—(सांस भर कर) महीने के बजट में बीस रुपये और कम हो गये । इधर अभी पन्द्रह तारीख भी नहीं बीती । कुछ समझ में नहीं आता, कलू तो क्या कलू । रत्नाकर के लिये २०० रुपये सुबह ही अपने प्रधान सम्पादक से मांग कर लाया हूँ । अब कोई उधार भी तो नहीं देता ।

गोपा—तुम्हें तो अब कोई और नौकरी ढूँढनी चाहिये । ढाई सौ रुपये महीने से इतने बड़े शहर में गुजर मुश्किल है ।

गिरिधर—जो प्रभु की इच्छा । कोई न कोई पार्ट टाइम नौकरी ढूँढता हूँ ।

गोपा—आदमी से क्या मशीन बन जाओगे ।

गिरिधर—लाचारी है । अच्छा चलो, बहुत देर हो गई है । रत्नाकर भिन्ना रहा होगा ।

(तभी नेपथ्य में कार आकर रुकती हैं)

गोपा—शायद कोई और मिलने वाला आया दीखता है।

गिरिधर—ओहो। इन मिलने वालों के मारे तो नाक में दम आ गया है।

चन्दन—(नेपथ्य से) गिरिधरदास, गिरिधरदास !

गिरिधर—भगवान् जाने अब यह कैसी मुसीबत आई है। तुम जाओ, मैं देखता हूँ, (ऊँचे स्वर में) आ जाइये साहब, दरवाजा खुला ही है।

(गोपा जाती है चन्दनदास आता है)

गिरिधर—अरे वाह ! धन्यभाग। आज वर्षों बाद इधर कैसे भूल पड़े ? और सुनाओ, क्या हाल-चाल है ?

चन्दन—बस, सब तुम्हारी कृपा है मित्र। अच्छा हुआ घर पर मिल गये।

गिरिधर—बस, दो मिनट बाद आते तो भेंट न हो पाती। मैं एक जरूरी काम से रत्नाकर जी के यहाँ जाने ही वाला था। बहुत देर हो गई है, प्रतीक्षा कर रहे होंगे।

चन्दन—अरे, तो चले जाना। कहो, कैसा चल रहा है रत्नाकर जी का काम-काज ?

गिरिधर—खाक ! प्रेस और प्रकाशन का काम उनके बस का नहीं है। मैनेजर ने कुछ ही महीनों में सब चौपट कर दिया है। भाभी बेचारी रो रही थी।

चन्दन—लेखकों के बस के ये काम नहीं हैं गिरिधर बाबू ! सरस्वती के पुत्र लिखने के अतिरिक्त और कोई काम नहीं कर सकते। व्यापार तो हमारे ही जैसे आदमी कर सकते हैं, जो रेत में से भी तेल निकाल लें। लेखक हृदय का स्वामी होता है, मस्तिष्क का नहीं। (हँसता है) फिर तुम्हारे जैसे बुद्ध ठहरे उनके मित्र, जिन्हें स्वयं व्यापार के विषय में कुछ ज्ञान नहीं। अब कई भुक्खड़ लेखक प्रेस में काम करवाने के बाद उन्हें रुपये भी नहीं देते होंगे ?

गिरिधर—और नहीं तो क्या । न जाने कितनी बे-सिर-पैर की किताबें छाप डाली हैं । (हँस कर) पर मेरे अनुभवों से कोई काम ले तब न ! मैं तो रेत में से तेल निकालने वालों का भी तेल निकाल लूँ ।

चन्दन—खूब । तो गुरु हम पर ही व्यंग कर गये ।

गिरिधर—व्यंग्य की बात नहीं, सच कह रहा हूँ । रत्नाकर वास्तव में ही बड़ा अभाग है । मेरे इशारों पर चले तो उसके सब संकट धो दूँ; पर वह है कि आज की भयावही दुनिया में भी आदर्शवाद और मानवता के गीत गाए जा रहा है ।

चन्दन—(हँसता है) तुम्हारा अपना भी तो यही हाल है । कहना आसान होता है मित्र, पर करना कठिन । चार सौ बीस की कला भी हर एक को नहीं आ सकती । उसके लिए भी गुरु आने चाहिए ।

गिरिधर—अजी नहीं, जब दुनिया में अपने को बुद्धिमान समझने वाले बुद्ध स्वयं ही कहते फिरें कि हमारे धन का उपभोग करो, तब फिर ऐसा अवसर क्यों हाथ से जाने दिया जाए ।

चन्दन—(खिसिया कर) मुझे तो ऐसा कोई व्यक्ति आज तक मिला नहीं, यदि कोई मिला हो तो कृतार्थ हो जाएँ । कुछ रुपया ही हाथ लगे । (हँस कर) चलो, कुछ हिस्सा तुम्हें भी दे देंगे ।

गिरिधर—अवसर आने दो किसी न किसी से तुम्हारी भेंट करा देंगे । (कुछ क्षण रुक कर) अरे लो, वह बात तो बीच में ही रह गई । बताओ न, तुम्हें मुझ से क्या काम है । लो पहले सिगरेट पियो । (दोनों जने सिगरेट सुलगाते हैं)

चन्दन—देखो भाई, सीधी बात यह है कि मेरे पास ईश्वर का दिया हुआ सब-कुछ है, बाप-दादा की लाखों की सम्पत्ति है और स्वयं भी मेरा व्यापार अच्छा चल रहा है । यह समझ लो कि इन दो-तीन वर्षों में लाखों कमाया है ।

गिरिधर—जानता हूँ ।

चन्दन—और तुम ये भी तो जानते हो कि कुछेक मासिक पत्र-पत्रिकाओं में मेरी कहानियां इत्यादि भी छपती रहती हैं।

गिरिधर—(हँसता है) अच्छी तरह ज्ञात है। पर ईमानदारी से यह नहीं कह सकता कि उनमें से वास्तव में तुम्हारी कितनी होती हैं। न जाने क्यों मुझे इस बात में सन्देह है। चाहे बुरा मानो चाहे भला। मैं मुख पर सच-सच कह देने का पक्षपाती हूँ।

चन्दन—(गुस्से से) तुम्हारे पास क्या प्रमाण है, जिस आधार पर तुम उन रचनाओं को मेरी न मानों।

गिरिधर—प्रमाण तो कोई नहीं। पर यह जानता हूँ कि तुम्हारे नाम से छपने के पहले ही मैं उन रचनाओं को उनके असली रचयिता के मुख से सुन चुका होता था।

चन्दन—(क्रोध से कांपते हुए) गिरिधर ! तुम घर आये हुए मित्र से इस तरह पेश आओगे, मुझे आशा न थी।

गिरिधर—क्षमा करना, मैं अपनी आदत से मजबूर हूँ। मैंने इस बात के लिए दीपक को अनेकों बार डाँटा भी, एक बार तो उसे चाँटा भी मार दिया था। पर वह भूखा शराबी कवि अपनी मजबूरी से लाचार तुम्हारे आगे बिकता रहा। तुम्हें अपनी सबसे प्रिय वस्तु की सौगन्ध है, सच-सच बताना ठीक कह रहा हूँ न मैं। (चन्दन चुप रहता है) क्यों, चुप क्यों हो गये ?

चन्दन—(भोंप कर) पर मैंने कोई चोरी नहीं की। व्यापारी आदमी हूँ, नकद रुपये देता रहा, माल खरीदता रहा। उसे पैसों की जरूरत थी, मुझे अपने को यशस्वी बनाने के लिए साहित्य की। हम दोनों एक-दूसरे की जरूरत पूरी करते रहे।

गिरिधर—अब वह सेनेटोरियम में पड़ा है, अब तुम उसकी जरूरत क्यों नहीं पूरी करते। कितने-कितने दिन उसकी माँ और बहन को रोटी नहीं मिलती, उनकी सहायता क्यों नहीं करते।

चन्दन—मेरे पास पैसा व्यर्थ लुटाने के लिए नहीं है गिरिधर बाबू, दुनिया भूखे और नंगों से भरी पड़ी है। मैं किस-किस की सहायता करूँ। मैं तो बिना किसी वस्तु के मूल्य नहीं दे सकता। मैंने दीपक की एक-एक रचना का मूल्य पत्र-पत्रिकाओं की अपेक्षा उसे दुगना-तिगुना दिया हुआ है।

गिरिधर—हां, यह तो ठीक कहते हो। अच्छा चन्दनदास मुझे खेद है यह बात व्यर्थ ही बढ़ गई, अब तुम इस प्रसंग को भूलकर बताओ मेरे योग्य क्या सेवा है।

चन्दन—(सोचते हुए) आया तो किसी और काम से था, पर अब दूसरी बात ध्यान में आ गई है। महीने डेढ़ महीने बाद तुम्हारी भाभी की वर्षगांठ आ रही है। हम चाहते हैं इस अवसर पर उसे कोई अमर उपहार भेंट में देना।

गिरिधर—(हँसते हुए) भला इसमें तुम्हें कौन-सी कठिनाई आ सकती है।

चन्दन—कठिनाई है तभी तो तुम से बात कर रहे हैं। अब की बार तुम रत्नाकर जी से हमारा सौदा पटवाओ। तब हम समझें कि तुम हमारे मित्र हो।

गिरिधर—तुम कहा क्या चाहते हो। मैं तुम्हारा अभिप्राय नहीं समझा।

चन्दन—सीधी बात यह है मित्र रत्नाकर जी को धन की आवश्यकता है और हमें किसी ऐसी पुस्तक की जो हमारे नाम से छप जाये। और उसका समर्पण हम अपनी पत्नी के नाम करें। कहो, कैसी रही? कोई नाटक या उपन्यास दिलवाओ। रुपया तुम जितना कहोगे, दे देंगे। बोलो, चुप क्यों हो गये।

गिरिधर—मेरे विचार में तो रत्नाकर जी इस बात को नहीं मानेंगे।

चन्दन—बात कर देखना, बात करने में क्या बुराई है। वह न माने तो किसी और से पूछ लेना। तुम ठहरे सम्पादक। अनेकों लेखकों से तुम्हारा परिचय है। मैं तो गीतों का संग्रह छपवा लेता। पर गीत बहुत ही कम हैं।

गिरिधर—देखो, एक-दो दिन बाद इसका उत्तर दूँगा।

चन्दन—बात हो ही जाए तो ठीक है। समय बहुत ही कम है। उसकी छपवाई इत्यादि भी फिर मैं बढ़िया ही चाहता हूँ।

गिरिधर—चिन्ता मत करो।

चन्दन—आओ चलें। तुम्हें रत्नाकर जी के यहाँ छोड़ता चलूँ। कार साथ ही है। (इतने में रत्नाकर नीचे से आवाज बेते हैं)

रत्नाकर—(नेपथ्य से) गिरिधर, गिरिधर !

गिरिधर—(ऊँचे स्वर में) आ जाओ भाई (चन्दनदास से) अच्छा, अब तुम जाओ चन्दनदास। समय मिला तो मैं अभी बात कर देखूँगा।

रत्नाकर—(आते हुए) बाह चन्दनदास जी भी हैं। गिरिधर बहुत देर लगा दी तुमने आने में भाई।

चन्दन—यह तो आपके यहाँ पहुँचने की बहुत जल्दी में थे। मेरे आ जाने के कारण कुछ देर रुक गये। सुनाइए, आप सकुशल तो हैं ?

रत्नाकर—सब आपकी कृपा है।

चन्दन—अच्छा भाई ! अब मुझे आशा हो गिरिधर बाबू।

गिरिधर—अच्छा चलो, तुम्हें देर हो रही है।

चन्दन—अच्छा। नमस्कार रत्नाकर जी।

रत्नाकर—नमस्कार भाई। (चन्दनदास जाता है कुछ देर बाद नेपथ्य में कार चलने की आवाज)

गिरिधर—न जाने क्यों मुझे इस आदमी से बड़ी घृणा है। दुष्ट कहीं का।

रत्नाकर—इसे पीछे कोस लेना, पहले यह बताओ कि रुपयों का प्रबन्ध हुआ कि नहीं ?

गिरिधर—रुपये तो मेरी जेब में हैं, तुम्हारी ओर ही आ रहा था कि यह महाशय आ धमके । (जेब से रुपये निकाल कर देता है) दं तो हैं ।

रत्नाकर—ठीक है, काम चल जाएगा । गोपा क्या कर रही है ?

गिरिधर—अपने कमरे में बैठी टाइप की प्रैक्टिस कर रही है ।

रत्नाकर—अच्छा, बुलवाओ उसे । उससे भी मिलता चलूँ । नहीं तो नाराज होगी ।

गिरिधर—पहले बैठो । मुझे तुमसे कुछ विशेष बातें करनी हैं ।

रत्नाकर—अच्छा, तो बैठ जाता हूँ । कहिये, अब आपको मुझसे क्या कहना है ?

गिरिधर—चन्दनदास जी एक पुस्तक छपवाना चाहते हैं ।

रत्नाकर—हाँ, हाँ ! खुशी से छपवायें, प्रेस है किसलिए । क्या है कोई कविता संग्रह है ?

गिरिधर—यह तो तुम्हारी इच्छा पर है । कविता संग्रह हो जाए या नाटक हो जाए, उन्हें कोई फ़र्क नहीं पड़ता ।

रत्नाकर—मेरी इच्छा का क्या प्रश्न है इसमें । जो कुछ देंगे, वही छप जायेगा ।

गिरिधर—वह कहाँ से देंगे । उनके पास तो कुछ है ही नहीं । वह तो केवल रुपया देंगे ।

रत्नाकर—रुपया तो वह छपवाई का देंगे ही । पर छापाँगा क्या उनका सिर ?

गिरिधर—उनका नहीं, अपना कहो । मेरे कहने का अर्थ यह है कि केताब लिखनी आपको पड़ेगी और उसके ऊपर नाम उनका होगा ।

रत्नाकर—(डाँटकर) गिरिधर ! मुझ से ऐसी बातें करते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती ।

गिरिधर—पागल हुए हो । शर्म की इसमें क्या बात है । व्यापार है भाई । तुम्हें पैसे की जरूरत है, उसे किताब की । दोनों की जरूरत पूरी हो जायेगी ।

रत्नाकर—(फीकी हँसी हँस कर) गिरिधर, अपनी जरूरतों के लिए इन्सान अपनी सन्तान नहीं बेचता ।

गिरिधर—(हँसता है) झूठी बात है मित्र । मैंने स्वयं अपनी आँखों से जरूरत के लिए इंसान को अपनी सन्तान बेचते देखा है । मजबूरियाँ इंसान से जो करा लें, वह थोड़ा है ।

रत्नाकर—हो सकता है । अपवाद भी दुनिया में ही होते हैं ।

गिरिधर—अपवाद की इसमें क्या बात है । आँखों के सामने ही यह सब कुछ हो रहा है । फिर इतने भावुक होने की क्या बात है । सन्तान का इसमें प्रश्न ही कहाँ से आ गया । कहाँ सन्तान, कहाँ एक पुस्तक ।

रत्नाकर—अपने-अपने भाव हैं मित्र ! तुम नहीं जानते । रचना कलाकार को प्राणों से भी अधिक प्रिय होती है । सन्तान से बढ़कर उसमें उसकी ममता लिपटी होती है । नहीं नहीं मित्र ! यह मेरी क्षमता से बाहर की बात है । धन के लिए मैं अपनी आत्मा नहीं बेच सकता ।

गिरिधर—दोस्त क्षणों में ही तुम भावोवेश में आ जाते हो । प्राणों से सिंचित रचना देने की बात ही कौन कर रहा है । इधर, उधर से तुम्हें मार कर एक किताब लिख कर दे दो उसे । दो हजार रुपये मिल जाएंगे ।

रत्नाकर—खैर, जो भी हो, मैं इस बात का पक्षपाती नहीं हूँ कि हर व्यर्थ के आदमी को लेखक बना दिया जाए । समाज को यह कितना बड़ा धोखा देना है ।

**गिरिधर**—समाज को तो धोखा मिलता ही रहेगा दादा । और चन्दनदास जैसे लेखक भी पैदा होते ही रहेंगे, क्योंकि जिन्हें जरूरत है, जो भूखे हैं वह इनके शिकार होंगे ही । मैं चाहना था कि दो हजार किसी अपने ही आदमी को मिल जाए ।

**रत्नाकर**—खैर, जो कुछ भी हो । मुझे इस किस्म के पैसे की जरूरत नहीं है । मैं धृणा करता हूँ इन बातों से । और सुनो गिरिधर ! यदि तुम मेरी समय असमय की माँग से ऊब उठे हो तो मैं तुम्हें आगे से कभी भी तग करने नहीं आऊँगा ।

**गिरिधर**—ओहो इसमें मेरे ऊबने का प्रश्न ही कहाँ उठता है । मैं तुम पर एहमान नहीं करता । तुम्हें किसी वस्तु की आवश्यकता पड़ती है, मुझ से ले जाते हो । आवश्यकता पूरी होने पर लौटा देते हो । जब कभी मुझे आवश्यकता पड़ती है तुमने भी तो पूरी की है । यह तो बात आज मेरे सामने आई थी, मैंने तुम्हारे सामने रख दी । तुम्हें नहीं आवश्यकता तो न मही । इसमें घुरा मानने की क्या बात है ।

**रत्नाकर**—मेरी समझ में नहीं आता कि तुम्हारे जैसा अखड व्यक्ति इस बात को पसन्द कैसे कर रहा है । तुम वही व्यक्ति हो जो इसे और दीपक दोनों को गालियाँ देते थे और आज तुम्ही मेरे सामने प्रस्ताव रखते । वास्तव में ही यह अचम्भे की बात है ।

**गिरिधर**—होना ही चाहिए तुम्हें अचम्भा । मैं वास्तव में ही इस किस्म के आदमियों से धृणा करता हूँ ।

**रत्नाकर**—फिर आज ही तुम्हें क्या हुआ जो मुझे सीख देने चले हो ।

**गिरिधर**—इसका उत्तर फिर किसी दिन दूँगा, आज नहीं । (गोपा का प्रवेश)

**गोपा**—अरे बाह, दादा ! आप कब से आए हुए हैं ?

**रत्नाकर**—हो गई कुछ देर ।

गोपा—(गिरिधर से) क्यों जी आपने मुझे दादा के आने की सूचना क्यों नहीं दी ?

गिरिधर—क्योंकि मुझे दादा से कुछ विशेष बातें करनी थीं ।

रत्नाकर—नहीं बातें-वातें तो कुछ नहीं करनी थीं इसे । मैं तनिक जल्दी में हूँ । पूछने पर पता चला कि तू टाईप का अभ्यास कर रही है । (हंसकर) फिर मैंने सोचा कि साधक की साधना में विघ्न नहीं डालना चाहिए ।

गोपा—(हंसते हुए) अब तो आप बड़ी अच्छी बातें सोचने लगे हैं दादा । अच्छा तो यह बताओ, चाय पियोगे या शरबत ।

रत्नाकर—कुछ नहीं, मुझे मकान मालिक के पास इसी समय जाना है । उसने नोटिस दिया है न । उसे रुपये देने जा रहा हूँ । अच्छा तो अब मैं चलूँ ।

गिरिधर—कार्यालय की ओर आओगे ?

रत्नाकर—कह नहीं सकता । यदि कोई काम न पड़ गया तो आने की चेष्टा करूँगा । (जाता है)

गोपा—क्यों जी, कौन सी ऐसी विशेष बात थी जिसके लिए मुझे यहाँ नहीं बुलाया गया ।

गिरिधर—क्या जरूरी है कि हर बात तुम्हें बताई जाए ।

गोपा—(रूठने के स्वर में) न बताओ मेरी बला से ।

गिरिधर—(हंसकर) पगली । चल, चलकर मुझे खाना खिला, फिर मैं तुझे सारी बात बताऊँगा । तू रूठती है तो मुझे बड़ी अच्छी लगती है ।

गोपा—चलो हटो । हर वक्त मजाक करते रहते हैं । (दोनों हंसते हुए जाते हैं ।)

(धीरे-धीरे रंगभूमि पर अंधकार छा जाता है । एक-दो क्षण बाद उसी ममरे में गिरिधर बैठा कुछ लिख रहा है । मेज पर बहुत सी

किताबें पड़ी हैं। नेपथ्य में मोटर का हार्न। कुछ ही देर बाद चन्दनदास का प्रवेश)

चन्दन—मैं आ सकता हूँ।

गिरिधर—जरूर, जरूर। आप भी कभी-कभी कमाल की बातें करते हैं, आइए बैठिये। (दोनों बैठते हैं)

चन्दन—मैं इधर से निकल ही रहा था, मैंने सोचा मिलता ही चलूँ। सुनाओ, फिर सुबह रत्नाकर से बात हुई कि नहीं?

गिरिधर—क्या बताऊँ मित्र! बड़ी मुश्किल से मना पाया। पहले तो वह किसी बात पर मानने को तैयार ही नहीं थे।

चन्दन—यह भी बहुत समझो, जो तुम्हारी बात उन्होंने मान ली।

गिरिधर—और नहीं तो क्या? मैं जानता था कि उन्हें आजकल पैसे की बहुत जरूरत है, पर भाई! यह कलाकार लोग पैसे को धूल बराबर भी नहीं समझते। मैंने तुमसे बिना पूछे ही दो हजार तक कह दिया।

चन्दन—अरे, इस बात की कोई चिन्ता नहीं। जितना तुम कहोगे, उतना ही दे दूंगा। बस मेरा काम हो जाना चाहिए। और, हाँ किताब छपने पर उसकी आलोचना कर देना बढ़िया सी। एक बार अपना नाम साहित्य जगत् में छा जाए।

गिरिधर—अरे वाह। भला यह भी कोई कहने की बात है, तुम देखते चलो। तुम्हारे कैसे ठाठ बना देंगे। याद रखोगे कोई मिला था।

चन्दन—वह तो सब तुम्हारी कृपा है भाई। तुम्हारी भाभी की साहित्यकारों के प्रति बड़ी श्रद्धा है, तो हमने सोचा, हम भी साहित्यकार बन जाएं। जब पैसा है तो क्यों न इसका सदुपयोग करें?

गिरिधर—होना ही चाहिए।

चन्दन—(हंसकर) तुम तो जानते हो कि मैंने अपनी बुद्धि और

पैसे के बल पर क्या कुछ नहीं किया। तुम्हें सम्भवतः ज्ञात नहीं कि अंजना मेरी सहपाठिनी थी।

गिरिधर—मे कक्षा में एक वर्ष तुमसे पीछे था। (हंसकर) पर इतना मुझे ज्ञात है कि तुम्हारी किसी बात से चिढ़कर अंजना ने तुम्हें एक बार डाँटा था।

चन्दन—हां याद आया (हंसकर) तब हम थे भी बड़े बुद्ध। अंजना को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए हमारे पास कोई आकर्षण नहीं था। उसे कला और साहित्य के प्रति बड़ी रुचि थी, फिर कालेज की साहित्य सभा का चुनाव हुआ, हमने इष्ट-मित्रों को खिला-पिला कर चुनाव जीता। उसे बनाया प्रधान, और स्वयं बन बैठे सभा के मंत्री। इस बहाने उससे बातचीत का कुछ अवसर मिलने लगा।

गिरिधर—(हंसकर) और धीरे-धीरे दूसरों की कविताओं के बल पर तुम कवि भी हो गये। तुम साहित्य सभा की गोष्ठियों में कविता पाठ करते, तुम्हारे इष्ट-मित्र व्यर्थ ही बाहवाही कर तुम्हारी धाक जमाते। इस तरह अंजना तुम्हारी ओर आकर्षित होनी चली आई। यह सब मेरी आंखों के सामने ही होता था। पर तब मुझे यह ज्ञात नहीं था कि यह रचनाएं तुम्हारी नहीं। दीपक से घनिष्ठ मित्रता होने से ही यह रहस्य खुला।

चन्दन—जो कुछ भी हो। हमें अपने ध्येय में सफलता मिली। अंजना हमारी पत्नी बनी। इधर एक-दो वर्षों में कई सभाओं में मैंने सभापति का पद ग्रहण किया। (हंस कर) साहित्यिक और कलाकार कहलाने पर आदमी को खूब यश मिलता है और फिर, हमारे सौदे में घाटा ही कहाँ है? अब रत्नाकर जी को दो हजार रुपये देकर किताब लेगे, छपवायेंगे। बिकेगी। धीरे-धीरे वह पैसा फिर अपने पास आ जाएगा। लो सिगरेट पियो।

गिरिधर—सुनो चन्दन ! मैंने आज ही अपने एक और लेखक मित्र

से बात की थी। रुपया तो वह भी उतना ही मांगते थे, पर वह लिख देंगे। रत्नाकर का कुछ पता नहीं, कब नांही करदे। मेरे विचार में वह हां कर तो गये हैं, पर लिखेंगे नहीं।

चन्दन—हमें तो किताब चाहिए जी। चाहे तुम किसी से लिखवा कर दो। बस ऐसे ही दो-तीन साल में तीन-चार किताबें हमारे नाम से छपवा दो। उनकी बढ़िया सी आलोचना करके हमारा नाम ऊँचे साहित्यकारों में गिनवा दो। बस प्यारे, फिर हमारा विचार है राजनीति में भाग लेने का। हो सका तो अगली बार विधान सभा के चुनाव में भी भाग लेंगे। भविष्य के लिए अनेक सुन्दर कार्यक्रम सोच रखे हैं। किसी दिन अवकाश के क्षणों में उनपर बातचीत करेंगे।

गिरिधर—अवश्य, अवश्य। आज की दुनियाँ में धन से क्या नहीं किया जा सकता। और सुनो, पुस्तक के विषय में किसी बात की लिखा पढ़ी तो नहीं होगी।

चन्दन—नहीं जी, भला इसकी क्या जरूरत है। उस हाथ पुस्तक की पांडुलिपि दें और इस हाथ रुपये लें। हम तीनों के अतिरिक्त चौथे आदमी को इस बात का आभास भी नहीं होना चाहिए।

गिरिधर—ठीक है, यही होगा। अच्छा हो, यदि तुम कुछ रुपये पहले ही दे दो, रुपया पाकर वह कुछ जल्दी ही काम समाप्त कर देंगे।

चन्दन—हाँ हाँ इसमें क्या हानि है। तुम्हारे होते हुए मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं। एक हजार, सुबह दे जाऊँगा और शेष पुस्तक मिलने पर।

गिरिधर—(ऊँचे स्वर में) गोपा ओ गोपा।

गोपा—(नेपथ्य में ऊँचे स्वर में) आई जी। (गोपा आती है)

गिरिधर—चाय पिलाओ, हम लोगों को।

चन्दन—अरे नहीं भाई। इस समय नहीं, फिर किसी दिन बैठूँगा। घर पर चार-पाँच मेहमान बैठे हुए हैं। समय हो रहा है उनके साथ पिकचर देखने जाना है।

गिरिधर—पर चाय मे ऐसी कौनसी देर लग जाएगी ।

चन्दन—नही, नही, फिर कभी (उठकर चलता हुआ) क्षमा करना गोपा देवी, कभी फुरसत मे आप लोगो के साथ बैठकर चाय पियूंगा । अच्छा नमस्ते । (जाता है)

गोपा—कौन थे ये ?

गिरिधर—कौन थे ये (व्यंग्य से) वही थे चन्दनदास जी, जिनकी तुम्हे कहानी मुनाई थी ।

गोपा—(हँसकर) बड़ी निराशा हुई होगी बेचारे को, जब आपने कहा होगा कि पुस्तक लिखने के लिए रत्नाकर दादा नहीं माने ।

गिरिधर—पगली, इसमे निराश होने की क्या बात थी । रत्नाकर तो पागल है एक छोटा सा नाटक लिख देने पर दो हजार रुपया मिल जाए तो क्या बुरा है ? प्रकाशक चार साल मे एक किताब पर इतने रुपये नहीं दे पाता ।

गोपा—क्यों, क्या कोई और लेखक तैयार कर लिया आपने ?

गिरिधर—नही जी, मैं स्वयं लिखूँगा ।

गोपा—आप ! खूब, मुझ से ही हँसी करने लगे ।

गिरिधर—क्यों, इसमे हँसी की क्या बात है ? क्या मैं लेखक नहीं ?

गोपा—लेखक महोदय क्या मैं पूछ सकती हूँ कि आज तक आपने कितनी पुस्तके लिखी है ?

गिरिधर—(हँस कर) एक भी नहीं । पर तुम देखना । मैं इस पुस्तक को कितनी जल्दी समाप्त करता हूँ । दो हजार रुपये से मेरे कितने ही पाप धुल जाएँगे । तुम टाईप तो कर दोगी न, मेरे नाटक को ?

गोपा—क्यों नहीं, पर मजदूरी लूँगी ।

गिरिधर—हा, हा । और लोग तो छः आना पृष्ठ देते हैं पर मैं

तुम्हें दो रुपया प्रति पृष्ठ दूँगा। (हँसकर) ऐसा धनी लेखक भाग्य से ही पैदा होता है। दो हजार रुपये मिलेंगे इस पुस्तक के। इसमें से कुछ रुपया लगाऊँगा दीपक की बीमारी पर।

गोपा—लो मुझे याद आ गया। आज फिर उनकी माँ आई थी, उन्हें कुछ पैसे की जरूरत थी। मेरे पास दस रुपये थे, मैंने दे दिये। बेचारी बड़ी दुःखी थीं, कितनी देर तक बैठ कर रोती रहीं।

गिरिधर—कल मैं खुद जाऊँगा उनके पास, और उनकी आवश्यक वस्तुएँ उन्हें खरीद कर दे आऊँगा।

गोपा—कहाँ से लाकर दे आयेंगे? अब पैसे कहाँ हैं? आपको तो राजा भोज के यहाँ जन्म लेना चाहिए था। हर एक की जरूरतें पूरी करते फिरते हो।

गिरिधर—(हँस कर) क्या पता मैं पूर्वजन्म में राजा भोज ही रहा होऊँ। (हँसता है)

गोपा—आप तो सब बातें मजाक में उड़ा देते हैं।

गिरिधर—मजाक की बात नहीं गोपा, भगवान् ने चन्दनदास की बुद्धि घुमा दी है जो वह मेरे पास आया है। कल सुबह एक हजार रुपया दे जाएगा। बाकी एक हजार पाँच-छः दिन में दे देगा।

गोपा समझ में नहीं आ रहा। आज आप कैसी पागलों जैसी बातें कर रहे हैं। कही दफ़्तर में बूटी तो नहीं छान आए।

गिरिधर—नहीं, नहीं। मैं पूरी तरह होश-हवाम में हूँ। याद रखो गोपा बुद्धिमान मनुष्य संसार में बहुत कुछ कर सकता है। अच्छा छोड़ो इन बातों को। पहले जल्दी चलकर चाय पिलाओ। और देखो, कल से अपनी टाईप की मशीन मेरे यहाँ कमरे में लाकर रखो। मैं लिखता जाऊँगा, तुम टाईप करती जाना।

गोपा—आपकी बातें तो मेरी समझ में बिल्कुल नहीं आ रहीं।

(जाती है गिरिधर भी उठकर चल बेते हैं)

[ रंगमंच पर अन्धकार हो जाता है, प्रकाश होने पर गोपा टाईप कर रही है, तभी बाहर से रत्नाकर की दरवाजा खटखटाते हुए आवाज आती है । ]

रत्नाकर—(ऊँचे स्वर में बाहर से) गिरिधर ।

गोपा—(ऊँचे स्वर में) आई दादा । (बाहर जाकर दरवाजा खोलती है, दोनों आते हैं)

रत्नाकर—कहकर नहीं गया कि कहाँ जा रहा है ।

गोपा—बस यही कह कर गये थे कि शीघ्र ही आऊँगा, पर दो-तीन घंटे हो गये, अभी तक तो लौटे नहीं ।

रत्नाकर—बैठ गया होगा किसी मित्र के यहां शतरंज या केरम खेलने । इसका नाम तो अनोखेलाल होना चाहिए था । कुछ पता नहीं लगता इसके स्वभाव का कहाँ तो रोज घर आ जाता है मिलने, दो-दो घंटे गप्पें मारता है और कहाँ आज छः दिन हो गये सूरत ही नहीं दिखलाई श्रीमान् ने । इधर तुम भी नहीं आई कई दिनों से, तुम्हारी भाभी याद करती रहती हैं ।

गोपा—इन दिनों वह एक पुस्तक लिखने में व्यस्त रहे हैं । इसलिए समय नहीं मिला होगा । मैं उस पुस्तक को टाईप करने में लगी रही ।

रत्नाकर—(हैरानी से) वह एकदम पुस्तक पर ही आगया, दिखा तो सही क्या है ?

गोपा—अपनी अलमारी में रखकर ताला लगा गये हैं ।

रत्नाकर—अच्छा जी, तब तो अवश्य कोई महान् ग्रन्थ लिखा जा रहा है ।

गोपा—छपने के बाद पढ़ लेना । आखिर एक प्रति समर्पित होकर आपके पास आयेगी ही ।

रत्नाकर—अभी तक कितना लिख चुका है ?

गोपा—समाप्त हो गया है ।

रत्नाकर—तब तो वास्तव में कमाल ही कर दिया गिरिधर ने । छः दिन में पूरी पुस्तक लिख डाली । भई, मैंने इतनी पुस्तकें लिखी हैं पर इतनी शीघ्र तो मैं भी कोई पुस्तक नहीं लिख सका । अच्छा, गोपा, मैं चलो, तुम आजकल में घर तो आना ।

गोपा—देखो, हो सका तो आज ही शाम को आऊँगी ।

रत्नाकर—अरी, हां सुन, मैंने एक बड़ा नाटक लिखा है । उसे टाईप करदे । सोच में मत पड़, छः आना पृष्ठ दे दूंगा ।

गोपा—कर दूंगी । मैं तो अपना खर्च इसी काम से निकालना चाहती हूँ । इनका क्या विश्वास । जब इच्छा होती है नौकरी छोड़ देते हैं ।

रत्नाकर—गिरिधर से भी पुस्तक टाईप करने का कुछ ले रही हो कि नहीं ?

गोपा—हां हाँ क्यों नहीं, दो रुपया प्रति पृष्ठ ।

रत्नाकर—(हँसकर) दो रुपया प्रति पृष्ठ । अरी, तू भी किसकी बातों में आ गई, वह तुझे देने दिलाने का कुछ नहीं बहका रहा होगा ।

गोपा—वाह ! देने के कैसे नहीं ? सौ रुपये तो मैं पहले ले भी चुकी हूँ । बैठो न दादा, तुम्हें उन रुपयों में से मिठाई खिलार्ज मंगा कर ।

रत्नाकर—कल खाऊँगा । मुझे जरा अपने प्रकाशक की ओर जाना है । (कहते कहते जाता है, गोपा टाईप करती है, कुछ क्षण बाद गिरिधर और चन्दन आते हैं)

गिरिधर—गोपा । चन्दनदास जी का जो नाटक तुमने टाईप किया है, वह मेरी अलमारी में से ले आना । और देखो, चाय भी जरा बना लाना ।

गोपा—अच्छा जी, अभी आई । (जाती है)

चन्दन—हाँ, तो गिरिधर बाबू इसका नाम क्या रखता है ?

**गिरिधर**—नाम तो मैंने इसका अभी तक कोई नहीं रक्खा। पर मेरा विचार है, तुम इसका नाम 'समर्पण' रखो। क्योंकि तुम्हें भाभी की वर्षगांठ पर इसे समर्पित भी करना है। और सुनो, जिस पृष्ठ पर भाभी के नाम समर्पण लिखो, उस पर नीचे अपने हस्ताक्षरों का ब्लाक बनवा कर छपवाना।

**चन्दन**—मेरा यह विचार पहले से ही था। अच्छा, तो अब यह बताओ, छपवाएँ कहाँ इसे ? रत्नाकर जी के यहाँ ही ?

**गिरिधर**—उनका प्रेस तो दो-तीन दिन से बन्द पड़ा है। मैनेजर को उन्होंने निकाल दिया है। इधर कुछ कम्पोजीटर भी छोड़ गये हैं, वेतन जो समय पर नहीं मिलता था। मैं किमी ऐसे जरूरतमन्द के यहाँ से छपवा दूँगा जो सुन्दर और शीघ्र छाप दे। मेरे होते हुए तुम्हें किसी बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए ( हँसकर ) अब की बार तुम भाभी को इतनी बढ़िया वस्तु समर्पित करोगे कि सब देखते ही रह जायेंगे और जीवन भर न भूलेंगे।

**चन्दन ( हँसकर )**—सब तुम्हारी कृपा है भाई। मैं तो समझता हूँ मित्र हो तो तुम्हारे जैसा हो, जो मित्रता को निभाना जाने।

**गिरिधर**—मित्र की इसमें क्या बात है चन्दनदास जी। यह तो मेरा कर्तव्य था, जो मैंने पूरा किया। (गोपा चाय का सामान मेज पर रखती है )

**गोपा**—यह लीजिये जी। यह रहा पूरा नाटक।

**गिरिधर**—लाओ मित्र, शेष एक हजार रुपया और यह लो अपनी पुस्तक।

( प्यालियों में चाय डालता है। तीनों जने चाय पीते हैं )

**चन्दन**—धन्यवाद। यह लीजिए, सौ-सौ के दस नोट। अच्छा, तो प्रेस वाले से कब बात कराओगे ?

**गिरिधर**—कब क्या, अभी चलता हूँ, तुम्हारे साथ; गोपा मेरा कोट

देना और सुनो, शाम को मेरे दफ़्तर आ जाना । ( गोपा खूँटी से उतार कर कोट देती है )

चन्दन—गोपा जी, हमारे घर उस दिन गिरिधर जी के साथ भोज पर आना होगा ।

गिरिधर—अवश्य, अवश्य । आएंगी क्यों नहीं । ( कोट पहन कर ) आओ चलें । मुझे ये रुपये अभी किसी के यहाँ पहुँचाने हैं । गोपा, मैं भाभी जी के यहाँ होता हुआ दफ़्तर पहुँचूँगा । समझीं । ( दोनों जाते हैं, नेपथ्य में कार चलने की आवाज़ )

( रंगमंच पर अन्धकार होता है, प्रकाश के बाद गिरिधर बैठा हुआ लिख रहा है, गोपा चाय बना रही है )

गिरिधर—कल चन्दनदास जी के यहाँ उत्सव अच्छा रहा । बड़ी भीड़ थी । 'समर्पण' नाटक की बड़ी चर्चा थी ।

गोपा—मैं कहती हूँ, तुमने जो नाटक लिखकर दो हजार रुपये में बेच दिया यह बहुत ही बुरा किया । अपने नाम से छपवाते, यश मिलता, नाम होता ।

गिरिधर—यश तो जैसा मिलता, मैं ही जानता हूँ; पर ये दो हजार रुपये नहीं मिलते जिन्होंने हमारे इतने संकट धो दिये । तुम्हारे पास भी दो-चार साड़ियाँ और बर्तन, मैंने भी एक नया सूट बनवा लिया (हँसकर) कहो, चन्दनदास जिन्दाबाद ।

गोपा—चन्दनदास जिन्दाबाद की इसमें क्या बात है । रात-रात भर जागकर लिखते आप रहे.....

गिरिधर—अच्छा, तो फिर गिरिधर दास जिन्दाबाद कहो । ( तभी रत्नाकर का प्रवेश )

रत्नाकर ( गुस्से से )—गिरिधरदास जिन्दाबाद । तुम कुछ जानते हो, तुम्हारे उस चन्दनदास ने मेरे साथ क्या किया है ?

गिरिधर—नां, मैं क्या जानूँ ।

रत्नाकर—यह जो 'समर्पण' नाटक छपा है, पढ़ा है तुमने ।

**गिरिधर**—अभी तो एक प्रति आई है मेरे पास । पढ़ूँगा किसी दिन । उसकी बढ़िया सी आलोचना करनी है । पर बात क्या है ?

**रत्नाकर**—अरे, वह तो मेरे नाटकों की नक़ल है । ऐसे लगता है जैसे उसने मेरे सब नाटक सामने रखकर उनमें से एक नाटक बना लिया हो । पात्रों के नाम अवश्य दूसरे हैं । बाकी पृष्ठ-संवाद अक्षरशः वे ही हैं ।

**गिरिधर**—ऐसा । तब तो बहुत बुरा किया उसने । कानूनी कार्यवाही करो, दस-पन्द्रह हजार मिल जायेंगे ।

**रत्नाकर**—वह तो मैं करूँगा ही । आज सुबह मैंने उसे बुलाकर डांटा, ऊपर से रोब गांठने लगा । जब से मैंने पढ़ा, तभी से मेरा हृदय अशान्त है । मैं तुमसे मिलना चाहता था, कहीं तुम अपनी मित्रता की दुहाई न दो ।

**गिरिधर**—अजी नहीं, इसमें मित्र-वित्र की क्या बात है ? मौका मिला तो मैं स्वयं उसको डांटूँगा ।

**रत्नाकर**—बस तो फिर ठीक है, मैं अपने वकील की ओर जा रहा हूँ । ( उठ कर चलने लगता है ) अच्छा फिर मिलेंगे ।

**गिरिधर**—बैठो तो सही कुछ देर ।

**रत्नाकर**—नहीं, नहीं, समय नहीं है । ( कहते-कहते जाता है )

**गोपा** ( कुछ क्षण बाद ) हूँ । तो यह तुम्हारा ही किया-धरा है । कैसे अनजान से बने हुए थे !

**गिरिधर**—अब समझा । दादा को रुपया कहाँ से मिलेगा ? मामा जी का ऋण कहाँ से उतरेगा । उसने हजारों रुपया ब्लैक में कमाया है । वह इधर खर्च हो जाने से उसका कुछ बनता-बिगड़ना नहीं । लाखों रुपया है उसके पास ।

**गोपा**—पर आपको शर्म नहीं आई यह सब करते हुए !

**गिरिधर**—शर्म, शर्म की इसमें क्या बात है । चन्दनदास ने दीपक

का काफी रक्त निचोड़ा है, मैंने उसे पाठ पढ़ाना चाहा, पढ़ा दिया। अब यह जीवन में कभी भी साहित्यकार बनने का नाम नहीं लेगा। दूसरी की रचनाओं पर कलाकार बनने वाले के साथ यही सुलूक होना चाहिए।

( सभी नेपथ्य में कार सकती है और गुस्से से भरा हुआ चन्दनदास घाता है )

चन्दन ( गुस्से से )—गिरिधर !

गिरिधर—आ जाओ भाई।

चन्दन ( गुस्से से )—जानते हो, तुम्हारे उस लेखक ने मुझे कितना धोखा दिया है ?

गिरिधर—अभी कुछ क्षण पहले रत्नाकर जी ने आकर मुझे बताया। मैं तो हैरान रह गया, अब क्या होगा ?

चन्दन—होगा, मेरा और तुम्हारा सिर।

गिरिधर—रत्नाकर अभी अपने वकील जौहरीमल की ओर गये हैं।

चन्दन—हूँ, मैं तुम्हारे उस लेखक से अच्छी तरह निबटूँगा। उसे जेल भिजवाऊँगा।

गिरिधर—उससे पीछे निबटते रहना भाई। पहले रत्नाकर जी से निबट लो। नहीं तो तुम्हारी बड़ी बदनामी होगी। बात यह है कि हमारे पास कोई सबूत नहीं है कि यह पुस्तक उसकी लिखी हुई है।

चन्दन—यही तो मुसीबत है। चलो रत्नाकर को रास्ते में ही रोकें आकर। तुम्हीं इस समस्या को मुलझा सकते हो। ओफ ओ ! बड़ी मुसीबत में फंस गया मैं तो। कुछ समय में नहीं आ रहा कि क्या करूँ ? मेरे गुस्से के मेरा खून उबल रहा है।

गिरिधर—जरा मेरा कोट उतारना खूँटी से।

( कोट पहनता हुआ चन्दनदास के साथ जाता है )

[ पटाक्षेप ]

रिहर्सल

मत्येन्द्र शरत्

## पात्र

रामेश्वर

मालती

भगवान

अभिमन्यु

आगन्तुक—१

आगन्तुक—२

[बम्बई के अढ़ाई कमरे वाले एक प्लेट का सजा हुआ ड्राइंग-रूम । फ़र्नीचर और सजावट के सामानों को गिनना व्यर्थ है, इसलिए कि यदि यह नाटक खेला गया तो खेलने वाले अपने साधन और अपनी सुविधा के अनुसार ये सब चीजें जुटायेंगे, मेरी दी हुई सूचि के अनुसार नहीं । वैसे आम फ़र्नीचर के साथ एक कोने में एक कुर्सी और एक राइटिंग-टेबल भी हो तो अच्छा है । टेलीफ़ोन उसी टेबल पर होगा ।

कमरे के दो दरवाजे हैं—दायीं और बायीं ओर । दोनों दर्शकों से अदृश्य हैं । बायीं ओर का दरवाजा फ़्लेट का प्रमुख द्वार है, जिससे आगन्तुक आयेंगे । दायीं ओर का दरवाजा अन्दर बेड-रूम और किचन में जाता है । नौकर इस द्वार से स्टेज पर आयेगा ।

पर्दा उठने पर घर का नौकर फ़र्नीचर और दूसरा सामान भाड़ता-पोंछता दीख पड़ता है । पहाड़ी लहजे में वह कोई गीत भी गुनगुना रहा है ।

कुछ क्षण बाद एक सुन्दर, स्वस्थ युवक दायीं ओर से अन्दर आता है । यह घर का स्वामी रामेश्वर है । वह एक ओर चुपचाप खड़ा हो जाता है और नौकर को गीत गाते देखता रहता है । सहसा वह आगे बढ़ता और नौकर को पुकारता है ]

रामेश्वर—भगवान !

भगवान —(चौकता है और रामेश्वर को देखता है ) जी बाबू जी !

रामेश्वर—भगवान, तुम काम कम करते हो और गाना ज्यादा गाते हो.....

भगवान—( दोनों हथेलियाँ मलता हुआ ) बाबू जी, मैं खाली बैठे गाना नहीं गाता । मैं तो काम करते हुए गाना गाता हूँ...जितना माता हूँ उतना ही काम करता हूँ ।

रामेश्वर—अच्छा अच्छा । तुम ने सब चीजें ठीक-ठाक कर ली हैं न ?

भगवान—जी बाबू जी, बस चिवड़ा रह गया है । कमरा साफ़ करके मैं अभी चिवड़ा तैयार करता हूँ ।

रामेश्वर—अच्छा तो जल्दी करो... (बीवार घड़ी की ओर देखता हुआ ) पाँच बजने वाले हैं ।

भगवान—( अन्दर की ओर जाता हुआ ) जी बाबू जी !... ( सहसा रुक कर, रामेश्वर को सम्बोधित करता हुआ ) बाबू जी !

रामेश्वर—क्या बात है ?

भगवान—बाबू जी, बीबी जी सचमुच ही फिलिम कम्पनी में जा रही हैं ?

रामेश्वर—क्यों ? तुम से मतलब ?

भगवान—जी, अगर बीबी जी को फिलिम में काम मिल रहा है तो बाबू जी फिर मेरे भी भाग जग गये । फिर तो बाबू जी, बीबी जी की वजह से मुझको भी कहीं चान्स मिल जायगा ।

रामेश्वर—( रस लेते हुए ) क्यों, तुमको भी फिलिम में काम करने का शौक है ?

भगवान—( गहरी साँस लेकर ) अजी बाबू जी, इसी शौक की वजह से तो घर से भाग कर यहां बम्बई आया हूँ ।

रामेश्वर - ( मुस्करा कर ) अच्छा, अगर तुम्हें बीबी जी से अपनी सिफारिश करवानी है तो तुम्हें चाहिए कि अपने काम से अपनी बीबी जी को हमेशा खुश रखो...तभी बीबी जी तुम्हारे लिए भी कोशिश करेंगी ।...समझ गये न ?

भगवान—( सिर हिलाता हुआ ) जी... समझ गया ।

रामेश्वर—अच्छा, अब बातें मत करो । तुम्हारी बीबी जी कपड़े बदल कर यहाँ आने ही वाली हैं । उनके यहाँ आने से पहले ही तुम किचन में पहुँच कर काम में जुट जाओ !

भगवान—अच्छा जी.....

[ लेकिन जाता नहीं, खड़ा रहता है ]

रामेश्वर—जाओ भागो !

भगवान—( जाते हुए ) जा रहा हूँ बाबू जी !

[भागता हुआ-सा अन्दर चला जाता है । रामेश्वर मुस्कराता हुआ खड़ा रहता है और तब कमरे में चारों ओर दृष्टि फँकता है । कुछ क्षण बाद वह दायीं ओर बढ़ता है और दायें प्रवेश-द्वार के निकट खड़ा होकर कहता है ]

रामेश्वर—अरे मालती, तुम अभी तक तैयार ही नहीं हुईं !

मालती—( अन्दर से ) हो गई हूँ । बस, साड़ी पहन रही हूँ ।

रामेश्वर—वह तो तुम पिछले आधे घंटे से पहन रही हो... (रुक कर) किसी बड़े आदमी ने सच ही कहा है, जितने समय में औरतें कपड़े पहन कर तैयार होती हैं, उतने समय में किसी देश की किस्मत का फैसला हो सकता है—मैं तो बल्कि यह कहना चाहूँगा कि किसी एक देश का नहीं, सारे संसार की किस्मत का फैसला हो सकता है ।

मालती—( हँस कर ) और मजा यह कि इतना सब हो चुकने पर भी स्त्री तैयार न हो पायेगी.....

रामेश्वर—( जोर से हँसता है । ) मालती, जीवन में आज पहली बार इंटेलिजेंट बात कही है तुमने ! जरा इसी बात पर बाहर तो आ जाओ.....

मालती—यह लीजिए आ गयी ।

[सुन्दर और कीमती रेशमी कपड़ों में आवृत्त मालती बाहिनी ओर

से आती है । रामेश्वर उसे अतृप्त दृष्टि से देखता रहता है । मालती लजा जाती है ]

मालती—( लजाये स्वर में ) ऐसे क्या देख रहे हैं ?

रामेश्वर—( मुस्करा कर ) कुछ नहीं । कभी-कभी पुरानी आदतें याद आ जाती हैं ।

मालती—( लजा कर ) अच्छा बैठ तो जाइए ! आपको खड़े रहने की सजा किस ने दी है ?

रामेश्वर—( बैठते हुए ) यों ही । तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा था । तुम भी तो बैठो ।

मालती—लीजिए ।

[ सोफे पर बैठ जाती है । ]

रामेश्वर—( मालती की ओर देखते हुए ) अच्छा, तो 'नवजोती फ़िल्म्स' के डायरेक्टर ने तुम्हें अपनी इसी पिक्चर में एक साइड-रोल दे दिया है ।

मालती—हाँ...मिसेज कांतावाला के बहुत कहने पर ही वे राज़ी हुए...बात यह है कि उनकी कार्टिंग हो चुकी है ।

रामेश्वर—ओ !... तो जो रोल तुम करने जा रही हो, वह पहले कौन कर रहा था ?

मालती—कोई मिस अंजिल मेहता थीं ।.....अब उनकी जगह मैं यह रोल कलूंगी । डायरेक्टर साहब कह रहे थे कि इस पिक्चर में तो रोल बहुत छोटा है, लेकिन अगली पिक्चर में उन्होंने मुझे बड़ा रोल देने का प्रामिज्ञ किया है ।

रामेश्वर—( हँस कर ) हाँ, अगर उनकी अगली पिक्चर बनी तो.....

मालती—(बात काट कर) क्या मतलब ?

रामेश्वर—भई, इस लाइन का क्या भरोसा...खैर, आखिर डाय-रेक्टर साहब ने क्या कहा ?

मालती—उन्होंने कहा था कि वे आज अपने प्रोडक्शन-मैनेजर को यहाँ भेजेंगे, ताकि वह कुछ जरूरी जानकारी हासिल कर ले और मुझसे इस पिक्चर के लिए टर्म्ज आदि तय कर ले...

रामेश्वर—(स्वर में किंचित् आश्चर्य है) टर्म्ज प्रोडक्शन-मैनेजर तय करता है ?.....

मालती—हाँ। बात यह है कि प्रोडक्शन-मैनेजर, पिक्चर के फिनाँ-सर सेठ बुलाकीदास दामोदरमल का न्वास आदमी है। सेठ जी उसी की मानते हैं। अगर प्रोडक्शन-मैनेजर मुझ से इम्प्रेस हो जाय और सेठ जी से मेरे फेवर में बात करे, तो मेरे चान्सेज बड़े स्ट्रोंग हो जाते हैं.....

रामेश्वर—यानी ?.....

मालती—यानी इस पिक्चर में भी अच्छे पैसे मिल जाएंगे और अगरली पिक्चर में तो हो सकता है कि मुझे ही हीरोइन ले लिया जाय.....

रामेश्वर—और इस तरह तुम्हारी किस्मत जाग उठेगी।

मालती—साथ में तुम्हारी नहीं ?

रामेश्वर—हाँ, अब तो मेरी तुम्हारी किस्मतें जुड़ गयी हैं.....  
(मुस्करा कर) चलो, यह सौभाग्य भी बिरलों को ही नसीब होता है।

मालती—(कुछ आश्चर्य से) कौन-सा सौभाग्य ?

रामेश्वर—पत्नी के टिकट पर ख्याति पाना.....

मालती—(उठ खड़ी होती है) अच्छा, अब बातें बनाना छोड़िए।  
कुछ काम कीजिए।

रामेश्वर—(फुर्ती से उठ खड़ा होता है) आज्ञा दीजिए, क्या काम है ?

मालती—(व्यग्र स्वर में) जरा देखना, चाय और खाने का सामान तैयार है न ?

रामेश्वर—इतनी छोटी-छोटी बातों की चिन्ता कर अपना यह सुन्दर शरीर घुलाने लगोगी तो फिर हीरोइन कैसे बनोगी ?

मालती—तुम्हें तो हमेशा मजाक ही सूझता रहता है ।

रामेश्वर—हमेशा नहीं, तुम्हें देखकर ही सूझता है ।

मालती—अच्छा इस वक्त रहने दो । जरा देख लो सब चीजें ठीक हैं न ?

रामेश्वर—हां सब ठीक है । सिर्फ चिवड़ा अभी तक तैयार नहीं हुआ ।

मालती—(चिढ़े स्वर में) दो घंटे हो गये हैं, अभी तक तैयार नहीं हुआ ! यह भगवान बहुत सुस्त है ।

रामेश्वर—(हँस कर) क्या करे बेचारा ? इस नाम के सभी जीव-जन्तु सुस्त होते हैं ।

मालती—(चिढ़ कर) तुम हमेशा उसका पक्ष लेते हो । क्या बात है ?

रामेश्वर—भाई मैं आस्तिक हूँ । भगवान का पक्ष न लूँ ?..... और फिर इस बम्बई में भगवान—मेरा मतलब है नौकर—मिलते कहाँ हैं ?

मालती—(घड़ी की ओर देखती हुई) यह घड़ी भी कम्बलत सुस्त हो गयी है । कितने धीरे-धीरे चल रही है ।

रामेश्वर—आज तो तुम्हें सभी चीजें सुस्त दीखेंगी । आज तुम्हारा दिल जो बल्लियों उछल रहा है ।

मालती—तुम्हारी घड़ी में क्या टाइम है ?

रामेश्वर—दीवार-घड़ी ठीक है । दोनों घड़ियों में एक टाइम है—पाँच बजने में दो मिनट ।

रामेश्वर—(मुस्करा कर) हाँ, अगर उनकी घड़ी में भी पाँच बज गये होंगे तो ।

मालती—(बायें दरवाजे तक जाती है, सहसा मुड़ती है) अच्छा सुनो जी, तुमने मेरे नये फोटोग्राफ्स देखे ?

रामेश्वर—वे जो तुमने फ़िल्म के इस इण्टरव्यू के लिए खिचवाये हैं ?

मालती—हाँ !

रामेश्वर—नहीं, तुमने दिखाये ही नहीं । (भूठी शिकायत के स्वर में) तुम भी मालती.....

मालती—अभी लो.....(चंचलता से) जरा बताना, कैसे हैं ? (रार्यटिंग-टेबल की ड्रायर में से एक लिफ़ाफ़ा लाती है) लो, ये देखो...

रामेश्वर—(लिफ़ाफ़े में से तस्वीरें निकालता है । देखते हुए) हूँ... गुड !.....वेरी गुड !.....स्टूडियो शाँ-ग्रीला में खिचवाये हैं न ?

मालती—(चेहरे पर प्रसन्नता है) हाँ !

रामेश्वर—(एक फ़ोटो देखते हुए) अच्छा ! इस फ़ोटो में आप ने हाथ में फूल भी ले रखा है । यह किस लिए साहब ?

मालती—जिससे फ़ोटो में स्वाभाविकता आ जाय ।

रामेश्वर—(हँसता है) ओह ! मैं तो समझा था कि.....

मालती—क्या ?

रामेश्वर—कि जिससे फ़ोटो में खुशू आ जाय । (धीमी हँसी) नहीं साहब ये तीनों पोज़ अच्छे हैं ।

मालती—(प्रसन्न स्वर में, लेकिन बनती हुई) भई, मुझे तो यह पोज़ पसन्द नहीं ।

रामेश्वर—क्यों ? इसमें क्या खराबी है ?

मालती—देखो न...इसमें मेरी नाक कितनी छोटी है !

रामेश्वर—(हँस कर) क्या हर्ज है ? साल दो साल में अपने आप बड़ी हो जायगी ।

मालती—(बन कर) तुम फिर मज़ाक कर रहे हो !

रामेश्वर—नहीं, सीरियसली कह रहा हूँ । इस फ़ोटो में तो मुझे दूसरा ही डिफ़ेक्ट नज़र आता है ।

मालती—क्या ?

रामेश्वर—तुमने गले में जो हार पहन रखा है वह इतना बढ़िया है कि सारा ध्यान तो यही खींच लेता है । अब हुआ यह है कि इस फ़ोटो में यह हार फ़ोरग्राउंड में आ गया है और तुम्हारा चेहरा बैक-ग्राउंड में चला गया है ।

मालती—(खीज कर) अच्छा, लाइए फ़ोटोग्राफ़्स ! मेरी ग़लती थी जो मैंने आपको दिखाये ।

[रामेश्वर हँसता हैसहसा कॉल बेल बजती है ]

मालती—(मुदित स्वर में) लो वे आ गये हैं, मालूम पड़ता है ।

रामेश्वर—ये फोटो कहाँ रखूँ ?

मालती—उधर डाल दो न मेज़ पर । (आवाज़ देती है ।)  
भगवान ! ओ भगवान !

भगवान—(अन्दर से) जी बीबी जी (चिवड़े की तश्तरी लिये चला आता है ।) ...जी बीबी जी ।

मालती—देख, दरवाज़े पर जो साहब हैं, उन्हें अन्दर ले आ ।

भगवान—अच्छा जी बीबी जी ।

[बांयी ओर लपकने लगता है ।]

मालती—गधे, वह चिवड़े की तश्तरी हाथ में लिये बाहर कहाँ जा रहा है ? उसे, यहीं रख दे न !

भगवान—ओह ! ग़लती हो गयी बीबी जी ।

[तश्तरी मेज़ पर रखता है]

मालती—जल्दी जा ।

भगवान—(जाते हुए) जा रहा हूँ बीबी जी ।

मालती—(सहसा) अरे भगवान सुनो सुनो ।

भगवान—(वापस आकर) जी बीबी जी !

मालती—एकदम दरवाजा मत खोल । पहले भिरमिरी में से भाँक कर देख आ कि कौन साहब हैं बाहर ।

भगवान—अच्छा बीबी जी ।

[बाहर चला जाता है]

रामेश्वर—क्यों इस बात का क्या मनलब ?

मालती—(चतुर बीबियों के अंदाज़ में) थोड़ी सावधानी बरतने में क्या हर्ज है ? यह भी तो हो सकता है कि यह कॉल-बेल प्रोडक्शन-मैनेजर साहब की बजाय हमारे किसी परिचित या मित्र ने बजायी हो ।

रामेश्वर—(सोचता-सा) वैसे आज किसी के आने की बात तो नहीं थी ।

मालती—अजी, ये मित्र या परिचित लोग पहले से टाइम तय करके थोड़े ही आया करते हैं ?

[भगवान भागा-भागा आता है ।]

भगवान—बीबी जी, एक मोटे-से साहब दरवाजे पर खड़े हैं ।

रामेश्वर—मोटे-से साहब ?

मालती—मोटे-से साहब ! (रामेश्वर को देखती हुई) हमारे जानकारों में तो कोई मोटे-से साहब हैं नहीं । यकीनन वे प्रोडक्शन-मैनेजर ही हैं । जा, भागता हुआ जा और उन्हें फौरन अन्दर ले आ ।

भगवान—(भागता जाता है) अच्छा जी.....

मालती—(डाँटते स्वर से) तुम अब यहाँ इस तरह मत खड़े रहो । वहाँ कुर्सी पर बैठ जाओ । 'फ़िल्मफ़ेयर' पड़ा है, उसे देखते रहो (रामेश्वर बिना कुछ बोले कुर्सी की ओर बढ़ता है ।) पर तुम अपना कालर

तो ठीक कर लो । ( रामेश्वर अपना कालर ठीक करने लगता है )  
लेकिन पहले ज़रा तुम मेरा जूड़ा ठीक कर दो ।

[रामेश्वर अपना कालर वैसे ही छोड़ मालती का जूड़ा ठीक करने लगता है]

रामेश्वर—(ठीक करके) यह लो.....

मालती—अब ठीक है न ?.....

रामेश्वर—(मुस्करा कर) फ़र्स्ट क्लास !

मालती—(धीमे स्वर में) सुनो जी. मैं कैसी लग रही हूँ ?

रामेश्वर—(उसको बांहों में लेने का प्रयास करते हुए) सुनना चाहती हो तो.....

मालती—(अपने को रामेश्वर की बांहों से छुड़ाते हुए) छोड़ो जी ! देखो, वे साहब आ गये हैं ।

[भगवान के साथ एक मोटे-से साहब अन्दर पधारते हैं । रामेश्वर मालती को झुक्त कर देता है । मालती उन सज्जन को देख, निराशा से रामेश्वर की ओर देखती है]

मालती—(नमस्ते करती हुई) नमस्ते अभिमन्यु जी.....

अभिमन्यु—(हाथ जोड़ नमस्ते करता है) नमस्ते मालती जी...

मालती—आइए, आइए । इधर बैठिए ।

अभिमन्यु—(बैठता हुआ) धन्यवाद ! (रामेश्वर की ओर इशारा कर) आप शायद देवटिया साहब हैं ?

मालती—(मुस्करा कर) जी हाँ !

[रामेश्वर अभिमन्यु जी को नमस्ते करता है]

रामेश्वर—(अभिमन्यु की ओर संकेत कर) मालती, आपकी तारीफ़ !

मालती—ओह ! आप हैं श्री अभिमन्यु पाँडे—‘माहिम आर्ट थियेटर’ के सेक्रेटरी । स्वयं भी बहुत अच्छे अभिनेता हैं । पिछले वर्ष क्लब की ओर से जो ‘उत्तरा अभिमन्यु’ नाटक हुआ था न.....

रामेश्वर—हाँ हाँ.....

मालती—उसमें अभिमन्यु का पार्ट आप ही ने किया था ?

रामेश्वर—(मुस्करा कर) ओह ! साहब बड़ी प्रसन्नता हुई आप से मिलकर । कहिए, आज हम पर कैसे कृपा की ?

अभिमन्यु—(मुस्करा कर) अजी, कृपा कैसी ? अपने स्वार्थ से आया हूँ । मालती जी को फिर कष्ट देना है ।

मालती—किस बात के लिए ?

अभिमन्यु—इस बार 'माहिम आर्ट थियेटर' की तरफ से 'चट्टान' ड्रामा खेला जा रहा है । मिस्टर रायमोहन ही डायरेक्ट कर रहे हैं । कल एक इन्फॉर्मल मीटिंग कर, हमने उसकी कास्टिंग कर ली थी । लीडिंग रोल आप कर रही हैं । इस बुधवार को ६ बजे उसका पहला रिहर्सल है—गोखले हॉल, बी. बी. सी. आई. दादर में । आपको आना है ।

मालती—माफ़ कीजिए मैं न आ सकूंगी ।

अभिमन्यु—(घबराये स्वर में) क्यों, आपकी तबियत तो ठीक है ?.....

मालती—जी हाँ, तबियत तो ठीक है । पर मैं ड्रामे में पार्ट न कर सकूंगी ।

अभिमन्यु—(आश्चर्य) यह आप क्या कह रही हैं मालती जी ? हमारे पिछले ड्रामों की कामयाबी में आपका बहुत बड़ा हाथ रहा है । आपके भरोसे पर ही हमने इस बार इतना मुश्किल ड्रामा चुना है । मिस्टर रायमोहन की तो शुरू ही से यह राय थी ।

मालती—आप मिस्टर रायमोहन को मेरा धन्यवाद कह दीजिएगा और मेरी ओर से माफ़ी माँग लीजिएगा ।

अभिमन्यु—पर ड्रामे में काम न करने की वजह तो बता दीजिए । क्या हम लोगों से कोई गलती हो गयी है ?

मालती—जी नहीं । बात यह है कि मुझे एक फ़िल्म में काम

मिल गया है। अगले महीने से उस फ़िल्म की शूटिंग है। मैं दो नावों में न चल सकूंगी।

**अभिमन्यु**—(हताश स्वर में) तो आपने भी फ़िल्म ज्वायन कर ली ? खैर !.....किस पिकचर में काम कर रही हैं आप ?

**मालती**—पिकचर का नाम तो मालूम नहीं। पर उसे नवजोति फ़िल्म कम्पनी प्रोड्यूस कर रही है।

**अभिमन्यु**—(साश्चर्य) नवजोति फ़िल्म कम्पनी ! पर मालती जी नवजोति की एक अभिनेत्री तो हमारे ड्रामे में भी काम कर रही हैं। बहुत कोशिश कर रही हैं बेचारी कि हीरोइन का रोल मिल जाय उन्हें। कल ही आयी हैं।

**मालती**—(कौतूहलपूर्वक) क्या नाम है उनका ?

**अभिमन्यु**—मिस अंजलि मेहता।

**मालती**—(प्रसन्न होकर) जरूर कोशिश कर रही होंगी ! उस पिकचर में जो रोल वे करने वाली थीं, वह अब मैं कर रही हूँ। अब बेचारी स्टेज पर काम न करेंगी तो क्या करेंगी ?

**अभिमन्यु**—अच्छा !

**मालती**—जी हाँ। खैर आप अपने ड्रामे में मेरा रोल उन्हें दे दीजिए।

**अभिमन्यु**—जी मजबूरी में यह करना ही होगा। वैसे तो ज्यादा अच्छा यही होता कि आप ही हीरोइन का रोल करतीं।

**मालती**—मैंने अपनी मजबूरी आपको बतला दी अभिमन्यु साहब।

[ खड़ी हो जाती है ]

**अभिमन्यु**—(खड़े होते हुए) आप एक बार और सोच लीजिएगा मालती जी। मैं टेलीफ़ोन नम्बर छोड़े जाता हूँ। अगर आपकी राय बदल जाय तो मिस्टर रायमोहन को रिंग कर लीजिएगा।

मालती—नहीं। उसकी कोई जरूरत नहीं अभिमन्यु साहब। मैंने अच्छी तरह सोच कर ही आपको इनकार किया है।

अभिमन्यु—(विवशता से) जैसी आपकी इच्छा मालती जी। आप से प्रार्थना करना मेरा कर्तव्य था। उसका मैंने पालन किया।

मालती—आपको निराश करते हुए मुझे भी दुःख हो रहा है।

अभिमन्यु—नहीं जी। कोई बात नहीं। अच्छा तो मैं चलूँगा, नमस्ते...नमस्ते...

मालती—नमस्ते।

[ अभिमन्यु कंधे उच्चकाता हुआ जाता है ]

रामेश्वर—(अभिमन्यु की पीठ से) नमस्ते ! (मालती के निकट आता हुआ) टेलीफोन नम्बर तो रख लिया होता मालती।

मालती—क्या जरूरत थी, जब मैं इस ड्रामे में काम ही नहीं कर रही ! एक साथ तो मैं दो जगह कंसेंट्रेट नहीं कर सकती !

रामेश्वर—तो भी। नम्बर रख लेने में हर्ज ही क्या था ? वक्त-जरूरत काम आता।

मालती—जी हाँ। टेलीफोन नम्बर न हुआ, गोया किसी अफसर का टेस्टिमोनियल हो गया जो वक्त-जरूरत काम आता।

[ कॉल बेल फिर बजती है ]

मालती—देखो, घंटी बजी है। इस बार जरूर प्रोडक्शन-मैनेजर ही हैं।

रामेश्वर—भगवान को भेज कर पहले मालूम कर लो। कहीं धोखा न खाना पड़े।

मालती—भगवान !...ओ भगवान !

[ भगवान इस बार, अंदर बायीं ओर से नहीं, बायीं ओर से ही आता हुआ आता है ]

भगवान—(कहता हुआ आता है) जी बीबीजी। इस बार दुबले

से साहब हैं जी। हाथ में एक लम्बा-सा बड़ा थैला है। जी उन्हें ले आऊँ अंदर ?

मालती—(आश्चर्य) तुम्हें कैसे मालूम ? तू कहाँ था ?

भगवान—जी, मैं दरवाजे पर ही खड़ा था, बीबीजी।

मालती—अच्छा जा। जल्दी से उन्हें ले आ।

भगवान—अच्छा जी। [ भागता हुआ चला जाता है ]

मालती—(फुर्ती से) तुम ज़रा मेरा जूड़ा ठीक कर दो। बार-बार ढीला हो जाता है। (रामेश्वर मुस्करा कर जूड़ा ठीक करने लगता है) बस-बस। लो वे आ गये हैं।

[ एक बुबले-पतले से साहब कुर्त्ता-धोती में प्रवेश करते हैं। हाथ में एक लम्बा, भारी-सा थैला है। भगवान पीछे-पीछे है और बाहिने दरवाजे के निकट पहुंच, वहाँ खड़ा हो जाता है। ]

मालती—(आगंतुक से) आइए जी...आइए...आइए...

आगंतुक—(हँसता-सा, सोफ़े की ओर बढ़ता हुआ) मैं जानता था मेरा स्वागत होगा।

मालती—हाँ हाँ, आप बैठिए न, खड़े क्यों हैं ?

आगंतुक—(हँसता-सा) और मेरे मित्र कहते थे—लोग तुम्हें घर में नहीं घुसने देंगे। परंतु मेरा विश्वास था कि परोपकार की भावना लेकर आये हुए सज्जन का कहीं निरादर न होगा।

रामेश्वर—आप बैठ तो जाइए...

आगंतुक—धन्यवाद ! पहले मैं अपनी बात समाप्त कर लूँ... (सोफ़े पर बैठ जाता है) हाँ, तो मैं कह रहा था कि मैं परोपकार की भावना के बशीभूत ही यह कर रहा हूँ। बात यह है कि अपने देश के दिन प्रति-दिन गिरते हुए स्वास्थ्य को देख कर ही मैंने जोगेश्वरी में 'शुद्ध राष्ट्रीय डेयरी' स्थापित की है जहाँ मैं स्वयं अपने हाथों शुद्ध घी तैयार करता हूँ। उस घी को बेचने वाले विशुद्ध न कर दें, इस कारण मैं स्वयं

ही बँगलों और फ़्लैटों में जाकर अपने इस शुद्ध घी को बेच कर अपने राष्ट्र का स्वास्थ्य सुधार रहा हूँ। आप जैसे दुर्बल स्वास्थ्य वालों को चाहिए कि मेरे ही घी का सेवन कर राष्ट्र के स्वास्थ्य-सुधार के इस महान कार्य में मुझे सहयोग दें और ढेर सारा पुण्य बटोरें.....

रामेश्वर—(बात काट कर) सुनिए, महाशय जी...

आगन्तुक—(बीच में ही, फुर्ती से) मैं महाशय नहीं, मैं शास्त्री हूँ। मेरा नाम अश्वलोचन शास्त्री है।

मालती—तो सुनिए अश्वलोचन जी...

आगन्तुक—(बात काट कर) आप घी का नमूना चाहती होंगी वह मैं साथ लाया हूँ (हँस कर) मैं स्त्रियों की प्रकृति से परिचित हूँ... (हँसता हुआ) वे जल्दी ही पुरुषों की बात का विश्वास नहीं करतीं।

रामेश्वर—अश्वलोचन जी, हम पर एक अनुग्रह कीजिए.....

आगन्तुक—(साश्चर्य) केवल एक ? .....मैंने तो अपना समूचा जीवन ही.....

रामेश्वर—जी वह ठीक है। इस समय आप यहाँ से पधारिये। कुछ मेहमान हमारे यहाँ आने वाले हैं।

आगन्तुक—(प्रसन्न होकर) तब तो और भी अच्छा है। मेरे घी का और भी अधिक प्रचार होगा.....उन लोगों का भी स्वास्थ्य दुर्बल होगा।

रामेश्वर—जी नहीं, उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। और इसीलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि उनके आने से पहले ही आप हमसे सप्रेम विदा ले लीजिए। वरना वे लोग आपको बलपूर्वक यहाँ से विदा कर देंगे.....

आगन्तुक—(फुर्ती से खड़ा होता हुआ) तब तो मैं उन्हें कष्ट देना नहीं चाहूँगा। मैं स्वयं ही आप लोगों से विदा लूँगा...किन्तु मैं फिर आऊँगा। अच्छा तो नमस्ते...

रामेश्वर—नमस्ते ।

आगन्तुक—(चलते हुए) नमस्ते देवी जी ।

मालती—नमस्ते ।

रामेश्वर—भगवान, शास्त्री जी को दरवाजे तक छोड़ आओ ।

भगवान—जी बाबू जी !

[भगवान शास्त्री जी के पीछे-पीछे जाता है । मालती और रामेश्वर शास्त्री जी और भगवान को जाते हुए देखते हैं । उन लोगों के चले जाने के बाद, मालती हताश भाव से सोफे पर गिर पड़ती है ]

मालती—(निराश स्वर में) ओह ! आज तो शुरूआत ही गलत हुई... (दरवाजे की ओर देखते हुए) मुझे तो लगता है, अब कोई नहीं आयेगा । (स्वर हँसासा हो जाता है) मेरा भाग्य ही ऐसा है ।

रामेश्वर—(सोफे पर मालती के निकट बैठता हुआ) मालती तुम तो बहुत जल्दी निराश हो जाती हो ! ...इतनी जल्दी हौसला छोड़ोगी तो काम कैसे बनेगा ?

मालती—(नीचे फर्श की ओर देखती हुई) अगर प्रोडक्शन-मैनेजर को आना होता तो वह अब तक कभी के आ गये होते... अब तो बहुत देर हो गई है... भगवान ! .....

[भगवान बायें द्वार से भागा-भागा आता है]

भगवान—जी बीबीजी !

मालती—देखो, हम लोगों के लिए चाय ले आओ...

भगवान—(ठगा-सा मालती का मुँह देखता है) और वो जो साहब आने वाले थे बीबीजी ?.....

मालती—(तेज स्वर में) तुम्हें जो कहा है, कर ।

भगवान—(जाते हुए निराश स्वर में) अच्छा बीबीजी !

[भगवान अन्दर जाने लगता है । सहसा कॉल-बेल फिर बजती है ।]

रामेश्वर—(चौंक कर) कॉल-बेल बजी है मालती ।

भगवान—(भागता हुआ लौट कर आता है) घंटी बजी है बीबीजी !

मालती—(भावरहित स्वर में) हमारे दरवाजे की नहीं है ।

रामेश्वर—(खड़ा होता है) क्या कह रही हो मालती ? ... इतनी भी निराशा किस काम की ? .. देख तो लो, दरवाजे पर कौन है ... भगवान जरा.....

मालती—(खड़ी होकर, फुर्ती से) कोई जरूरत नहीं भगवान ।

[भगवान भागता-भागता रुक जाता है]

रामेश्वर—(कड़े स्वर में) भगवान जाओ, दरवाजे पर जो भी साहब हैं उन्हें अन्दर ले आओ ।

भगवान—(भागता जाता है) अच्छा बाबू जी ।

[मालती की ओर देख भागता चला जाता है]

रामेश्वर—(प्यार से) लाओ मालती, तुम्हारा जूड़ा ठीक कर दूँ । बार-बार ढीला हो जाता है ।

मालती—(सिर हिलाती हुई) नहीं नहीं ।

रामेश्वर—(जूड़ा ठीक करते हुए) लाओ न... बस, एक मिनट में ठीक होता है ।

मालती—(लजाकर) छोड़ो छोड़ो... वे आ रहे हैं ।

[कोट-पतलूनधारी एक सज्जन का प्रवेश । हाथ में चमड़े का पोर्ट-फोलियो है । अन्दर आते ही ठिठक जाते हैं । भगवान अन्दर चला जाता है ]

आगन्तुक—नमस्ते । जी, श्रीमती मालती देवटिया आप ही हैं न ?

मालती—(घबराहट में साड़ी का पल्लू ठीक करते हुए और नमस्कार के लिए हाथ उठाते हुए) जी हाँ । आप.....

आगन्तुक—जी, मैं नवजोती.....

मालती—(बात काट कर) मैं समझ गई। आइये, बैठिए... ये हैं मेरे पति रामेश्वर देवटिया। 'मातृभूमि' में सर्कुलेशन मैनेजर हैं।

आगन्तुक—नमस्ते। (बैठता है) बहुत खुशी हुई आपसे मिलकर।

रामेश्वर—मुझे भी बहुत खुशी हुई।

मालती—(रामेश्वर से) जरा आप भगवान से कह दीजियेगा। चाय यहीं ले आये।

रामेश्वर—हाँ, हाँ। अभी लो।

[रामेश्वर अन्दर चला जाता है।]

आगन्तुक—अजी रहने दीजिए। तकलीफ़ क्यों करती हैं?

मालती—इसमें तकलीफ़ की क्या बात है? यह तो चाय का ही टाइम है। वैसे आपको कोई आपत्ति तो नहीं है? चाय पीते हैं न?

आगन्तुक—बहुत। हमारा तो काम ही ऐसा है कि चाय का सहारा लेना पड़ता है।

मालती—जी हाँ, आपको डे-नाइट वर्क जो करना पड़ता है।

आगन्तुक—(हँसता-सा) जी हाँ, ज़िदा रहने के लिए करना ही पड़ता है।

मालती—और देखिए, लोग समझते हैं कि आपकी लाइन में लोग हजारों-लाखों कमाते हैं। यह कोई नहीं देखता कि उसके पीछे कितनी कड़ी मेहनत छिपी रहती है।

आगन्तुक—बात यह है जी, लोग दूसरों के काम को बहुत अच्छा और आसान समझते हैं।

मालती—जी, यही बात है, गो मैं ऐसा नहीं समझती। लीजिए चाय आ गई... हाँ यहीं रख दो।

[भगवान चाय तथा खाने का सामान एक ट्रे में लेकर प्रवेश करता है और ट्रे को छोटी मेज़ पर रख, अन्दर जाता है। मालती चाय बनाना आरम्भ करती है]

आगन्तुक—सुना है मिसेज देवटिया, आप अभिनय बहुत अच्छा करती हैं ।

मालती—(शरमाती हुई) अजी कहाँ ? बस यूँ ही, मामूली-सा... लीजिए चाय लीजिए ।

आगन्तुक—(चाय का प्याला लेते हुए) धन्यवाद ! मिसेज कांता-वाला आपकी बहुत प्रशंसा करती थीं ।

मालती—(कुछ आश्चर्य से) आप भी मिसेज कांतावाला को जानते हैं ?

आगन्तुक—(साश्चर्य) क्यों, मुझे आपसे मिलने के लिए.....

मालती—(बात काट कर) ओह, मैं समझ गई...मिसेज कांता-वाला की बहुत मेहरबानी है मुझ पर । यह सब जो हो रहा है, उन्हीं की कृपा है ।

आगन्तुक—जी हाँ ।

मालती—देखिए, मुझे अच्छी एक्टिंग के लिए सबसे पहला मंडल मिसेज कांतावाला ने ही दिया था । उन्हें मेरी एक्टिंग बहुत पसंद आई थी ।

आगन्तुक—(हँसी का लहजा) ओह । कौनसा नाटक था ?

मालती—गोगोल के एक नाटक का हिन्दी अनुवाद था—‘शाह-बादशाह’ । हिन्दी में अच्छे नाटक हैं ही कहाँ ?

आगन्तुक—जी हाँ, कहाँ हुआ था यह ?

मालती—दामोदर हाल परेल में । देखिए, शायद उसका कोई स्टिल मेरे पास होगा । अभी दिखाती हूँ आपको.....

[जाती है और छोटी मेज से एक फोटो निकालती है]

मालती—(आती हुई) जी यह देखिए । मैं मेयर की लड़की बनी हुई हूँ ।

आगन्तुक—(प्रशंसात्मक स्वर में) जी, बहुत अच्छा है। आपकी ड्रेस तो उन्होंने विदेशी रखी है।

[रामेश्वर अन्दर से आता है और राइटिंग टेबल के निकट बैठ जाता है]

मालती—मेरी नहीं, सारी कास्ट की ड्रेस उन्होंने विदेशी रखी है। हिन्दुस्तानी ड्रेस में भी मेरे फोटोग्राफ्स हैं... (ऊँची आवाज़ में रामेश्वर से) ज़रा देखना जी, आज सुबह जो फोटो आये हैं, वह वहीं छोटी मेज़ पर रखे हुए हैं न ?

रामेश्वर—(दूर से) देखता हूँ...हाँ, यहीं रखे हैं।

मालती—ज़रा इधर दे देना... (धीमी आवाज़ में आगन्तुक से) अभी तीन-चार दिन पहले ही खिचवाये हैं—स्टूडियो शां-ग्रीला में।

रामेश्वर—यह लो !

[लिफ़ाफ़ा मेज़ पर रख देता है।]

मालती—(उत्साह भरे स्वर में) जी यह देखिए—तीनों पोज़ हैं—फ़ण्ट, प्रोफ़ाइल और फ़ुल फ़िगर।

आगन्तुक—(प्रशंसात्मक स्वर में) जी बहुत अच्छे हैं...बहुत ही अच्छे हैं। सच मानिए मिसेज़ देवटिया, मैं झूठी प्रशंसा नहीं कर रहा हूँ।

मालती—बहुत-बहुत धन्यवाद। आपका क्या खयाल है ? मेरा फ़ेस फ़ोटोजेनिक है या नहीं ?

आगन्तुक—(हिचकिचाहट के साथ) अब देखिए, मैं इस सिलसिले में क्या कह सकता हूँ ? यह तो...

मालती—(बात फाट कर) मैं समझ रही हूँ। पर तब भी... (टोन बदल कर) अरे आपने चिवड़ा तो लिया ही नहीं ? लीजिए न। बिलकुल ताज़ा है।

आगन्तुक—धन्यवाद ! इतना खा लिया है कि अब तो बिलकुल भी गुंजाइश नहीं रही है।

[लेकिन खाये निरन्तर जा रहे हैं]

मालती—अजी क्या खाया है आपने ? सारी प्लेटें ज्यों की त्यों रखी हैं ।

[हालाँकि प्लेटें खाली हो चली हैं]

आगन्तुक - (हँसने का अभिनय) नहीं जी, बहुत हो गया है । (रूमाल से मुँह पोंछ कर) मेरा खयाल है अब उस सिलसिले में भी कुछ बात कर ली जाय जिसके लिए मैं यहाँ आया हूँ ।

मालती—(प्रसन्न स्वर में) ओह ! अवश्य !...आप कॉन्ट्रेक्ट-फार्म तो अभी अपने साथ नहीं लाये होंगे !

आगन्तुक—(सोचता हुआ) कॉन्ट्रेक्ट फॉर्म ?...ओह आपका मतलब शायद प्रपोज़ल फॉर्म से है । वह तो मैं लाया हूँ । बैग में है । हमारा प्रॉस्पैक्ट तो आपने नहीं देखा होगा ।

मालती - उसे देखने का सौभाग्य तो अभी प्राप्त नहीं हुआ ।

आगन्तुक - मैं अभी दिखाता हूँ । (बैग खोलने को हाथ बढ़ाता है, सहसा रुक कर) वैसे एक बात पूछना चाहता था । दस हजार के लिए तो आपको कोई आपत्ति नहीं होगी ?

मालती—(चौंक कर) दस हजार ?

आगन्तुक—जी, दस हजार तो कोई बहुत बड़ी रकम नहीं है । और फिर आपकी...आई मीन पोजीशन को देखते हुए.....

मालती—(प्रसन्न स्वर में) नहीं, अगर आप इसे ठीक समझते हैं, तब मैं क्या कह सकती हूँ ?

आगन्तुक—साहब, मेरा तो खयाल है कि कम-से-कम इतना तो होना ही चाहिए !

मालती—चलिए, आप ही की बात मान ली ।

आगन्तुक—और टाइम कितना रखा जाय—दस साल ?

मालती—(चौंक कर) दस साल !

**आगन्तुक**—क्यों ? क्या दस साल बहुत कम हैं ? पर टाइम में क्या रखा है ?...आई...मीन पन्द्रह, बीस या लाइफ़ लाँग कर देंगे इसे.....

**मालती**—(चौंक कर) लाइफ़ लाँग ?...मालूम होता है आप लोगों की बहुत बड़ी-बड़ी योजनाएँ हैं ।

**आगन्तुक**—(हँस कर) जी हाँ । दूसरी कम्पनियों की अपेक्षा हमारी योजनाएँ बड़ी ही हैं । लाइफ़ लाँग प्रपोज़ल के सिलसिले में मैं आपसे एक आवश्यक बात पूछना चाहता था, यदि आप कुछ...आई मीन...माइंड न करें ।

**मालती**—हाँ हाँ, पूछिए न !

**आगन्तुक**—देखिए, सम्य सम्राज में एक महिला से इस प्रकार का प्रश्न करना...आई मीन...इडीसेंसी समझी जायगी, मगर जरूरत देखते हुए मजबूर हूँ । पूछना ही पड़ रहा है.....

**मालती**—नहीं-नहीं, आप संकोच मत कीजिए । पूछिए न.....

**आगन्तुक**—जी, आपकी डेट आफ़ बर्थ यानी जन्म-तिथि क्या है ?...मेरा मतलब है आपकी उम्र इस समय कितनी है ?

**मालती**—(शरमाती हुई) देखिए, मेरी जन्मपत्री तो खो गयी है, इसीलिए सही तारीख़ या सन् बताना मेरे लिए सम्भव नहीं है । हाँ, मेरे हाईस्कूल सार्टिफिकेट में मेरी जन्म-तिथि १६ अक्टूबर १९२९ लिखी हुई है, जो मेरे विचार से ठीक है.....

**आगन्तुक**—यानी आपकी उम्र इस समय.....

[ टेलीफोन की घंटी बजती है ]

**मालती**—(ऊँची आवाज़ से) जरा देखिएगा जी किसका टेलीफोन है ?

**रामेश्वर**—(स्वर में थोड़ा व्यंग्य है) वही कर रहा हूँ साहब... (पृष्ठभूमि में रिसीवर उठाकर) हैलो...जी.....यह ६६१०० है...मैं

रामेश्वर देवटिया बोल रहा हूँ...जी हाँ...अच्छा...लेकिन...वो तो... मगर यहाँ तो.....

मालती—हाँ तो आप क्या कह रहे थे ?

आगन्तुक—मैं कह रहा था कि आपकी उम्र पच्चीस साल सात माह बँठती है । इसके अनुसार आपके लिए यह अच्छा होगा कि आप...

रामेश्वर—(टेलीफोन रखकर, ऊँची आवाज में) मालती !

मालती—किसका फ़ोन है ?

रामेश्वर—(ऊँची आवाज में) बताता हूँ । इधर आओ !

मालती—(धीमे से) ज़रा एक मिनट मुझे माफ़ कीजियेगा ।

[रामेश्वर के निकट जाती है]

आगन्तुक—हाँ, हाँ अवश्य ।

[चिवड़े की प्लेट की ओर हाथ बढ़ाता है]

मालती—(रामेश्वर के निकट) क्या बात है ? किसका फ़ोन था ?

रामेश्वर—नवजोति फिल्म कम्पनी के प्रोडक्शन मैनेजर का !

मालती—(साश्चर्य) नवजोति के प्रोडक्शन मैनेजर का ! लेकिन यह.....

रामेश्वर—पहले पूरी बात तो सुनो । उस ने फ़ोन पर कहा है कि उसे दिये हुए टाइम पर न पहुँच पाने का बहुत अफ़सोस है । उसे इस बात का भी अफ़सोस है कि वह कभी यहाँ न आ सकेगा क्योंकि कुछ मजबूरियाँ ही ऐसी हो गयी हैं । सेठ बुलाकीदास दामोदरमल को शेयर बाज़ार में ज़बरदस्त घाटा पड़ा है । वो दिवालिये हो गये हैं और फिल्म तो क्या, बीबी-बच्चों को भी फ़र्नांस करने लायक नहीं रहे । वह फिल्म और फिल्म कम्पनी सब ठप्प हो गयी है ।

मालती—(आवेश में) यह ग़लत है...ऐसा कैसे हो सकता है ?... किसी ने हमारे साथ मज़ाक किया है ।.....

रामेश्वर—मज़ाक कौन करेगा ? किसे ऐसी ज़रूरत पड़ी है ?

मालती—लेकिन...लेकिन नवजोति के प्रोडक्शन मैनेजर तो ये बैठे हैं ।

रामेश्वर—इनकी शक्ल पर लिखा हुआ तो है नहीं ।

मालती—तो...तो ये साहब कौन हैं ?

रामेश्वर—पूछ लो इन्हीं से ।

[मालती आगन्तुक के निकट आती है]

मालती—(आगन्तुक के निकट) क्यों साहब, क्या आप नवजोति फिल्म कम्पनी के प्रोडक्शन मैनेजर नहीं हैं ?

आगन्तुक—(साश्चर्य) नवजोति फिल्म कम्पनी ?... (प्लेट हाथ में ही लिये खड़ा हो जाता है) जी नहीं । मैं नवजोति इंड्योरेन्स कम्पनी का एजेंट हूँ । मिसेज कान्तावाला ने मुझे आपकी इंड्योरेन्स के लिए भेजा था ।

मालती—आपने पहले ही क्यों नहीं कहा ?

आगन्तुक—आपने कहने का मौका ही कहाँ दिया ?

मालती—आपको मौका निकालना चाहिए था ।

आगन्तुक—मैंने...आई मीन...कोशिश तो बहुत की थी..... मगर.....

मालती—(बात काट कर) मगर-वगर कुछ नहीं साहब । आप ठीक बात तो कर नहीं रहे हैं, आई मीन' आई मीन, करते जा रहे हैं । आपको सबसे पहले अपना कार्ड देना चाहिए था ।

आगन्तुक—मेरे कार्ड छपने गये हुए हैं । नहीं मैं एक की जगह दो-दो कार्ड पेश करता । वही एक मजबूरी हो गयी ।

[प्लेट मेज पर रख देता है]

मालती—आपकी मजबूरी ने मुझे कितनी बड़ी गलतफ़हमी में डाल दिया ।

आगन्तुक—इसके लिए मुझे अफसोस है । (कुछ रुककर इधर

उधर देखते हुए) अच्छा जी मुझे अब आज्ञा दीजिए । काफ़ी देर हो गयी है.....मैं फिर आऊँगा । अच्छा जी नमस्ते...नमस्ते ।

रामेश्वर—नमस्ते ।

[आगन्तुक अपना बैग उठाकर प्रस्थान करता है । उसके चेहरे पर मुस्कराहट है । मालती हताश भाव से सोफे पर धम्म से गिर पड़ती है ।]

मालती—(स्वर में थकान और निराशा हैं) ओह भगवान !...

[भगवान अन्दर से भागा भागा आता है]

भगवान—(निकट आकर) क्या लाऊँ बीबी जी ?

मालती—(जैसे शिकंजे में कसी जा रही हो) मेरा सिर !

रामेश्वर—(मुस्करा कर) भगवान, तुम्हारी बीबी जी थक गयी हैं । चाय पिलाने में इतनी मगन रहीं कि खुद ढंग से एक प्याला भी नहीं पी सकीं । जाओ भाग कर टी-पाट में थोड़ा पानी और ले आओ ।

भगवान—जो बहुत अच्छा !

[टो पाट उठा कर भाग जाता है । रामेश्वर मुस्करा कर मालती के पास बैठता है]

रामेश्वर—(शरारत से) क्यों, परसों ड्रामे की रिहर्सल में जाओगी या नहीं ?

मालती—(रुझाँसी) मैं कहती हूँ जी, मुझे तंग न करो ।

[मालती दोनों हाथों से अपना मुँह छिपा लेती है । रामेश्वर हँसता है]

[पर्दा गिरता है]

भाङ्

कृष्णचन्द्र

## पात्र

बेला

एलिजा

जमशेद

वमन भाई

खट्खटधारी

फोटो वाला

भंगिन

दर्शक

## पहला दृश्य

[ मिस बेला घड़ी की ओर देखती है । ड्राइंग-रूम में लगे हुए इस पुराने क्लॉक में ११ बज रहे हैं । मिस बेला पुस्तक पटक कर जम्माई लेती है और उठकर शीशे की ओर जाती है । उसने मादाम फ्रावाँ की बनाई हुई नई फ्रांसीसी गाउन पहन रखी है । यह लिबास जो नीचे से समुद्र की लहरों की भाँति मचलता-फिसलता हुआ शुरू होता है और छाती की ओर बढ़ता हुआ तंग होता चला जाता है । छाती पर सफेद-सफेद रेशमी झालरें इस तरह इकट्ठी हो गई हैं जैसे लहरों पर भाग चमक रही हो । बेला की गरदन में मोतियों की सतलड़ी है और कानों में हीरे । उसने केशों को अजन्ता के एक पुराने फैशन के ढंग पर सजाया है जिससे सिर के आधे भाग पर चोटी दिखाई पड़ती और आधे पर घाटियाँ और पीछे पुच्छलदार सितारा । वह नित्य की भाँति आज भी एक नए रूप में सजी हुई है । वह चेहरे से ऊपर केशों में दो सहस्र वर्ष पुरानी, कमर से ऊपर कुंवारी और कमर से नीचे छः बच्चों की माँ दिखाई देती है । सारांश यह कि वह अत्यन्त फैशनेबल, बल्कि 'अल्ट्रा-मार्डन' दिखाई देती है । पूर्णतया उस मिस्त्री मूर्ति की भाँति जो मादाम फ्रावाँ की दुकान की खिड़की में नित्य-प्रति एक नया लिबास पहने खड़ी रहती है ।

एलिजा जो बेला से अधिक सुन्दर, चंचल और होशियार है, बेला के उठने पर उसके पांवों की ओर झुकती है—उसका अभिवादन करने के लिये नहीं, बरन् उसके गाउन की उलझी हुई निचली लहरों को

सुलभाने के लिए। बेला उसे ऐसा करने देती है और स्नेह युक्त दृष्टि से उसकी ओर देखकर मुस्कराती है। इतने में बेला का 'बटलर' जो आधु से बेला का नौकर नहीं वरन् उसका बाप मालूम होता है, बड़े रस भरे ढंग से द्वार पर आकर कहता है—]

बटलर—जमशेद जी आए हैं।

बेला—(शीशे के सामने से हट कर) उन्हें अन्दर भेज दो। (एलिजा से) घम अब ठीक है। (एक अवदा दिखाकर) देख एलिजा, मैं कैसी लग रही है ?

एलिजा—ताजा और खिले हुए फूल जैसी—मानो अभी नहाकर आई हो (चुपके से) वे आगए, मैं जाती हूँ।

जमशेद—(बेला से) हैलो पट्टो।

बेला—(जमशेद से) हैलो, जिकजिक।

जमशेद—(एलिजा से) हैलो, छम-छम ! कैमी हो ?

एलिजा—अच्छी हूँ, मरकार।

[ एलिजा ट्रे और गिलास उठाकर द्वार से बाहर चली जाती है। जमशेद उसको तकता रहता है। जब वह द्वार से बाहर हो जाती है तो एक दम पलटकर बेला को बाहुपाश में लेकर कहता है --]

जमशेद—तुम्हारी एलिजा की चाल बहुत अच्छी है। कैसी छम-छम करती हुई चलती है।

बेला—बस कल इसे निकाल दूँगी...हटो, छोड़ दो मुझे।

जमशेद—डार्लिंग ! ऐसा मत करना। मैं तुमसे शादी इसीलिये कर रहा था कि दोहरा लाभ रहेगा। तुम्हारे साथ तुम्हारी नौकरानी भी... (हँसता है) समझ गई ?

बेला—जमशेद, कभी तो गम्भीरता से बात किया करो। जानते नहीं कैसा समय आ रहा है। चारों ओर आग-सी लग रही है।

जमशेद—हमारी क्लब तो सुरक्षित है।

बेला—माना तुम करोड़पति हो। परन्तु ऐसी भी मस्ती क्या? जब देखो क्लब, डान्स, डिनर, पिकनिक। कुछ काम-धन्धे की भी तो सोचा करो।

जमशेद—बाप चोर-बाजारी करता है, बेटा प्रेम-लीला में लगा रहता है। यह क्या कम काम है पट्टो?

बेला—और यदि बाप भी प्रेम-लीला में लग जाए तो?

जमशेद—तो हम चोर-बाजारी करेंगे और तम्हें 'गुड-बाई' कह देंगे—'टा-टा'। अपने खानदान को तो बस दो ही काम आते हैं। हाँ, एक तीसरा काम शराब बेचने का भी था, परन्तु वह 'मद्य-निषेध कानून' के कारण बन्द हो गया है।...अरे हाँ, कुछ पिलाओगी नहीं क्या?

बेला—क्या पियोगे?

जमशेद—होंठों की 'वरमाउथ', आंखों की 'शैम्पेन', आलिंगन की 'विहस्की'।

बेला—चप्पल की बरांडी नहीं?

जमशेद—वह शादी के बाद।

[बोनों हँसते हैं]

जमशेद—नहीं, सच, बड़ी प्यास लगी है। जल्दी से कुछ पिला दो।

बेला—(पलट कर निकट की अलमारी खोलती है जिसमें शराब की बोतलों की पंक्तियाँ दिखाई पड़ती हैं। फिर जमशेद की ओर मुड़कर देखती है।)—क्या पियोगे? कोनिक या बोर्वे?

[जमशेद बेला को बांहों में लेकर उसका चुम्बन ले लेता है। बेला एक सिनेमा अभिनेत्री की भाँति एक लम्बा चुम्बन देती है और पीछे की ओर झुक जाती है। चुम्बन के बाद वह एक लम्बा साँस लेती है और अपना चेहरा जमशेद के कंधे पर रख देती है।]

जमशेद—कितनी अच्छी शराब थी?

बेला—कितना लम्बा चुम्बन था ! Kiss me joe वाले चुम्बन की भाँति ।

जमशेद—नहीं, उससे दस सैंकिड कम था । (बेला उसकी ओर आश्चर्य-चकित नेत्रों से देखती है) हाँ, हाँ, मैं धड़ी देख रहा था ।

[ बेला धीरे से शराब की बोतल उठाकर ड्राइंग-रूम के कौने में 'बार' की ओर घूमती है । वहाँ पहुँचकर बिल्लोर के दो गिलासों में बेला शराब उंडेलती है और जल्दी से एक गिलास स्वयं पीने लगती है । ]

जमशेद—यह क्या कर रही हो ?

बेला—(गिलास पीकर) मुँह का मजा बदल रही हूँ ।

जमशेद—(अपना गिलास उठाकर गट-गट पी जाता है) या खुदा ? तेरा शुक्र है । मैंने सोचा तू कहीं अपना पति ही न बदल दो ।

[ बेला उसे मारने को दौड़ती है । जमशेद हँसता हुआ पहलू बचा जाता है । द्वार पर एलिजा आकर कहती है— ]

एलिजा—सरकार ! वमन भाई आए हैं ।

जमशेद—कौन वमन भाई ?

बेला—ग्रोल्ड प्रेस का प्रतिनिधि है । इन्टरव्यू करने आया है । मैंने समय दिया था ।

जमशेद—अच्छा तो मैं चलता हूँ । ऐसे नीरस काम के लिये मेरे पास समय नहीं है । शाम को क्लब में मिलोगी ना ? बड़ा अच्छा प्रोग्राम है । एक नई लड़की आई है जो इतना अच्छा नाचती है कि ऐसा लगता है मानो उसके शरीर में कहीं कोई हड्डी नहीं है । न जाने औरत है या शामी कबाब ?

बेला—तब तो अवश्य आऊँगी ।

जमशेद—टा-टा, पट्टो ।

बेला—टा-टा, जिक-जिक (एलिजा से) उसे अन्दर भेज दो ।

[ बेला बड़ी गम्भीरता से सोफे पर बैठ जाती है और गालीचे पर

गिरी हुई पुस्तक को उठाकर पढ़ना शुरू कर देती है। जमशेद बेला की ओर देखता हुआ द्वार में से बाहर चला जाता है और द्वार पर खड़ी एलिजा को संकेत से बुलाकर एक कोने में ले जाता है और कहता है—]

जमशेद—एक चुम्बन नहीं दोगी ?

एलिजा—मुँह का मजा बदलने के लिये ?

जमशेद—नहीं, सच, बड़ी प्यारी लग रही हो, छमछम ! (आगे बढ़ता है। एलिजा पीछे हटती है।)

एलिजा—देखिये, देखिये, वह...आपके पीछे...कौन है ?

[ जमशेद पलट कर देखता है। दूसरे कोने में एक आदमी खदर का कुर्ता और धोती पहिने, हाथ में चमड़े का थैला उठाये, और आँखों पर ऐनक जमाए खड़ा है। जमशेद को अपनी ओर मुड़ता देखकर वह मुस्करा देता है, ऐनक ठीक करता है और गले को साफ करता हुआ एक विलक्षण-सी आवाज़ निकाल कर कहता है—]

वमन भाई—मैं ओल्ड प्रेस से भेजा गया हूँ। मिस बेला बाटली वाला का इन्टरव्यू करने के लिये।

जमशेद—(निराश होकर उससे हाथ मिलाते हुए) ओ गौश ! (फिर वह तेज़ी से चला जाता है)

एलिजा—अन्दर चलिये। इस समय मुझे एक लम्बे, व्यर्थ, कड़े और अनचाहे इन्टरव्यू से बचा लिया। धन्यवाद !

[ वमन भाई रूमाल से अपना चेहरा साफ़ करता है। फिर अपनी चप्पल पर पड़ी हुई धूल को अपराधी की भाँति देखता है, और फिर डाइंग-रूम में सुन्दर, मूल्यवान गालीचे पर हल्के-हल्के, उलझे-उलझे क्रदमों से आगे बढ़ता चला जाता है। बेला उसे देख कर उठती नहीं है। एलिजा एक कुर्सी लाकर सोफ़ के सामने रख देती है। वमन भाई उस पर बैठ जाता है]

वमन भाई—(हकलाते हुए) आप बे-बे-बेला बा-बा-बाटलीवाला है ?

बेला—जी हाँ, जी हाँ, कहिये ।

वमन भाई—मुझे ओल्ड प्रेस वालों ने आ-प्रापसे इन्टरव्यू करने के लिये भे-भजा है ।

बेला—मैं हाज़िर हूँ ।

वमन भाई—(जाल में फँसे कबूतर की भाँति फड़फड़ाते हुए) यह मेरा प-पहला अवसर है....।

बेला—कोई हर्ज नहीं । मेरा भी पहला इन्टरव्यू है ।

वमन भाई—(मुस्कराकर चमड़े के थैले में से कागज़ कलम निकालते हुए) तब तो हम दो-दोनों की खूब नि-निभेगी ।

बेला—फरमाइये !

वमन भाई—( कागज़ पर कलम की नोक रख कर ) आपने कार्ल-माक्स की पुस्तकें पढ़ी हैं ?

बेला—पढ़ी तो नहीं है, हाँ, उनकी फ़िल्म देखी थी—माक्स ब्रदर्स, जिसमें माक्स और उसका भाई कार्ल काम करता है । दो भाई और भी थे । बड़े अच्छे मसखरे हैं ।

वमन भाई—मैं-मैं म-मसखरों की बात नहीं करता । मैं इस युग के सबसे बड़े दा-दार्शनिक की बात कर रहा हूँ ।

बेला—दार्शनिक ? ओह, क्षमा कीजिये मुझे दर्शन-शास्त्र की अपेक्षा कशीदाकारी अधिक पसन्द है ।

[एलिज़ा जोर से हँस पड़ती है]

बेला—( क्रोधपूर्वक ) एलिज़ा, तुम बाहर चली जाओ ।

[एलिज़ा बाहर चली जाती है]

बेला—क्षमा कीजियेगा, मेरी नौकरानी को बिना बात हँसने की आदत-सी है ।

वमन भाई—( हँसता हुआ ) हो-हो...मुझे...हो-हो...यह-यह तो भे भी आदत है । (जोर-जोर से हँसता है । उसके बाव रुमाल निकाल

कर मुँह पोंछता है । फिर बेला को सम्बोधन करके कहता है )—क्षमा कीजिये, बड़ी प्यास लगी है ।

बेला—क्या पीजियेगा । पानी या चाय ?

वमन भाई—दोनों ।

[ बेला घण्टी बजाती है । एलिजा आती है । ]

बेला—पानी और चाय लाओ ।

[ एलिजा चली जाती है ]

वमन भाई—अच्छा, तो आपको कशीदाकारी बहुत पसन्द है ? परन्तु मुझे तो बड़े सम्पादक ने बताया था कि आ-आपको सोशलिज्म से बड़ी दिलचस्पी है । मैं इसीलिए आप से इन्टरव्यू करने के लिये उपस्थित हुआ था । परन्तु क-कशीदाकारी का सो-सोशलिज्म से क्या सम्बन्ध है ?

बेला—( चौंक कर बैठ जाती है ) नहीं, नहीं, मुझे सोशलिज्म बहुत पसन्द है । मेरा एक चाहने...मेरा एक मित्र है, स्वदेश कुमार । वह मुझे सोशलिज्म समझाता रहता है । बड़ा अच्छा लड़का है वह ! उसके पिता की छः मिलें हैं...

वमन भाई—तो आप सोशलिस्ट हैं ?

[ एलिजा अन्दर आ रही है ]

बेला—जी हाँ, मेरा विश्वास है कि सब मनुष्य बराबर हैं । मैं सब लोगों से बराबरी का व्यवहार करती हूँ । अपनी नौकरानी को अपने साथ टेबल पर खाना खिलाती हूँ । पूछ लीजिये...

एलिजा—और अपने कुत्ते को मोटर में अपने साथ बिठाती हैं ! पूछ लीजिये ।

बेला—एलिजा !

एलिजा—देखिये; परसों हमारे बटलर को बुखार हो गया था । इन्होंने डाक्टर को स्वयं अपने हाथ से टेलीफोन किया । पूछ लीजिए ।

बेला—( चीखते हुए ) एलिजा !

एलिजा—कभी-कभी मैं इनके शीशे का भी प्रयोग कर लेती हूँ—  
अपना मुँह देखने के लिए । यह सोशलिज्म नहीं तो और क्या है ?

बेला—एलिजा तुम कमरे से बाहर चली जाओ ।

वमन भाई—ब-बड़ी गु-गुस्ताख मालूम होती है ।

बेला—मैं आज ही इसे यहाँ से निकाल दूंगी ।

वमन भाई—अच्छा, आप क-काम क्या काम करती हैं ?

बेला—काम ? हि...हि...काम तो कुछ नहीं करती ।

वमन भाई—आपके पिता क्या काम करते थे ?

बेला—कुछ नहीं ।

वमन भाई—खैर, आपके दादा क्या काम करते थे ?

बेला—वे भी कुछ नहीं करते थे ।

वमन भाई—तो आप लोग क-कैसे...मेरा मतलब है, कैसे नि-नि-  
निर्वाह करते हैं ? ( दम फूल जाता है )

बेला—निर्वाह, अरे साहब, हमारी तो सात पुश्तों ने कभी काम  
नहीं किया । हम तो ऊँचे खानदान के लोग हैं । हम तो दूसरों को काम  
पर रखते हैं ।

वमन भाई—अच्छा, मैं समझ गया । आप कहाँ तक पढ़ी हैं ?

बेला—जी, मैं बम्बई तक पढ़ी हूँ । आगे पैरिस जाने का विचार  
था । परन्तु पापा की मृत्यु हो गई, इसलिए न जा सकी । अब शादी के  
बाद जाने का विचार है ।

वमन भाई—आप की शादी अब तक नहीं हुई ?

बेला—जी नहीं ।

वमन भाई—आप किससे शादी करेंगी ?

बेला—एक आदमी से ।

वमन भाई—हैं ! खैर, आप शादी से पहले प्रेम करने के पक्ष में हैं  
या बाद में ?

[ एलिजा चाय लेकर अन्दर आती है ]

बेला—न शादी से पहले, न शादी के बाद । वास्तव में प्रेम और शादी दो अलग-अलग बातें हैं । एक शरीर का सौदा है, दूसरा मन का । दो अलग-अलग बिजनेस हैं...

वमन भाई—बि-बिजनेस ? मैं-मैं आपकी बात नहीं समझा ?

एलिजा—मैं समझाती हूँ । ये विवाह तो एक ब्लैक मार्केटियर से करेंगी और प्रेम एक सोशलिस्ट से ।

वमन भाई—( जोर-जोर से हँसता है ) भई वाह ! खूब !

[ फिर जोर-जोर से हँसता है और रुमाल निकाल कर उसे झाड़ता है जिससे धूल चारों ओर उड़ती है । फिर रुमाल से मुँह पोंछ कर उसे जेब में रख लेता है । बेला जोर-जोर से खाँसने लगती है ]

वमन भाई—आपको खाँसी कब से है ?

बेला—जी ?

वमन भाई—इसकी चिकित्सा कराइये । बहुत बुरा रोग है । इससे तपेदिक...

बेला—मेरे ख्याल में इन्टरव्यू काफी हो चुका है । आपको अपने समाचार-पत्र के लिए काफी मसाला मिल गया होगा । अब यदि आप...

वमन भाई—ब-वस, एक प्रश्न और । यह भ-भ-भंगियों की हड़ताल के सम्बन्ध में आपने क्या सोचा है ?

बेला—मैंने ? मैंने तो कुछ नहीं सोचा । मुझे तो यह भी पता नहीं कि भंगियों की हड़ताल हो रही है या होने वाली है । कम से कम मेरी कोठी में तो ऐसी कोई बात दिखाई नहीं देती ।

वमन भाई—अजी, हड़ताल होने वाली नहीं है, हो रही है । सारे नगर में कूड़ा-करकट बुरी तरह फैल रहा है । चा-चारों ओर गन्दगी है और ब-बदबू । भंगी काम नहीं करते । ( घबराकर ) और बी-बी-बी...

बेला—बीबी अमृतकौर ?

वमन भाई—नहीं, नहीं बी-बी-बीमारी फैल रही है जी । का-का-कांग्रेस ने अपील की है कि लोग स्वयं अपने मोहल्लों में भाड़ लगाएं । तो आपका क्या ख-रूयाल है ?

बेला—किसके बारे में ?—कांग्रेस के या भंगियों के ?

वमन भाई—नहीं, नहीं । भाड़ फेरने के बारे में ? क्या आप अपनी कोठी के बाहर भाड़ फेरेंगी ?

बेला—भाड़ ? कोठी में ? परन्तु मेरी कोठी में तो भंगिन मौजूद है ।

वमन भाई—हाँ, हाँ, भंगिन तो मौजूद होगी । परन्तु वह तो भाड़ फेरकर केवल स-सफाई करती है और आप यदि भाड़ फेरेंगी तो आप देश-सेवा का काम करेंगी ।

बेला—देश-सेवा ?

वमन भाई—हाँ, हाँ, देश-सेवा । एडिटर साहब कहते थे कि जो नागरिक भाड़ फेरेंगे वे राष्ट्रीय हीरो और हीरोइन...

बेला—मैं हीरोइन...अरे वाह ! तब तो मजा रहेगा । मैं अवश्य भाड़ फेरूँगी ।

वमन भाई—इसके लिए आपको को-को-कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा । एडिटर साहब ने कहा कि यदि आप सहमत हो जाएँ तो वे स्वयं कांग्रेस से कहकर एक जलूस कोठी के बाहर भिजवा देंगे और स्कूल के लड़के-लड़कियाँ भी आ जाएंगे, तिरंगा भण्डा लेकर.....

बेला—(व्याकुल होकर टहलती है) परन्तु भण्डे से क्या होगा ? (हाथ मलते हुए) मुझे तो भंडा नहीं भाड़ चाहिए ।

वमन भाई—भाड़ भी मिल जाएगी ।

बेला—परन्तु मैं कोई ऐसी-वैसी भाड़ नहीं फेरूँगी । मुझे तो कोई बढ़िया-सी भाड़ चाहिए । खस की तीलियों की भाड़, जिनमें से सुगन्ध आती हो ।

वमन भाई—मिल जाएगी। ऐसी ही भाड़ू मिल जाएगी। कांग्रेस सबकुछ दे सकती है।

बेला—जिसके तार जरबफ्त के हों और मूठ चाँदी की।

वमन भाई—हाँ, हाँ, ऐसी ही भाड़ू लीजिये। कांग्रेस के पास सब प्रकार की भाड़ू हैं।

बेला—भाड़ू तो है, परन्तु भंगी तो नहीं हैं।

वमन भाई—हाँ, भंगी ह-ह-हड़ताल पर हैं, यही तो मुसीबत है। कहते हैं हमारी मजदूरी बढ़ाओ। जो कुछ मिलता है उससे निर्वाह नहीं होता।

बेला—यही मेरे नौकर भी कहते हैं। (चीख कर) अरे, इनका वेतन न बढ़ाना। तुम कहोगे तो मैं सारे शहर में भाड़ू फेल्गी। तुम कहो तो अपनी सारी सहेलियों को बुला लूँ। कहो तो मैं सारे मालाबार हिल के करोड़पतियों को एकत्रित कर लूँ। हम सब मिलकर भाड़ू फेरेगे। परन्तु भंगियों या नौकरों का वेतन कभी नहीं बढ़ाएंगे।

वमन भाई—जयहिन्द !

बेला—(घंटी बजाकर) एलिजा ! एलिजा !!

[एलिजा हाथ पर एक लहंगा और चोली डाले हुए प्रवेश करती है ]

बेला—यह क्या है ?

एलिजा—सरकार ! आपकी आवाज़ बाहर तक आ रही थी। मैंने सुन लिया और मैं अपनी भंगिन से यह लहंगा, चोली, भाड़ू और टोकरी ले आई। सरकार यह कपड़े पहनिये, और यह टोकरी लेकर इस भाड़ू से सफ़ाई कीजिए।

[एलिजा टोकरी फ़र्श पर रखती है। उसमें से एक नन्हा-सा बच्चा उठ बैठता है]

बेला—(चकित-सी होकर) अरे क्या है यह ?

एलिज़ा—यह भंगिन का बच्चा है सरकार ! उसे न केवल यह गंदा लहंगा और फटी हुई चोली पहनकर और सिर पर टोकरी रखकर कूड़ा ढोना पड़ता है, वरन् साथ-ही-साथ इस नन्हे-से बच्चे को भी गोद में सम्हालना पड़ता है ।

बेला—ले जा इन सब चीजों को बाहर और दे आ भंगिन को । मैं एक नया गाउन पहन कर और खस की भाड़ लेकर सड़क पर भाड़ू फेहूंगी ।

वमन भाई—यह हुई न बात । मैं अभी कांग्रेस वालों से कह-सुन कर ग-ग-गवर्नर साहब को टेलीफोन करता हूँ ।

बेला—गवर्नर साहब ?

वमन भाई—हां, हां, आप भाड़ू फेरेंगी और वे इस उत्सव का उद्घाटन करेंगे ।

(वमन टेलीफोन करता है)

[पर्दा गिरता है]

---

## दूसरा दृश्य

[उसी दिन शाम के समय बेला सुन्दर वस्त्र पहने अपनी नई गाड़ी का सहारा लिए खड़ी है। उसने अपने बाल एक नए ढंग से बनाए हैं। उसके पास ही वमन भाई और एलिजा खड़े हैं और एक अधेड़ अवस्था का व्यक्ति खद्दर के कपड़े और काली वास्कट पहने मुँह में लम्बा-सा चुरट लगाए खड़ा है। उसके निकट एक आदमी फटी-सी पतलून और कमीज पहने कन्धे पर कैमरा लटकाए खड़ा है]

वमन भाई—(बेला को खद्दरधारी से मिलाने हुए) गवर्नर साहब तो कार्यवश नहीं आ सके। फिर मैंने इनसे प्रार्थना की थी। आप हैं श्री जी० एल० गुड़गुड़ी साहब, देश के विख्यात नेता। आप सात बार जेल-यात्रा कर चुके हैं।

बेला—आप जेल जा चुके हैं। How lovely ! आपको जेल में कोई तकलीफ़ तो नहीं हुई ?

खद्दरधारी—जी नहीं, मुझे तो वहाँ घर से अधिक आराम था।

वमन भाई—आ-आप आज के शुभ अवसर का उद्घाटन करेंगे।

बेला—ओह, ख़ूब ! तो चलिये।

खद्दरधारी—यह भाड़ू आपके अर्पण है।

बेला—(भाड़ू हाथ में लेकर) धन्यवाद !

खद्दरधारी—(कैमरे वाले से) अरे भई, मिस साहब का एक फोटो ले लो। और देखो, उद्घाटन के समय अच्छी तरह फोटो लेना।

फोटो वाला—बहुत अच्छा साहब ! (कैमरा ठीक करता है) ...  
मिस साहब, तनिक मुस्कुराइये ... हो गया ।

वमन भाई—(कैमरे वाले को अलग ले जाकर) देखो भाई, उद्घाटन के समय मेरा अच्छा-सा फोटो लेना ।

[कोठी के बाहर इकट्ठे हुए दर्शकों, आने-जाने के किराए के टट्टुओं की आवाजें आ रही हैं, और तालियाँ व सीटियाँ बज रही हैं]

खदरधारी—मिस बेला बाटली वाला ! तशीफ़ ले चलिये । जनता बड़ी बेचैनी से आपकी प्रतीक्षा कर रही है ।

बेला—एलिजा, मेरा यह लिबास ज़रा ठीक कर दे ।

[एलिजा बेला के वस्त्र ठीक-ठाक करती है । और बेला के पीछे-पीछे चलती हैं । बेला, एलिजा, खदरधारी, वमन भाई और कैमरे वाला कोठी के द्वार की ओर बढ़ते हैं । दर्शक जोर-जोर से चिल्लाने लगते हैं]

पहला—हाय मार डाला ।

दूसरा—मेरी जान ! हर रविवार को भाड़ू फेरना ।

तीसरा—भाड़ू वाली, हमारी गली आना, अच्छा जी ... ।

चौथा—तेरी भाड़ू दे बिच मेरा दिल वे मुए । मर गया, रावल-पिंडी दिया मनी नया ।

पाँचवाँ—भंगियों की हड़ताल ज़िन्दाबाद !

छठा—अरे ज़िन्दाबाद नहीं, मुर्दाबाद !

पाँचवाँ—ऐसा ?

छठा—ऐसा ज़िन्दाबाद बोलेगा तो एक पैसा नहीं मिलेगा । हमारी रोज़ी भी खोटी करेगा ।

पाँचवाँ—भंगियों की हड़ताल मुर्दाबाद !

तीन-चार और आदमी—मुर्दाबाद ! ज़िन्दाबाद ! मुर्दाबाद !  
ज़िन्दाबाद !

छुटा—अरे, ऐसा कैसा चलेगा । तुम सब मुर्दाबाद बोलो ना । नहीं तो एक पैसा नहीं मिलेगा ।

तीन-चार आदमी—अच्छा-अच्छा, अब के ठीक बोलेंगे ।

पाँचवाँ—भंगियों की हड़ताल, मुर्दाबाद !

वमन भाई—चुप हो जाइये, चुप हो जाइये ! अब हमारे देश के प्रसिद्ध नेता श्री जी० एल० उद्धाटन करेंगे ।

[जलूस कोठी के बाहर है । बेला, खदरधारी, एलिजा, कैमरे वाला और वमन भाई कोठी के अन्दर फाटक तक पहुँच चुके हैं । फाटक लोहे की सीखों का बना हुआ है और उसके अन्दर की ओर ताला पड़ा हुआ है । फाटक के निकट गोरखा पहरेदार खड़ा है । फाटक के साथ-साथ रेशम की एक लम्बी-सी डोर बँधी हुई है । खदरधारी चुरट पीते-पीते यहाँ तक पहुँचता है और कहता है—]

खदरधारी—प्यारे भारत-निवासियो ! आज हमारे देश में घोर संकट का समय है । भंगियों ने हड़ताल कर दी है और शहर में कूड़े-करकट के ढेर लग गए हैं । यदि इस समय इस संकट को दूर करने का उपाय न किया गया तो भारत देश में हाहाकार मच जायेगा और कम्युनिस्ट इस देश में उपद्रव मचा देंगे । भाइयो और बहनो । इस कठिन अवसर पर कांग्रेस आपको संदेश देती है कि बापू का नाम लेकर भाड़ू हाथ में लो और सारे शहर में भंगियों की हड़ताल तोड़ दो । यह देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता होती है कि मिस बेला बाटलीवाला जैसी सुन्दर बाला और उच्च करोड़पति घराने की महिला इस काम में हाथ बँटा रही हैं । ये करोड़पति लोग भी हमारे भाई हैं । स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय ये सब भाई हमारे साथ थे । और आज जब इस देश में भाड़ू फेरने का प्रश्न है तो भी ये लोग हमारे साथ हैं । और हम ऐसे कृतघ्न नहीं हैं कि इनका फिर भी साथ न दें, इनका सम्मान सहित आदर न करें । इसलिए सब बोलो, मिस बाटलीवाला की जय !

दर्शक—मिस बाटलीवाला की जय !

एक आवाज़—ठहरो, ठहरो ।

[ फटा-पुराना लहंगा और फटी हुई चोली पहने एक काली-कलूटी भंगिन कोठी के अन्दर से भागी हुई चली आ रही है । उसकी गोद में एक बहुत ही दुबला-पतला मरियल-सा बच्चा है । भंगिन आते ही बेला के पाँव पर गिर पड़ती है ]

भंगिन—मालकिन ! तुम यह काम न करो ।

बेला—परे हट जा । (उसे ठोकर लगाती है । भंगिन उठ खड़ी होती है )

भंगिन—मालकिन ! यह भाड़ू छोड़ दो । यह हम लोगों का काम है ।

[ भंगिन भाड़ू छीनना चाहती है, परन्तु बेला परे हट जाती है ]

बेला—तो तुम लोग भाड़ू क्यों नहीं देते ?

भंगिन—मालकिन ! तुम तो बड़ी अच्छी थी । न जाने तुम्हें क्या हो गया है ! मालकिन ! तुम्हें किसने बहका दिया है ? हमने यह हड़ताल अपनी खुशी से नहीं की है । हम लोग भूख से मरे जा रहे हैं । मँहगाई कितनी बढ़ गई है । तुम्हें मालूम नहीं मालकिन, हम महीने में कितने दिन केवल एक बार खाना खाते हैं । और महीने के आखिर में तो कुछ भी नहीं बचता । चार-चार रोज़ के फ्रांके लगते हैं मालकिन !

बेला—भूठी ।

भंगिन—मैं भूठ बोल सकती हूँ, मेरा बच्चा तो भूठ नहीं बोल सकता । इसकी आँखें देखो, इसका मुँह देखो । इसकी सूखी गर्दन देखो । इसकी पसलियाँ गिन लो । ये हड्डियाँ क्या कहती हैं मालकिन ?

बेला—चली जा यहाँ से, अन्यथा मैं तुम्हें नौकरी से अलग कर दूँगी ।

भंगिन—तुम सब बड़े लोग एक ही तरह के होते हो ।

खहरधारी—क्या बकती है यह ? वमन भाई इसे ठोकर मार कर निकाल दो ।

वमन भाई—च-च-च-चली जा यहां से । (हाथ उठाता है और भंगिन को मारता है )

[ भंगिन बेला के हाथ से भाड़ू छीन कर उसे दे मारती है ]

वमन भाई—दे-दे-देखो, मार...साली, अब मार...देखू...अब कैसे मारती है.....

[ बेला और खहरधारी आगे बढ़ते हैं, परन्तु भंगिन सब की ठुकाई करती है । कैमरे वाला हँसकर एक कोने में खड़ा होकर फोटो लेने लगता है ]

खहरधारी—फोटो न लो जी !

बेला—हाय मेरा फ्रांसीसी गाउन...मगर यह फोटो न लो । अरे, यह कैमरे में क्या करता है ?

[ कैमरे वाला हँसता है ]

भंगिन—क्या कहती है ? अब भी भाड़ू देगी ?

बेला—निकल जा, निकल जा अभी मेरी कोठी से ।

भंगिन—(सर पर भाड़ू मारकर) चली है हड़ताल तोड़ने । कलेजा चीरकर रख दूँगी जो फिर कभी भाड़ू हाथ में लिया तो ।

भीड़ में से आवाजें—भंगिन ज़िन्दाबाद !

एक खहर की टोपी वाला—अरे ज़िन्दाबाद नहीं मुर्दाबाद कहो, नहीं तो मैं पैसे नहीं दूँगा ।

भीड़ में से आवाजें—अरे कौन तेरे पैसे लेता है ? धर रख अपने पैसे । साला हड़ताल-तोड़, काला चोर !

[दर्शक आवाजें लगाते हैं—‘काला चोर मुर्दाबाद’, ‘काला चोर मुर्दाबाद’, ‘भंगिन ज़िन्दाबाद’, ‘भंगिन ज़िन्दाबाद’, ‘भंगिन ज़िन्दाबाद’ । भंगिन चारों ओर भाड़ू फेर रही है । कमरे वाला हँसते-हँसते फोटो ले रहा है । लोग चीख रहे हैं । खद्दरधारी और वमन भाई का बुरा हाल है । बेला वहाँ से पोर्च की ओर भागती है ]

एलिज़ा—(चिल्ला कर) मिस साहब ! मिस साहब ! आप कहाँ जा रही हैं ?

बेला—स्विट्ज़रलैंड—एलिज़ा ! यहाँ का जलवायु बहुत गरम है ।

[पर्दा गिरता है]

**अखबार का दफ्तर**

**प्रकाश पण्डित**

## पात्र-परिचय

सम्पादक

रहमान

किशोरीलाल

फ़कीरचन्द

‘कदामत’ पीलीभीती

बुजुर्ग

लड़का

फिर्दौस

दिलबागराय खेरायतीमल

कातिब

चपड़ासी

टाईपिस्ट

क्लर्क

शायर

सम्पादक का मामा

बुजुर्ग का बेटा

लेखक

आढ़तिया

[ पर्दा दो भागों में बँटे हुए रंगमंच पर उठता है । प्लाईवुड के पार्टिशन के एक ओर जो छोटा कमरा है, उसमें साथ-साथ दो मेजें लगी हैं । एक मेज खाली है और दूसरी पर क्लकों की विशेष वेशभूषा अर्थात् टूटी हुई क्रीज की खाकी पतलून और धारीदार कमीज पहने (जिसमें घटनों के स्थान पर दो बकसुए लगे हुए हैं ) फ़क्कीरचन्द बैठा फुटे और पेंसल से रजिस्टर में लाइनें खेंच रहा है । साथ के बड़े कमरे में जाने के लिए पार्टिशन की दीवार के बीचो-बीच जो स्प्रिंगदार दरवाज़ा है, उसके पास स्टूल पर बैठा हुआ रहमान ऊँघते-ऊँघते चौंक पड़ता है और चौंकने के बाद फिर ऊँघने लगता है ।

बड़े कमरे में एक बहुत बड़ी मेज पर बैठा हुआ सम्पादक कुछ लिखने में व्यस्त है । मेज पर फ़ाइलों का ढेर, कलमदान, लोहे की जालीदार ट्रे (जो कागज़ों से भरी हुई है) और टेबल-बैल हर चीज़ बड़े सलीके से रखी है । दाहिनी नुबकड़ में एक छोटी सी मेज पर किशोरीलाल बैठा टाईप कर रहा है । किशोरीलाल के चेहरे का केवल दाहिना भगा नज़र आता है । सम्पादक के दाहिने हाथ दो खाली कुर्सियाँ पड़ी हैं और बायें हाथ प्लाईवुड की दीवार में वही स्प्रिंगदार दरवाज़ा है । सामने दीवार पर का क्लाक साढ़े दस बजा रहा है । ]

*विशेष निर्देशन*—निर्देशक सुविधानुसार रंगमंच को घूमने वाला भी बना सकता है और छोटे कमरे की लाइट बुझा कर भी काम चला सकता है । जो हो, पर्दा उठने के थोड़ी देर बाद रंगमंच पर मुख्य रूप से सम्पादक का कमरा नज़र आना चाहिए । नाटक की गन्विशीलता के लिए

आवश्यक है कि अवसर के अनुसार सम्पादक उठ कर कमरे में टहलने लगे । बैठ जाये, फिर टहलने लगे ।

सम्पादक—( लिखने के साथ-साथ धीमे स्वर में बोलता भी जाता है ) आज पूरी...दुनिया...के सामने हाइड्रोजन बम...के...तजुबों...तजुबों...तजुबों...

( एकाएक चौंक कर टेबलबेल बजाता है )

रहमान ! अरे ओ रहमान !!

( स्प्रिंगदार दरवाजे से रहमान प्रवेश करता है )

रहमान—जी साब ।

सम्पादक—जी साब के बच्चे, उस कातिब का कुछ पता चला ?

रहमान—जी नहीं साब !

सम्पादक—तुम्हें उसके घर का पता चलाने को कहा था ।

रहमान—जी कुछ पता नहीं चला ! सुबह से...

सम्पादक—( क्रोधवश उठकर ) सुबह से ? क्या सुबह से...  
...सुबह से कुछ नहीं...मैं पूरे सात रोज़ से चीख रहा हूँ । सिर पटक रहा हूँ.....

( टाइप करते हुए किशोरीलाल की ओर देख कर )

अरे भाई किशोरीलाल ! अपनी यह टिक-टिक बन्द करो.....क्या मज़ाक है !

( टाइप की मशीन रुक जाती है )

...अजीब जाहलों से पाला पड़ा है...देखो जी, जैसे भी हो उसे ढूँढ कर लाओ । आज, इसी वक्त...

रहमान—जी, कहाँ से ढूँढ कर लाऊँ ?

सम्पादक—जहन्नुम से ! और अगर वह जहन्नुम में भी न मिले तो तुम भी वहीं रहना । समझे !

रहमान—जी !

सम्पादक—जी क्या ?

रहमान—जी, कुछ नहीं ।

सम्पादक—( बैठते हुए ) तो जाओ ! खड़े-खड़े मेरा मुँह क्या देखते हो...आखरी तारीख सिर पर आ गई और किसी के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती, पर्चा कैसे छपेगा ?

( रहमान जाता है )

( किशोरीलाल की ओर देख कर ) किशोरीलाल जी ! मैंने आप से भी कहा था उस गधे का कुछ पता लगाइये...

किशोरीलाल—जी, कहां से पता लगाया जाये ? सब कातिबों से पूछ डाला, पर कहीं...

सम्पादक—तो इसका मतलब है, इस हफ़्ते का पर्चा नहीं छपेगा ।

किशोरी—जी ! जी छपेगा ।

सम्पादक—जी कैसे छपेगा जनाब ? कापियों की बजाये प्रिंटिंग मशीन में मुझे घुसेड़ दीजियेगा, बहुत अच्छा पर्चा छप जायेगा...

( जैसे अपने आप से )

हूँ ! ठिठाई की हद है । कम्बस्त जब काम लेने आया था तो ऐसी मस्कीन सूरत बनाई थी जैसे कहीं से पिट कर आ रहा हो और अब हफ़ता भर होने को आया न कापियों का कुछ ठिकाना है न खुद...

( किशोरीलाल से ) किशोरीलाल जी ! मुझे तो इस हफ़्ते का पर्चा छपता दिखाई नहीं देता ।

( दरवाज़ा खुलता है । रहमान प्रवेश करता है )

क्यों जी, तुम अभी गये नहीं ?

रहमान—जी, जा रहा हूँ ! आप से एक साहब मिलना चाहते हैं ।

सम्पादक—कौन साहब हैं ?

रहमान—जी, कोई शायर मालूम होते हैं ।

सम्पादक—शायर ? और क्या हुजूर समझते हैं कि इस वक्त कोई शरीफ आदमी मुझसे मिलने आयेगा ? क्या नाम है ?

रहमान—जी नाम तो नहीं पूछा ।

सम्पादक—नाम नहीं पूछा, खूब ! बहुत खूब ! रहमान, मुझे बताओ इस वक्त तुम्हारी उम्र क्या होगी ?

रहमान—( भेंपते हुए ) जी, यही कोई चालीस समझिये ।

सम्पादक—समझिये नहीं, है कहो । खैर, मुझे यह बताओ कि चालीस बरस तक तुम क्या करते रहे हो ?

रहमान—जी, मैं आपकी खिदमत...

सम्पादक—भाड़ भोंकते रहे हो !

रहमान—जी !

सम्पादक—जी, जी । जाओ भेज दो ।

[ रहमान जाता है और एक दुबला पतला व्यक्ति शेरवानी डाटे, कमर लचकाता प्रवेश करता है ]

शायर—आदाब अर्ज करता हूँ किबला ।

सम्पादक—आदाब अर्ज, आइये तशरीफ रखिये । ( खाली कुर्सी की ओर संकेत करता है )

शायर—( कुर्सी पर बैठते हुए ) शुक्रिया, शुक्रिया । आप कुछ मसरूफ हैं शायद !

सम्पादक—जी नहीं, कुछ खास मसरूफियत नहीं, फर्माइये मैं आप की क्या खिदमत कर सकता हूँ ?

शायर—खिदमत तो हुजुरे-वाला मैं करने हाजिर हुआ हूँ । आप शायद परूफ देख रहे हैं ।

सम्पादक—परूफ ? अजी नहीं, अभी परूफ कहाँ—अभी तो हमारे कातिब बहादुर ही का कुछ अता-पता नहीं...

शायर—बड़ी नामाकूल क्रौम है साहब ! आप फ़रिशतए-मौत का

एतबार तो कर सकते हैं लेकिन कातिब नाम की मल्लूक का भरोसा नहीं । क्या आपको कोई कातिब दरकार है ?

सम्पादक—जी हाँ, जरूर, जरूर । क्या आप कताबत<sup>१</sup> की गर्ज से तशरीफ़ लाए हैं ?

शायर—जी नहीं, सरेदस्त तो बन्दा बहैसिया एक शायर हाज़िर हुआ है, काम अलबत्ता सीख रखा है और सच पूछिये तो नज़्मों, ग़ज़लों की कताबत करते-करते ही यह शेर कहने का सौदा सिर में समाया है ।

सम्पादक—आपका इस्मे-शरीफ़ ?

शायर—नाचीज़ को 'क़दामत' पीलीभीनी कहते हैं । जनाब ने मेरा कलाम<sup>२</sup> तो देखा होगा ?

सम्पादक—जी अभी तक तो मेरा खयाल है यह सआदत<sup>३</sup> मुझे नसीब नहीं हुई ।

शायर—(शेरबानी की जेब से कागज़ों का पुलंदा निकाल कर) तो यह लीजिये, ये पन्द्रह ग़ज़लें और दस नज़्मे आपकी नज़ हैं ।

सम्पादक—( पुलंदा लेकर, आश्चर्य से ) पन्द्रह ग़ज़लें और दस नज़्में !

शायर जी हाँ, अभी यही हाज़िर हैं । दरअसल मेरा हाफ़िज़ा बहुत कमज़ोर है । ब्याज़<sup>४</sup> बस्ते में तो बांधी थी लेकिन चलते वक्त बस्ता लाना भूल गया...

<sup>१</sup>क़दाबत—उर्दू की छपाई से पहले पाण्डुलिपि को मसाला लगे पीले कागज़ों पर हाथ से लिखा जाता है, उसी को धात के बड़े-बड़े तख़्तों पर जमा कर छापते हैं ।

<sup>२</sup>रचनाएँ ।

<sup>३</sup>सौभाग्य

<sup>४</sup>कापी, जिसमें हाथ से नज़्में ग़ज़लें लिखी रहती हैं ।

**सम्पादक**—अच्छी बात है। इन्हें देख कर मैं आपको अपनी राय लिख दूंगा। अपना पता तो आपने लिख ही दिया होगा।

**शायर**—अजी इस तकल्लुफ़ की क्या ज़रूरत है। आप अभी मेरी मौजूदगी में मुलाहिजा फ़र्मा लीजिए।

**सम्पादक**—बात असल में यह है 'क्रदामत' साहब कि इस वक्त मुझे कुछ खास काम.....

**शायर**—काम ! हज़रत काम तो दुनिया के चलते ही रहते हैं !  
—खैर, लाइये मैं खुद ही दो-चार शेर आपको सुनाये देता हूँ। इससे आपको अंदाज़ा हो जायेगा कि मेरा कलाम.... ज़रा यह शेर मुलाहिजा हो :

(बड़े बेतुके स्वर में गाकर)

पड़ी जब से नज़र उन पर कुछ ऐसा हाल है अपना,

कि दिल पहलू से उठे है कि दिल पहलू में बंटे है।

**सम्पादक**—खूब ! बहुत खूब 'क्रदामत' साहब। आप नाहक ज़हमत फ़र्मा रहे हैं। यह तो ऐसा कलाम है कि मैं तनहाई में पढ़ूँ और लुफ़ लेता रहूँ। खैर, मैं आपको अपनी राय से.....

**शायर**—अजी नहीं, आप क्यों तकलीफ़ कीजियेगा। मैं खुद हाज़िर हो जाऊंगा। दरअसल मुझे आगरा रास नहीं आया। दिल्ली के अख़बारों में बे बहर, बे वज़न, बे-सिर-पैर की नज़में ग़ज़लें देख-देख कर जो तबीयत को तैश आया तो मैंने सीधा दिल्ली का रुख़ कर लिया। अब मेरा इरादा यहीं क़याम करने का है।

**सम्पादक**—बहुत खूब ! बड़ा नेक इरादा है। लेकिन यह तो बताइये कि इससे पहले भी आपका कलाम कहीं छपा है ?

**शायर**—तो क्या सच-मुच मेरा कलाम आपकी नज़र से नहीं गुज़रा ?

सम्पादक—अर्ज किया न कि यह सम्पादक अभी मुझे नमीब नहीं हुई । क्या आप रोज़ाना अखबारों में लिखते हैं ?

शायर—जी नहीं तो ।

सम्पादक—तो फ़िल्मी पर्चों में लिखने होंगे ।

शायर—लाहौल बला कुव्वतः ।

सम्पादक—तो कहीं ऐसा तो नहीं कि लिख कर हिफ़ाज़ा में घर पर ही रख लेते हों ।

शायर—अजी जनाव ! मेरी चीज़ें छपती हैं और निहायत ठाट में छपती हैं ।

सम्पादक—तो गायद बाहर के मुल्कों में छपती होंगी ।

शायर—अस्तग़िफ़ुरअल्ला ! क्या फ़र्माया आपने ! लाइये मेरा कलाम ।

(पुलंदा झपट लेता है)

क्या समझते हैं आप ? आपका अखबार अगर मय्यारी है तो मेरा कलाम भी कम मय्यारी नहीं । खुदा हाफ़िज़ !

सम्पादक—खुदा हाफ़िज़ !

[शायर जोर से दरवाज़ा खोल कर बाहर चला जाता है । दरवाज़ा बंद तक खुलता रहता है, बन्द होता रहता है । इसके साथ ही टाइप की मशीन चलने लगती है]

सम्पादक—(किशोरीलाल की ओर देख कर) मैंने आप से कहा था किशोरीलाल जी...अपनी यह टिक-टिक बंद कीजिये ।

(मशीन रुक जाती है)

मेरे दिमाग में पहले से हथौड़े चल रहे हैं...और आप हैं कि...काम क्री ऐसी ही धुन है तो जाइये दूसरे कमरे में तशरीफ़ ले जाइये ।

(किशोरीलाल मशीन उठाता है)

...और देखिये, रहमान अभी तक गया है या नहीं ?

(किशोरीरीलाल दरवाजा खोलकर मशीन बाहर ले जाता है और फिर खाली हाथ लौटता है)

किशोरीरीलाल—जी वह तो गया। आप से मिलने दो साहब और आये हैं।

सम्पादक—(चौंक कर) दो साहब ! एक न खुद दो खुद । शकल सूरत से शायर तो मालूम नहीं होते ?

किशोरीरीलाल - जी, देखने में तो बाप बेटा मालूम होते हैं।

सम्पादक -- बाप-बेटा ! क्या मजाक है। यह अखबार का दफ्तर है या प्राइमरी स्कूल ! क्या चाहते हैं ?

किशोरीरीलाल—जी आप से मिलना चाहते हैं।

सम्पादक—ज़रूर मिलना चाहते हैं !

किशोरी—जी, मालूम तो यही होता कि अगर आप न मिलेंगे तो...

सम्पादक—तो वो खुद आकर मुझ से बगलगीर हो जायेंगे—यही ना ?

किशोरी—जी ?

सम्पादक—(चिड़ कर) जी ! भेज दो और साथ एक गिलास ठंडा पानी...

किशोरी—जी, अभी भेजता हूँ।

सम्पादक—क्या भेजते हो ?

किशोरी—जी, दोनों को।

सम्पादक—और पानी ?

किशोरी—जी, तीनों को।

(किशोरीरीलाल जाता है और एक बुजुर्ग लड़के सहित प्रवेश करते हैं)

बुजुर्ग—आ—हा.....बेटे अच्छे तो हो ?

सम्पादक—(कुर्सी से उठकर) ओह मामा जी, आप ? आइये, आइये; कब आए आप, बैठिये ?

(दोनों नवागुन्तक कुर्सियों पर बैठ जाते हैं)

बुजुर्ग—आज ही बल्कि यह समझो बेटा कि अभी । सोचा सबसे पहले अपने अजीज से मिल आऊँ । तुमने तो जब से गाँव छोड़ा है, दोस्त रिश्तेदार सब भुला बैठे ।

सम्पादक—क्या अर्ज करूँ मामा जी, काम से ही फुर्सत नहीं मिलती ।

(टेबल-बैल बजाता है । फ़कीरचन्द प्रवेश करता है)

देखो फ़कीरचन्द ! जल्दी से दो गिलास शर्बत खून अफ़जा बनवा लाओ ।

फ़कीरचन्द—जी ।

सम्पादक—देखो, दो नहीं तीन—किशोरीरीलाल से कह दो, पानी रहने दे ।

फ़कीरचन्द—जी !

(फ़कीरचन्द जाता है )

बुजुर्ग—काम तो होते ही रहते हैं बेटा ! और मेरी तो पूरी ज़िदगी का निचोड़ यह है कि हर काम अपने वक्त पर जरूर होगा चाहे हम करें या कोई और । बल्कि मैं तो यह कहता हूँ कि... अरे हाँ, इससे मिलो । पहचाना इसे ? तुम इसे कहाँ पहचानोगे बेटा । इत्ता सा था जब तुमने देखा या—आदाब करो बेटा ।

लड़का—आदाब अर्ज करता हूँ भाई साहब ।

सम्पादक—आदाब अर्ज, आदाब अर्ज । कहो भाई कैसे हो ?

लड़का—जी, आपकी दुआ है ।

बुजुर्ग—और अगर सच पूछो तो तुम्हारा यह भाई ही हमारी मुलाक़ात का सबब बना, वरना तुम जानो, घर से निकलना बहुत

मुश्किल होता है। माशाअल्ला इस साल दसवें दर्जे का इम्तिहान दिया है इसने। सब जमायतों में अक्बल आता रह! है।

सम्पादक—बहुत होनहार मालूम होता है !

बुजुर्ग—तुम ऐसे बड़े भाइयों की दुआ से कभी किसी काबिल बनेगा। बुजुर्गों का नाम रोशन करेगा। इसके उस्तादों का ख्याल है कि यह या तो बहुत बड़ा एंजीनियर बनेगा या फिर लेखक।

सम्पादक—(चौंक कर) लेखक ?

बुजुर्ग—हाँ बेटा लेखक, दसवें दर्जे का इम्तिहान देने के बाद इन दो महीने की छुट्टियों में इसने कोई पच्चास एक कहानियाँ लिख डाली हैं।

सम्पादक—पच्चास कहानियाँ ?

बुजुर्ग—और छः सौ पन्ने का एक नावल।

सम्पादक—छः सौ पन्ने का नावल ?

बुजुर्ग—दिखाओ बेटा ! भाई को अपनी चीजें दिखाओ। मेरा इरादा तो इसे एंजीनियर बनाने का ही था, पर तुम जानो, बच्चे जब जवान हो जायें तो माँ बाप को उनकी मर्जी के खिलाफ कुछ नहीं करना चाहिये। अब यह लेखक बनना चाहता है तो तुम जानो, बीस रुपये भाड़ा खर्च करके इसे तुम्हारे पास लाया हूँ कि तुम ! खुदा बुरी नज़र से बचाये, एक अखबार के एडिटर हो। नेक मशिवरा दोगे और कुछ पैसे भी हाथ लगेंगे।

सम्पादक—(बड़ी परेशानी से) पैसे ?

बुजुर्ग—पैसे का मुझे कुछ ज्यादा लालच नहीं। तुम जानो मैंने रामधनी बड़ई ऐसे नमकहराम की कुर्की सिर्फ इसलिए माफ़ करदी थी कि उसके यहाँ काँसी की एक परात, पीतल की दो-एक कटोरियाँ और चन्द फटे-पुराने गूदड़ों के अलावा.....

सम्पादक—लेखक मामा जी ! यह तो अभी बिलकुल बच्चा है ।

बुजुर्ग—हाँ है, तो बच्चा ही, पर तुम जानो होनहार बिरवा के चिकने चिकने पात । लाल तो माँ की गोद में ही पहचान लिये जाते हैं क्या ख्याल है तुम्हारा, नावल का पाँच रुपया पन्ना तो मिल ही जायेगा ?

सम्पादक—पाँच रुपया पन्ना !

दुजुर्ग—भई इसमें जो तुम्हारी मेहनत होगी उसका.....मुझे तुम इतना ओछा न समझो कि ...

सम्पादक—मामाजी .....आप, आप मेरा एक मशविरा मानेंगे ?

बुजुर्ग—क्यों नहीं, क्यों नहीं, मैंने कब तुम्हारी कोई बात टाजी है । तुम जानो एक बार तुमने.....।

सम्पादक—मेरा मशविरा यह है मामाजी कि साहबजादे को एंजीनियर बनाइये । अपनी इस उम्र में अगर यह पचास कहानियाँ और छः सौ पन्ने का नावल लिख सकता है और वह भी सिर्फ दो महीनों में तो मेरा ख्याल है, दुनिया भर के लेखकों का दाना-पानी खतरे में है ।

बुजुर्ग—यह तुम क्या कह रहे हो बेटे ! ज़रा मेरे सामने इसका यह नावल तो पढ़ जाओ ।

सम्पादक—यह नावल पढ़ जाऊँ ? आपके सामने, यानी अभी छः सौ पन्ने का नावल पढ़ जाऊँ । नहीं मामाजी, खुदा के लिए साहबजादे को लेखक मत बनाइये । एंजीनियर नहीं बनना चाहता तो बज़ाजी की दुकान खुलवा दीजिये, दही बड़ों का खौंचा.....।

बुजुर्ग—(भिन्ना कर) क्या तुम्हारा दिमाग चल गया है ?

सम्पादक—हाँ, मामाजी । मेरा दिमाग चप गया है । आपने हमेशा मेरी बात मानी है । अगर आप चाहें तो वापसी का किराया.....।

बुजुर्ग—आखिर तुम आपने आपको समझते क्या हो.....?

सम्पादक—मैं आपको अपना बुजुर्ग समझता हूँ मामाजी और अपने आपको आपका इन्तिाई फ़र्माबरदार भानजा, लेकिन खुदा के लिए साहबज़ादे को लेखक न बनाइये, वरना यह आपकी सारी जायदाद, सारी ज़मीनें, सारे मकान.....।

बुजुर्ग—हूँ ! चलो, उठो बेटा ! मुझे क्या मालूम था कि..... लेकिन इसमें तुम्हारा कोई कुसूर नहीं है भाई—दिल्ली के पानी की तासीर ही उल्टी है । जिसे देखो अकड़फूँ बना बैठ है ।

(दोनों उठते हैं । सम्पादक भी उठता है)

लड़का—आदाब अर्ज है भाई जान ।

सम्पादक—आदाब अर्ज ! (प्यार से कंधा थपथपाकर) क्यों भाई, क्या तुम किसी तरह लेखक बनने से बाज़ नहीं आ सकते ?

लड़का—जी, हरगिज़ नहीं ।

बुजुर्ग—देखा ।

सम्पादक—जी हाँ, खूब देखा ! और मेरा ख्याल है आप भी खूब देखेंगे जब यह आपकी सारी ज़मीनें, सारे मकान, सारी जायदाद नीलाम.....।

(ज़ोर से दरवाज़ा खोलकर दोनों चले जाते हैं)

सम्पादक—(ठंडा सांस लेकर, कुर्सी पर बैठते हुए) पचास कहानियाँ और छः सौ पन्ने का नावल.....।

(फ़कीरचन्द ट्रे में शर्बत के गिलास रखे प्रवेश करता है)

.....यह अब लाये हो शर्बत ! फ़कीरचन्द, तुमसे तो कोई काम कहना.....।

फ़कीरचन्द—जी, दुकान पर बहुत भीड़ थी ।

सम्पादक—जी हां, वह तो मैं पहले से जानता हूँ कि बाहर की हर

दुकान पर गाहकों के ठट के ठट लगे हैं। रुपये की भरमार से लोगों की जेबें फटी पड़ती हैं—नहीं चाहिये शर्बत, ले जाओ।

फ़कीरचन्द—जी, दुकानदार.....

सम्पादक—दुकानदार वापस नहीं करेगा, यही ना ! तो फैंक दो।

फ़कीरचन्द—जी ?

सम्पादक—नाली में न फैंकना चाहो तो अपने पेट में फैंक लो, लेकिन मेरी जान बरूश दो.....

(फ़कीरचन्द अभी खड़ा है कि फ़िर्दौस प्रवेश करता है)

.....ओ, हैलो ! कहिये फ़िर्दौस साहब, बहुत दिनों के बाद तशरीफ़ लाये।

फ़िर्दौस—अरे क्या बताऊँ दोस्त ! आजकल वह नफ़सियात पर किताब लिखने में इतना मसरूफ़ हूँ कि.....

सम्पादक—कभी हमारे लिए भी तो कुछ लिखिये—फ़कीरचन्द !  
फ़िर्दौस साहब को शर्बत पिलाओ।

फ़कीरचन्द—फ़िर्दौस की ओर गिलास बढ़ा कर) जी !

(फ़िर्दौस धीरे-धीरे सिप करने लगता है)

सम्पादक—आपके पहले मज़मून की तारीफ़ में इतने खात आये थे फ़िर्दौस साहब ! इतने कि.....

फ़िर्दौस—अरे यार, यह सब तो होता ही रहता है। मुझे यह बताओ कि आज शाम को तुम्हारा क्या परोग्राम है ?

सम्पादक—कुछ न पूछिये फ़िर्दौस साहब ! परसों पर्चा निकलने की तारीख़ है और अभी तक हमारे कातिब साहब गधे के सींग बने हुए हैं। आदमी दौड़ते-दौड़ते पटवारी हो गये लेकिन कहीं सुराग नहीं मिला। किताबत के लिए सिर्फ़ दो सफ़हे का मँटर ले गये थे और कह गये थे कि बाक़ी दो दिन बाद आकर ले जायेंगे। आदमी नया था

लेकिन हाथ बहुत अच्छा था और मालूम भी जरूरतमंद होता था। मैंने मुस्तक़िल तौर पर उसी को काम देने का फ़ैसला कर लिया और किसी दूसरे कातिब से एक लफ़्ज़ तक नहीं लिखवाया।

फ़िर्दौस—यह सब तुम जानो। मुझे यह बताओ कि शाम को मुशायरे में चल रहे हो या नहीं ?

सम्पादक—आप शाम की बात करते हैं फ़िर्दौस साहब ! मैं इस घड़ी बल्कि इस लम्हे के बारे में सोच रहा हूँ। अगर वह कातिब न मिला, ज़रा सोचिये फ़िर्दौस साहब कि अगर वह कातिब न मिला तो.....

फ़िर्दौस—तो इस हफ़्ते का पर्चा नहीं छपेगा। यही ना—लेकिन मैं पूछता हूँ कि तुम शाम को मुशायरे में क्यों नहीं चल रहे हो ?

सम्पादक—इसीलिए फ़िर्दौस साहब कि पर्चा तीस को आऊट हो जाना चाहिये और आज अट्ठाईस है और आज न सिर्फ़ अट्ठाईस है बल्कि सोलह सफ़हों में से मेरे पास एक भी किताबतशुदा सफ़हा नहीं और एक भी किताबतशुदा सफ़हे के न होने का मतलब है कि.....

फ़िर्दौस—पर्चा वक्त पर नहीं छा सकेगा।

(एक ही घूंट में ग़िसाल ख़ाली करके मेज़ पर पटक कर चला जाता है। फ़कीरचन्द भी पीछे-पीछे चला जाता है)

सम्पादक—लेकिन सुनिये तो फ़िर्दौस साहब... फ़िर्दौस साहब। क्या मुसीबत है (ज़ोर से) किशोरीलाल ! अजी ओ किशोरीलाल जी !

(किशोरीलाल आता है)

किशोरीलाल—जी !

सम्पादक—जनाब आपको मालूम है आज तमाम एजन्टों को खत जाने हैं ? आप कहां गुलछरें उड़ाते फिर रहे हैं ? अब तक कितने खत टाइप हुए ?

किशोरीलाल—जी, तीन !

सम्पादक—सिर्फ़ तीन ! दो सौ बारह में से सिर्फ़ तीन !

किशोरीलाल—जी आप ही ने तो रोक दिया था कि...

सम्पादक—मैंने रोक दिया था... मैं कभी किसी को नहीं रोकता...  
मुझे आज शाम तक दो सौ बारह खत.....

(रहमान आता है)

...क्या वह मिल गया ? रहमान क्या वह कातिब मिल गया ?

रहमान—जी नहीं साब ! सब ढूँढ डाला, लेकिन.....

सम्पादक—सब ढूँढ डाला ! कैसे सब ढूँढ डाला ! मुझे बेवकूफ मत बनाओ रहमान ! ढूँढने से तो आदमी अपने आपको भी ढूँढ लेता है और तुम कहते हो कि वह कातिब का बच्चा नहीं मिला ।

रहमान—जी, नहीं मिला साब !

सम्पादक—जी, क्यों नहीं मिला साब !

रहमान—जी, नहीं मिला !

सम्पादक—मैं आप से अर्ज कर रहा हूँ कि क्यों नहीं मिला ?

(फ़कीरचन्द प्रवेश करता है)

फ़कीरचन्द—जी, मिल गया साहब !

सम्पादक—(प्रसन्न होकर) मिल गया—कहाँ है—बुलाओ, देखो ज़रा आराम से बुलाओ ।

फ़कीरचन्द—जी, यह रहा (एक कागज़ बढाता है) सिर्फ पन्द्रह कापियों का आर्डर है । आप कहते थे कि बीस.....

सम्पादक—कातिब मिला है या आर्डर ?

फ़कीरचन्द—जी आर्डर !

सम्पादक—(क्रोध से) आर्डर को जहनुम में डालो । मुझे आर्डर नहीं कातिब चाहिए ।

फ़कीरचन्द—जी, कौन-सा कातिब ?

सम्पादक—कौनसा कातिब ! लीजिये मुलाहिजा फ़र्माइये किशोरी लालजी कि कौनसा कातिब !

किशोरीलाल—जी, इन्हें क्या मालूम कि आप.....

सम्पादक—जी, इन्हें क्यों मालूम नहीं कि पर्चा तीस को निकलना है और आज अट्ठाईस है ।

किशोरीलाल—जी, यह तो मालूम होगा ।

सम्पादक—क्यों फ़कीरचन्द जी, आपको मालूम है कि पर्चा तीस को निकलेगा ?

फ़कीरचन्द—जी हाँ ।

सम्पादक—और यह भी मालूम है कि आज अट्ठाईस तारीख है ?

फ़कीरचन्द—जी हाँ ।

सम्पादक—(चिढ़कर) जी हाँ, जी हाँ, आपको खाक मालूम नहीं । आपको सिर्फ़ यह मालूम है कि तनखाह पहली तारीख को मिलती है ।

फ़कीरचन्द—जी नहीं !

सम्पादक—क्या तनखाह पहली तारीख को नहीं मिलती ?

फ़कीरचन्द—जी मिलती है ।

सम्पादक—तो जी नहीं क्या ? फूटो, मुँह से कुछ फूटो.....तनखाह ठीक पहली को मिल जाती है । तनखाह के नोट गिनना और नक़द रुपयों को छः-छः बार टंकारना आपको आता है । अगर नहीं आता तो पर्चे का ख्याल कि अगर वक़्त पर नहीं छपेगा तो पहली को पैसे कहाँ से आयेंगे ?

फ़कीरचन्द—जी मैं तो...

सम्पादक—जी मैं तो कुछ नहीं । सुभे यह बताओ कि तुम्हें उस कातिब का टंटा मालूम है या नहीं ?

फ़कीरचन्द—जी कौनसा कातिब ?

सम्पादक—जी कौन-सा कातिब ! ख़ूब ! किशोरीलाल जी बहुत ही ख़ूब । आप फ़मति थे कि सारा दफ़्तर कातिब को ढूँढ रहा है और यहाँ अभी यह पूछा जा रहा है कि कौन-सा कातिब ? आप बिल्कुल बजा

फ़मति हैं फ़कीरचन्द जी कि कौन-सा कातिब ! अगर मैं यह अर्ज़ करूँ कि आपकी तकदीर का कातिब तो आप इन लफ़्ज़ों के माने समझे बग़ैर सत्याग्रह पर उतर आयेंगे कि हमारी तनख्वाह पहली को मिलनी चाहिए, अगला चाहे चोरी करे, डाका डाले, जेब काटे.....

(बहुत जोर से दरवाज़ा खुलता है और दिलबाग़राय प्रवेश करता है ।)

.....आप ! आप कौन साहब हैं ?

दिलबाग़राय—मैं 'नई पुरानी दुनिया' के एडिटर से मिलना चाहता हूँ ।

सम्पादक—फ़र्माइये, तशरीफ़ रखिये...किशोरीलाल जी आप लोग ज़रा.....

(आँख से बाहर जाने का संकेत करता है । सब बाहर चले जाते हैं । दिलबाग़राय कुर्सी पर बैठ जाता है)

दिलबाग़राय—तो आप ही 'नई पुरानी दुनिया' के एडिटर हैं ?

सम्पादक—जी हाँ, खाकसार ही है । कहिये, मैं आपकी क्या खिदमत कर सकता हूँ ।

दिलबाग़राय—खिदमत तो मैं करूँगा आपकी !

सम्पादक—क्या आप किताबत के लिये.....

दिलबाग़राय—किताबत के लिए नहीं मैं आपको मज़ा चखाने आया हूँ ।

सम्पादक—(आश्चर्य से) मज़ा चखाने ! मैं आपका मतलब नहीं समझा ।

दिलबाग़राय—आप अभी मेरा मतलब समझ जायेंगे जनाब ! शरीफ़ आदमियों की पगड़ी उछालना इतना आसान नहीं जितना आप इस हाथ भर की कुर्सी पर बैठ कर समझते हैं ।

सम्पादक—कुर्सियाँ तो हुज़ूर सभी हाथ भर की होती हैं । यहाँ तक कि इस वक़्त जिस कुर्सी पर आप तशरीफ़ रखते हैं वह भी हाथ भर

ही की है। खैर, आप बड़ी खुशी से अपना मज़ा चखाने का अमल शुरू फ़र्माइये.....

दिलवाग़राय—मुझे से मज़ाक मत कीजिये जनाब ! क्या आप समझते हैं कि इस तरह आप बच जायेंगे।

सम्पादक—जी नहीं, मज़ा चखने से भला कौन बचना चाहेगा।

दिलवाग़राय—मज़ा मैं नहीं, आपको अदालत चखायेगी और ऐसा चखायेगी कि.....

सम्पादक—क्यों साहब, यह अदालत नाम की चीज़ मुझे क्यों मज़ा चखायेगी ?

दिलवाग़राय—इसलिए कि आप अपने दो कौड़ी के अखबार में बकवास छापते हैं। शरीफ़ आदमियों की पगड़ी उछालते हैं।

सम्पादक—शरीफ़ आदमी ! जहाँ तक मेरा दिमाग़ काम करता है जनाब, शरीफ़ तो शरीफ़ 'नई पुरानी दुनिया' में कभी बदमाश आदमियों की भी पगड़ी नहीं उछाली गई। आप कहीं भूल कर तो इधर नहीं आगये।

दिलवाग़राय—जी नहीं, आज तो खूब सोच-समझ कर आया हूँ, अलबत्ता फिर कभी भूल कर भी इधर क़दम नहीं रखूँगा क्योंकि फिर मैं नहीं, सिर के बल आप मेरे पास आयेंगे.....

सम्पादक—क्यों साहब, क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि यह इज़्ज़त मुझे क्यों हासिल होगी ? मैं क्यों आपके पास आऊँगा ?

दिलवाग़राय—इसलिए कि आपने मेरी बेइज़्ज़ती की है, इनसल्त की है। पिछले पच्चे में आपने एक ऐसी बेहूदा कहानी छपी है जिसमें साफ़-साफ़ मेरी हतक की गई है और मैं आपको इस हतक का मज़ा चखा कर दम लूँगा।

सम्पादक—अभी आप फ़र्मा रहे थे कि मज़ा अदालत चखायेगी। खैर, मज़ा चखाने का आपको और अदालत दोनों को पूरा-पूरा हक़ है।

लेकिन मेरी इतलाह के लिए सिर्फ़ इतना फ़र्मा दीजिए कि आग्विर इममें प्रापको अपनी हतक क्यों नज़र आई ?

दिलबाग़राय—क्योंकि इसमें मेरी हतक की गई है ।

सम्पादक—कहानी का नाम आपको याद होगा ।

दिलबाग़राय—ख़ूब अच्छी तरह ? 'सन्न बाग़ !'

सम्पादक—हीरो का नाम ?

दिलबाग़राय—हीरो नहीं आपने मुझे चमार के रूप में पेश किया है ।

सम्पादक—उस चमार का नाम ?

दिलबाग़राय—उस चमार का कोई नाम नहीं रखा गया । सिर्फ़ उसका हुलिया और उसकी आदतें बयान करके मेरी तौहीन की गई है ।

सम्पादक—आपका इस्मे-मुबारक ?

दिलबाग़राय—मुझे दिलबाग़राय ख़ैरायतीमल कहते हैं । सदर में मेरी आदत की दुकान है ।

सम्पादक—तो इसमें आपकी तौहीन या हतक या इनसल्ट या जो-कुछ भी आप समझते हैं उसका क्या पहलू निकलता है ?

दिलबाग़राय—निकलता है !

सम्पादक—कैसे निकलता है ?

दिलबाग़राय—मैं जो कहता हूँ कि निकलता है ।

सम्पादक—जी, यही तो मैं पूछ रहा हूँ कि कैसे निकलता है ?

दिलबाग़राय—इसका फ़ैसला अदालत करेगी ।

सम्पादक—फ़ैसला तो आप खुद ही सुना रहे हैं !

दिलबाग़राय—ख़ैर, देखा जायेगा । एक ही पेशी में यह एडीटरी-फ़ीडिटरी हवा न हो गई तो मेरा नाम भी दिलबाग़राय ख़ैरायती मल...

(ज़ोर से बरबाज़ा खोलकर बाहर निकल जाता है)

सम्पादक—उफ़, तोबा है । कैसे-कैसे जानवरों से पाला पड़ता है ?

रहमान—जी ।

सम्पादक—खूब ! खूब ! क्यों नहीं, किसी खुदा के बन्दे को काम की कुछ फ़िक्र हो जब ना ! तुमने चाय पी ?

रहमान—जी नहीं ।

सम्पादक—क्यों नहीं पी ! तुम भी पियो । और सुनो, सिर्फ़ चाय क्यों ? तुम सब दफ़्तर वाले भंग पी कर क्यों नहीं सो जाते !

रहमान—जी !

सम्पादक—जी के बच्चे, वह कातिब मिला ?

रहमान—जी, नहीं मिला !

सम्पादक—तो सुनो रहमान ! मुझे बड़े अफ़सोस से कहना पड़ता है कि आज से तुम अपनी मुलाज़मत ख़त्म समझो । पहली को आकर अपना हिसाब किताब कर लेना ।

रहमान—हुज़ूर मैं तो...

सम्पादक—मैं हुज़ूर-वुज़ूर कुछ नहीं जानता । मुझे चाम से नहीं, काम से गर्ज है । अगर कातिबों के आगे-पीछे भागने का काम भी मुझी को करना है तो आप लोग क्या यहाँ मक्खियाँ मारने को रखे गये हैं ?

रहमान—जी, मैं फिर जाता हूँ ।

सम्पादक—फिर कहाँ जाते हो, अब तो सीधे घर ही को जाना ।

रहमान—जी नहीं हुज़ूर, मैं कातिब को ढूँढ़ने जाता हूँ ।

सम्पादक—और अगर अब भी वह कातिब न मिला तो ?

रहमान—तो मैं कोई दूसरा कातिब ले आऊँगा ।

सम्पादक—दूसरा कातिब ! दूसरे कातिब की ऐसी-तैसी । पर्व का ज़रूरी मसविदा उस कातिब के पास है और तुम कहते हो कि दूसरा...

रहमान—जी, उसी को ढूँढ़ूँगा ।

सम्पादक—ढूँढ़ूँगा नहीं । अब के मुझे सिर्फ़ यह इत्तला देने आना कि उसे ढूँढ़ लिया है, समझे । और अगर नहीं ढूँढ़ सकते तो अभी बताते

जाओ और सब दफ़्तर वालों से कहते जाओ कि कल से वे सब छुट्टी करें, मुझे ऐसे नमक हलालों की जरूरत नहीं कि पर्चा न छपने पर भी ठीक एक बजे जिनके पेट पीठ से जा लगे और चार बजने में एक मिनट इधर न उधर कि चाय हाज़िर होनी चाहिए। अब तुम जा सकते हो और सिर्फ़ उसी सूरत में वापस आ सकते हो जब कि तुम उस पाजी को अपने साथ लेकर आओ।

( रहमान जाने लगता है )

और सुनो फ़क़ीरचन्द से भी कहते जाओ कि उस शैतान को ढूँढने जाये।

रहमान—जी।

सम्पादक—और किशोरी लाल जी तो चाय नोश फ़र्मा रहे होंगे

रहमान—जी।

सम्पादक—जी क्या ?

रहमान—जी कुछ नहीं।

सम्पादक—जी क्यों कुछ नहीं। क्या तुमने उन्हें चाय लाकर नहीं दी ?

रहमान—जी लाकर दी है।

सम्पादक—तो फिर क्यों कुछ नहीं। चाय नोश फ़र्मा रहे हैं, फ़मनि दो। अगर आज वह कातिब न मिला तो कल से दफ़्तर की बजाय घर पर नोश फ़र्माया करेंगे।

रहमान—जी ! ( जाने लगता है )

सम्पादक—और सुनो, किशोरीलाल जी से कहते जाओ कि अब चाहे सूबे का गवर्नर भी मुझ से मिलने आये, मेरे कमरे में न घुसने पाये...

रहमान—जी !

सम्पादक—जी नहीं। अच्छी तरह से कह दो। और अगर अब कोई मेरे कमरे में आया तो मैं पूरे दफ़्तर को आग लगा दूँगा, समझे।

रहमान—जी, समझ गया ।

सम्पादक—क्या समझ गये ?

रहमान—कि आप पूरे दफ़्तर को आग...

सम्पादक—शाबाश ! मेरे दोस्त ! वस इतना ही समझे कि दफ़्तर को आग लगा दूँगा ।

रहमान—जी नहीं ।

सम्पादक—इस जी नहीं का मतलब है कि तुम कुछ और भी समझे हो ।

रहमान—जी, सब समझ गया ।

सम्पादक—क्या समझ गया ? आखिर मैं भी तो सुनूँ ।

रहमान—कि जब तक वह कातिब...

सम्पादक—इसके अलावा और क्या समझे ?

रहमान—और किसी शख्स को आपके कमरे में न घुसने दिया जाये .....

सम्पादक—उस कातिब के अलावा ! कहीं ऐसा न हो कि उस कातिब को भी न घुसने दिया जाये ।

रहमान—जी हाँ, उस कातिब के अलावा...

सम्पादक—और...

रहमान—और यह कि जब तक...

सम्पादक—ठीक है, ठीक है, ये दोनों बातें ही काफी हैं, देखो ! अगर किसमत से वह कातिब मिल जाये तो यह मत कहना कि मैं खफ़ा हो रहा हूँ ।

रहमान—जी नहीं ।

सम्पादक—खाली-खोली जी नहीं, कान खोल कर सुन लो । वरना वह आयेगा नहीं और अगर वह न आया तो तुम जानते हो...

रहमान—जी, मैं जानता हूँ ।

सम्पादक—अगर जानते हो तो ठीक है । तुम्हारे आने तक मैं अपना एडीटोरियल लिख लूँगा और अगर वह कातिब मिल गया तो अब भी, मेरा मतलब है इतनी देर हो जाने पर भी मैं किसी तरह पहली तक पर्चा निकाल दूँगा । चाहे मेरे पूरे खानदान को किताबत करनी पड़े । अब जाओ ।

( 'जी' कह कर रहमान चला जाता है । सम्पादक लिखने लगता है और साथ-साथ धीरे-धीरे बोलता भी जाता है )

चीन के 'वज़ीरे-आज़म' चाओ-एन लाई और 'हिन्दो-स्तान' के वज़ीरे-आज़म पण्डित नेहरू का यह बयान कोई...

( रहमान प्रवेश करता है )

सम्पादक—( कड़क कर ) फिर वही ! मैंने तुम से कहा था रहमान कि.....

रहमान—जी, वह कातिब...

सम्पादक—कातिब ! कौन कातिब ?

रहमान—जी, वही कातिब.....

सम्पादक—वही कातिब ! ( दबी ज़बान में ) क्या वह कातिब मिल गया ?

रहमान—जी हाँ ! वह खुद ही आ गया है । बाहर बैठा है ।

सम्पादक—बाहर बैठा है ! बाहर क्यों बैठा है ? उसे अन्दर भेजो । फौरन अन्दर भेजो ।

रहमान—जी ।

( रहमान जाता है और कातिब आता है )

कातिब—अस्लामालैकुम ।

सम्पादक—( सिर से सलाम का उत्तर देकर ) आइये ( कुर्सी की ओर संकेत करके ) बैठिये !

**कातिब**—( कुर्सी पर बैठते हुए ) शुक्रिया ! आप कुछ मसरूफ़ हैं शायद !

**सम्पादक**—जी नहीं, मैं बिल्कुल मसरूफ़ नहीं हूँ, आप फ़र्माइये, आपको आने की फ़रसत मिल गई ?

**कातिब**—जी मैं आप ही का काम कर रहा था । आम कातिबों की तरह मेरी यह आदत नहीं कि दस जगह काम करता फिरूँ । एक काम लेता हूँ और जम कर करता हूँ । किसी की परेशानी मुझ से देखी नहीं जाती ।

**सम्पादक**—परेशानी नहीं देखी जाती । तो आपका खयाल है कि हम लोग खुशी से नाच-गा रहे हैं आपने तो कबला ! हमारी लुटिया ही डुबोदी हमारी बरसों की साख मिट्टी में मिला दी । हमें कहीं का न रखा और इस पर आप फ़र्माते हैं कि आप से किसी की परेशानी नहीं देखी जाती । क्या इससे पहले आपने किसी हफ़तावार पर्व में काम किया है ?

**कातिब**—जी, उम्र गुजारी है इसी दस्त की...

**सम्पादक**—बस, बस ! शायरी रहने दीजिये ! मैंने आप से कहा था कि आप हर रोज़ मुझे अपनी कारगुजारी...

**कातिब**—दरअसल मैं बहुत दूर रहता हूँ साहिब ! और फिर आप ने फ़र्माया था कि अभी मज़ामीन भी तैयार नहीं हैं ।

**सम्पादक**—मज़ामीन ! मज़ामीन तैयार होते कौन-सी देर लगती है ( कैंची उठा कर ) यह कैंची सलामत रहनी चाहिये । आप तो बहुत से पर्वों में काम कर चुके हैं ।

**कातिब**—जी हाँ । इसीलिए तो मैंने समझा कि आप मज़ामीन के लिए दौड़-धूप कर रहे होंगे ।

**सम्पादक**—दौड़-धूप ।

कातिब—जी हाँ। मैंने जिस किसी पर्चे में काम किया, उसके एडिटर को मजामीन के लिए परेशान देखा। ये अदीब लोग बड़े वाहियात होते हैं साहिब ! ज़रासी तारीफ़ कर दीजिये, ऐसे-ऐसे नखरे बघारेंगे कि खुदा की पनाह।

सम्पादक—खैर, अब तबसरानिगारी छोड़िये और यह बताइये कि आप दो दिन तक दिन-रात यहाँ बैठ कर काम कर सकते हैं। मेरा मतलब है इस दफ़्तर में, मेरे मारने...

कातिब—इसकी क्या ज़रूरत है ?

सम्पादक—तो आपके ख्याल में इसकी कोई ज़रूरत ही नहीं। क्या आपको मालूम नहीं कि आप पर भरोसा करके, बल्कि सच पूछिये तो आपके भाँसे में आकर मैंने किसी दूसरे कातिब को काम नहीं दिया।

कातिब—ठीक ही तो किया आपने ! जब मैंने आप से वायदा किया था कि अब मैं आपका पूरा पर्चा खुद लिख दिया करूँगा तो...

सम्पादक—पूरा पर्चा ! जी हाँ बन्दापरवर ! मैं इसी खुशफ़हमी में रहा कि आप पूरा पर्चा लिख देंगे और मैंने किसी दूसरे कातिब को...

कातिब—मैं फिर अर्ज करता हूँ जनाब कि इसकी क्या ज़रूरत...

सम्पादक—ज़रूरत ! देखिये मुझे गुस्सा मत दिलाइये। मैं साफ़ बात करने का आदी हूँ। इस तरह के चोंचले मुझे नहीं आते...

कातिब—चोंचलों की क्या ज़रूरत है जनाब !

सम्पादक—फिर वही ज़रूरत ! मैं कहता हूँ कि आपको काम नहीं करना था तो पहले क्यों न बताया। हमारा बेड़ा गर्क करके आपको कौन सी रूहानी मुसर्त मिल गई ? मैंने आप से कहा नहीं था कि पर्चा तीस तो आउट होगा।

कातिब—जी, कहा था।

सम्पादक—आज क्या तारीख़ है ?

**कातिब**—जी अट्ठाईस ।

**सम्पादक**—आज अट्ठाईस तारीख है और पर्चा तीस को आउट होगा और पर्चा मोलह सफ़े का है और आपने बड़ा कमाल किया होगा तो दो सफ़े लिखे होंगे । और सच पूछिये तो मुझे इसका भी यक़ीन नहीं ।

**कातिब** | जी, लिखे हैं ।

**सम्पादक**—लिख भी लिये हों, जब भी जहाज़ी साईज़ के बाक़ी चौदह सफ़े आप लिखेंगे या मेरा बाप ?

**कातिब**—जी मैं लिखूँगा । बल्कि मैंने तो लिख भी लिए ।

**सम्पादक**—( आश्चर्य से ) लिख भी लिए ! क्या मतलब !

**कातिब**—मतलब बिल्कुल साफ़ है कि मैंने बकिया चौदह सफ़े भी लिख लिए हैं । यह देखिये ( पीले कागज़ों का पुलंदा बढ़ाता है )

**सम्पादक**—( पुलंदा लेकर और भी आश्चर्य से ) यह क्या है ?

**कातिब**—यह आपका पूरा पर्चा है । बिल्कुल तैयार किताबत शुदा, गलतियाँ भी बन चुकी हैं । चाहें तो नज़र डाले बग़ैर प्रेस भेज सकते हैं ।

**सम्पादक**—( परेशानी से ) नज़रे डाले बग़ैर प्रेस भेज सकते हैं । पूरा पर्चा तैयार है ! यह क्या कह रहे हैं आप ?

**कातिब**—जी अर्ज़ किया ना कि पूरा पर्चा तैयार है । मैं घर में बेकार नहीं बैठा रहा । मुझे अपनी ज़िम्मेदारी का पूरा-पूरा अहसास...

**सम्पादक**—ज़िम्मेदारी ! लेकिन मैंने तो आपको सिर्फ़ दो सफ़े का मंटर दिया था और आप कहते हैं कि पूरा पर्चा...

**कातिब**—जी हाँ, पूरा पर्चा ! आपने फ़र्माया था कि बाक़ी मज़ामीन अभी तैयार नहीं और मज़ामीन की वजह से आप परेशान थे ।

**सम्पादक**—मज़ामीन की वजह से मैं परेशान था !

कातिब—और मैं आप से अर्ज कर चुका हूँ कि मुझसे किसी की परेशानी नहीं देखी जाती ।

सम्पादक—लेकिन मैंने तो आपको सिर्फ दो सफ़े का मैटर...

कातिब—जी हाँ, दो सफ़हे का मैटर आपने दिया था । बाकी चौदह सफ़हों में मैंने अपनी एक कहानी, सेहत की हिफ़ाज़त के असूलों पर एक मज़मून, अपने छोटे भाई की कुछ नज़में-गज़लें और चुने हुए शेर, किवला वालिद साहब मरहूम की बर्सी पर की गई कव्वाली का पूरा हाल...

सम्पादक—क्या...क्या... ( उठ खड़ा होता है )

कातिब—सुसर साहब का मछली के शिकार पर एक शानदार मक़ाला । नानी अम्मा के हालाते-ज़िन्दगी का एक बाब...

सम्पादक—क्या...क्या...क्या...

कातिब—इस तरह सिर्फ़ आधे कालम की जगह बच गई थी । उस के लिए पहले तो मैंने सोचा कि चल कर आप से कुछ लेखूँ, फिर इस ख़्याल से कि देर हो जायेगी, मैंने अपने पुस्त हा पुस्त से चले आ रहे नूरानी सुर्मों के एक तीर बहदिक़ नुस्खे का इश्तिहार शामिल कर दिया ! और अब पर्चा बिल्कुल तैयार है और आप चाहें तो प्रैस...लेकिन यह आप एक दम इतने परेशान क्यों हो गये हैं ! देखिये मुझसे किसी की परेशानी...

सम्पादक—( मरे हुए स्वर में ) रहमान...अरे ओ...रहमान किशोरीलाल जी ! अजी ओ किशोरीलाल जी...

( मूर्छित होकर गिर पड़ता है )

[ पर्दा धीरे-धीरे गिरता है ]

















